।। श्री ।।

विद्याभवन राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला

३२





।। श्री ।।

प्राकृत-व्याकरण

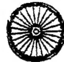
लेखक –

आचार्य श्री मधुसूदनप्रसाद मिश्र

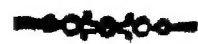
अध्यक्ष, अनुसंधान विभाग, अरेराज

तथा

सदस्य, बिहार रिसच सोसाइटी, पटना।



चौखम्बा विद्याभवन, चौक, वाराणसी

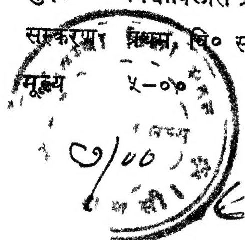


प्रकाशक चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी

मुद्रक विद्याविलास प्रेस, वाराणसी

संस्करण प्रथम, वि० सवत् २०१७

मूल्य ५-००



The Chowkhamba Vidya Bhawan,

Chowk, Varanasi

(INDIA)

1960

Phone Branch 3076 / H Office 3145

भूमिका

(श्री भुवनारायण त्रिपाठी शास्त्री
सभापति, जिला काग्रेस समिति, मोतिहारी
तथा श्री सोमेश्वरनाथसञ्चालक मण्डल, अरेराज)

सस्कृत भाषा की अपेक्षा प्राकृत भाषा अधिक कोमल तथा मधुर होती है। 'परुसा सक्कअ बधा पाउअ बधो वि होइ सुउमारो । पुरिसमहिलाण जेत्तिअ मिहन्तर तेत्तिअमिमाण' अथात् सस्कृत भाषा परुष (कठोर) तथा प्राकृत भाषा सुकुमार होती है। और इन दोनों भाषाओं मे परस्पर उतना ही भेद है जितना एक पुरुष और स्त्री मे ।

भाषा के अनुसार आज तक के समय को तीन भागों में विभक्त कर सकते है—सस्कृत, प्राकृत और आजकल की भाषाये, यथा—हिन्दी, मराठी, गुजराती और बॅगला आदि। सस्कृत भाषा में हिन्दुओं के प्राचीनतम ग्रन्थ वेदों से लेकर काव्यों तक के ग्रन्थ सम्मिलित हैं। प्राकृत भाषा मे बौद्धों तथा जैनियों के धामिक ग्रन्थ एव कुछ काव्य ग्रन्थ भी है । इस भाषा का विकास ईसा से ६०० वर्ष पहले हो चुका था ।

प्राकृत भाषा की उत्पत्ति के निर्णय के पूर्व यह विचारना आवश्यक है कि 'किसी भी नई भाषा के जन्म की क्यों आवश्यकता पडती है ?' यदि हम लोग इस प्रश्न पर गौर से विचार करे तो यह स्पष्ट मालूम हो जायगा कि मनुष्य कष्टसाध्य प्रयत्न करना नही चाहता। वह जिह्वा, कण्ठ, तालु आदि स्थानों से अधिक प्रयत्न द्वारा शब्दों का उच्चारण करना पसद नही करता। यही कारण है कि धीरे-धीरे भाषा मे कुछ विकृतियाँ उत्पन्न होती जाती है। कुछ दिनों के बाद उसी का एक स्वरूप बन जाता है, वही प्रधान बोलचाल की भाषा बन बैठती हैं और उसी मे काव्य आदि की रचना प्रारम्भ हो जाती है। वैदिक

काल से लेकर आज तक की परिवर्तित भाषाओं पर ध्यान देने से इस बात की पूर्ण पुष्टि हो जाती है। नीचे कुछ दृष्टान्त दिये जाते है—

सस्कृत के 'ग्राम तथा 'मध्य' दो शब्दों के मिलने से 'ग्राममध्य' एक शब्द बना। अब इसी शब्द का उच्चारण करते समय एक अशिक्षित आदमी, जिसे उच्चारण का ज्ञान नही है और जो स्वभाव से ही कष्टसाध्य उच्चारण करना नही चाहता, जीभ को कष्ट से बचाने के लिए एक विलक्षण ही शब्द स्वरूप का जनक हो जायगा। वह उक्त शब्द के मध्य के स्थान मे 'मज्झ', 'माझ', 'माध', 'माह', 'मह', 'मा' और 'मे' तथा ग्राम शब्द के स्थान मे 'गाम' और 'गाव' कहेगा। इस प्रकार ग्राममध्य के स्थान मे 'गाम मे' और 'गाव मे' बन गया। इसी प्रकार 'कुम्भकार' के स्थान मे 'कुम्भार', 'कुहार' और 'कोंहार' शब्द बन गये। इनके अतिरिक्त मुख = मुह, अर्प=अप्प (हि०—आप), यष्टि = लट्ठी, लाठी, द्वादश = बारह आदि अनेक शब्द है। कभी कभी तो शब्दों का परिवर्तन इतना हो जाता है कि उनका पता लगाने मे बडे बडे शब्दशास्त्रियों को भी चक्कर खाना पडता है। जैसे अंग्रेजों के समय मे राजकीय कोषागार के प्रहरी 'हू कम्स देअर' (Who comes there) के स्थान मे 'हुकुम दर' कहते थे। तात्पर्य यह कि किसी किसी शब्द के शुद्ध रूप का पता लगाना असम्भव सा हो जाता है। अस्तु।

प्राकृत भाषा की उत्पत्ति के विषय में भारतीय वैयाकरणों तथा आलङ्कारिकों का कथन है कि इस भाषा की उत्पत्ति सस्कृत से हुई है। सस्कृत ही इसकी जननी है। प्राकृत शब्द की व्युत्पत्ति 'प्रकृति' से की जाती है। प्रकृति शब्द का अर्थ बीज अथवा मूल तत्त्व है। इस शब्द का निर्वचन है—'प्रक्रियते यया सा प्रकृति' अर्थात् जिससे दूसरे पदार्थों की उत्पत्ति हो। 'मूलप्रकृतिरविकृति' (साङ्ख्य) अर्थात् मूल प्रकृति अविकृत रहती है। साराश यह हुआ कि 'प्रकृति' उसे कहते है जो दूसरे पदार्थों का उत्पादक तथा स्वय अविकृत हो। यहाँ

आचार्यों के मत में सस्कृत हो प्रकृति है। प्राकृत के प्रसिद्ध वैयाकरण हेमचन्द्र अपने प्राकृत व्याकरण के आठवें अध्याय के प्रथम सूत्र में कहते है कि—'प्रकृति सस्कृतम्। तत्र भव तत आगत वा प्राकृतम्।' अर्थात् मूल सस्कृत है और सस्कृत मे जिसका उद्भव है अथवा जिसका प्रादुभाव सस्कृत से हुआ है उसे 'प्राकृत' कहते है। वररुचि ने प्राकृत का व्याकरण लिखते हुए प्राकृत प्रकाश मे लिखा है कि 'शेष सस्कृतात्' (वर० ९।१८) अर्थात् बताये हुए नियमों के अतिरिक्त शेष सस्कृत से आये हुए है। इसी प्रकार मार्कण्डेय 'प्राकृतसर्वस्व' के प्रथम पाद के प्रथम सूत्र मे लिखते है—'प्रकृति सस्कृत, तत्र भव प्राकृतमुच्यते।' अर्थात् सस्कृत मूल भाषा है और उससे जन्म लेनेवाली भाषा को प्राकृत कहते है। दशरूपक के टीकाकार धनिक परिच्छेद २, श्लोक ६० की व्याख्या करते हुए लिखते है—'प्रकृते आगत प्राकृतम्। प्रकृति सस्कृतम्।' यही मत 'कर्पूरमञ्जरी' के टीकाकार वासुदेव, 'प्राकृतप्रकाश' के रचयिता चण्ड और 'षड्भाषाचन्द्रिका' के लेखक लक्ष्मीधर को भी अभिमत है। 'प्रकृते सस्कृतायास्तु विकृति प्राकृती मता।' (लक्ष्मीधर पृ० ४, श्लोक २५) अर्थात् मूल भाषा सस्कृत से प्राकृत की उत्पत्ति हुई है। इस प्रकार सब भारतीय विद्वानों ने भिन्न भिन्न शब्दों मे इन्ही मतों की पुष्टि की है। आधुनिक विद्वानों मे डा० रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर तथा चिन्तामणि विनायक वैद्य जी को भी यह मत अभिप्रेत है।

परन्तु इसके विपरीत पश्चिमी विद्वान् पिशल आदि का विचार भी विचारणीय है। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् पिशल का, जिन्होंने प्राकृत के क्षेत्र में बडे ही परिश्रम और पाण्डित्य से काम करके हम लोगों का बडा ही उपकार किया है, कथन है कि—सस्कृत शिष्ट समाज की भाषा थी और प्राकृत अशिक्षित जनों की। प्राकृत भाषा वह थी जिसे साधारण जन बोला करते थे और उसी का सस्कार से सम्पन्न रूप 'सस्कृत' कहलाया। जैसे किसी लकडी का एक टुकडा पहले अपनी प्राकृतिक अवस्था

मे पडा हुआ रहता है, किन्तु जब उसे सस्कारो द्वारा काट, छाँट एव खराद कर मेज, कुर्सी आदि बनाते है तो वही अपना सस्कृत रूप धारण कर लेता है। इसी प्रकार जो अपरिष्कृत भाषा अपनी प्राकृतिक अवस्था मे पडी हुई जन साधारण द्वारा उच्चरित होती थी, वही प्राकृत थी और उसी की शुद्ध एव परि कृत आकृति सस्कृत भाषा कही जाने लगी। इसके प्रमाण मे इनका कहना है कि यदि प्राकृत सस्कृत से निकली हुई होती तो उसके कुल शब्द सस्कृत से सिद्ध हो जाते, किन्तु अनुसन्धान द्वारा विदित होता है कि सिद्ध होते नही है। इसलिए प्राकृत की उत्पत्ति केवल सस्कृत से मानना युक्तिसङ्गत नही। पिशल के इसी मत का समर्थन सभी पश्चिमी विद्वान् करते है।

पाली भी प्राकृत के अन्दर ही मानी जाती है। इसे 'प्राचीन प्राकृत' कहते है। भगवान् बुद्ध ने इसी भाषा मे अपने धर्म का प्रचार किया था। आजकल बौद्धों के धामिक ग्रन्थ तथा अनेक शिला लेख आदि भी इसी भाषा मे पाये जाते है। पाली और प्राकृत मे कुछ अन्तर पड गया है, इसलिए अब पाली को अन्य भाषा मानते है और प्राकृत कहने से पाली को अलग समझते है। प्राकृत के वैयाकरणों तथा अलङ्कार शास्त्रज्ञों ने पाली को पृथक् मान कर प्राकृत व्याकरण आदि लिखते समय इसका कुछ भी उल्लेख नही किया है।

प्राकृत के भेदों मे 'महाराष्ट्री' उत्तम तथा प्रधान प्राकृत के रूप मे समझी जाती है। दण्डी ने 'काव्यादर्श' के प्रथम परिच्छेद के चौतीसवे श्लोक मे लिखा है—'महाराष्ट्राश्रया भाषा प्रकृष्ट प्राकृत विदु ।' अर्थात् महाराष्ट्री भाषा श्रेष्ठ प्राकृत समझी जाती है। कतिपय भारतीय विद्वानों ने प्राकृत शब्द का प्रयोग केवल महाराष्ट्री ही के लिए किया है। जैसे हेमचन्द्र ने अपने प्राकृत के व्याकरण मे महाराष्ट्री के लिए प्राकृत शब्द का प्रयोग किया है। 'शेष प्राकृतवत्' (हेम० ४ २८६)। प्राकृत के व्याकरण ग्रन्थों मे महाराष्ट्री को ही प्रधानता दी गई है। वररुचि ने नव परिच्छेदों

मे चार सौ चौबीस सूत्रों द्वारा महाराष्ट्री का विचार किया है। अन्य तीन प्राकृतों का विचार एक एक परिच्छेद मे क्रम से १४, १७ और ३२ सूत्रों द्वारा किया है। इसी प्रकार सब वैयाकरणों ने पहले महाराष्ट्री का उल्लेख किया है। महाराष्ट्री मे प्रवरसेन विरचित सेतुबन्ध नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इस पुस्तक के सबन्ध मे बाण ने हर्षचरित मे लिखा है—

'कीर्ति प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला।
सागरस्य पर पार कपिसेनेव सेतुना॥'

अथात् कुमुद के समान उज्ज्वल प्रवरसेन का यश सेतुबन्ध के द्वारा समुद्र के पार तक विख्यात हो गया जैसे वानरों की सेना सेतु (पुल) के द्वारा समुद्र पार कर विख्यात हो गई थी। सेतुबन्ध सस्कृत नाम है। प्राकृत मे इसे रावणवहो या दहमुहवहो कहते है। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्री मे हाल की सतसई तथा वज्जालता और गउडवहो आदि काव्य ग्रन्थ प्रसिद्ध है।

प्राकृत के कितने भेद और उपभेद है, इस सबन्ध मे भी एक मत नही है। वररुचि के अनुसार प्राकृत के चार भेद है। महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी और पैशाची। इन्ही चारों का उल्लेख प्राकृत प्रकाश मे हुआ है। हेमचन्द्र ने इन चारों के अतिरिक्त आर्ष, चूलिकापैशाची और अपभ्रश को भी प्राकृत ही के अन्तर्गत माना है। अर्थात् महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, आर्ष, चूलिकापैशाची और अपभ्रश ये सात भेद उन्हे अभिप्रेत है। त्रिविक्रम हेमचन्द्र की तरह उपर्युक्त भेदों मे से आर्ष के अतिरिक्त छ को मानते और उन्ही का उल्लेख करते है। इन वैयाकरणों के अतिरिक्त मार्कण्डेय, जो वररुचि के अनुयायी है, प्राकृत के प्रधानत चार विभाग करते है—भाषा, विभाषा, अपभ्रश और पैशाच। अब इनके उपभेदो के साथ प्राकृत को सोलह भागों में विभक्त करते है। वे सोलह भेद इस प्रकार हैं—भाषा के पॉच भेद—महाराष्ट्री, शौरसेनी, प्राच्या, आवन्ती और मागधी (मार्क० १-५), विभाषा के पाँच भेद—शाकारी, चाण्डाली, शाबरी, आभीरिका और टक्की, अपभ्रश

के तीन भेद—नागर, ब्राचड और उपनागर, पैशाच के तीन भेद—कैकेय, शौरसेन और पाञ्चाल। इस तरह प्राकृत के सोलह भेद हुए।

मार्कण्डेय (१ ४) की वृत्ति लिखते हुए किसी ने भाषा के आठ, विभाषा के छ, अपभ्रंश के सत्ताईस और पैशाच के ग्यारह भेद माने है। इनके मत से प्राकृत के बावन भेद हुए। परन्तु मार्कण्डेय स्वय इतने भेदों को नही मानते। वे अर्द्धमागधी को मागधी के तथा बाह्लीकी को आवन्ती के अन्तर्गत मानते है। दाक्षिणात्य का कोई लक्षण नहीं मिलने से उसे भाषा के भीतर नही मानते। इस प्रकार उक्त वृत्तिकार द्वारा बतलाये आठ प्रकारों वाली भाषा का खण्डन कर छ प्रकार की विभाषा मे औढ़्री को शाबरी मे अन्तर्भावित मानते तथा द्राविडी की जगह ढक्की भाषा का प्रतिपादन करते है क्योंकि द्राविडी ढक्क देश की भाषा के भीतर आ जाती है।

'ढक्कदेशीयभाषाया दृश्यते द्राविडी तथा।
अत्रैवाय विशेषोऽस्ति द्रविडेनादृता परम् ॥' (मार्क० १ ६)

एव प्रकारेण मार्कण्डेय ने सत्ताइस प्रकार के अपभ्रंश तथा ग्यारह प्रकार के पैशाच का एक का दूसरे मे अन्तर्भाव मानकर क्रम से तीन तीन भेद माने है। इस तरह बावन प्रकार के बदले उसके केवल सोलह ही भेद स्थिर किये है। दण्डी ने 'काव्यादर्श' मे चार प्रकार की भाषा बतलाई है—सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और मिश्र।

'तदेतद् वाङ्मय भूय सस्कृत प्राकृत तथा।
अपभ्रंशश्च मिश्रश्चेत्याहुरार्याश्चतुर्विधम् ॥' (काव्या० १ ३६)

इनके अनुसार सस्कृत से देवताओं की भाषा, प्राकृत से तद्भव, तत्सम और देशी भाषा, अपभ्रंश से आभीर आदि जातिविशेष की भाषा और मिश्र से मिली हुई भाषाओं का बोध होता है। शास्त्र मे सस्कृत से इतर सब भाषाये अपभ्रंश कहलाती है। इनके अनुसार प्राकृत के महाराष्ट्री, शौरसेनी, गौडी, लाटी और भूतभाषा (पैशाची) ये पॉच भेद है। प्राकृत के ये और भी अन्य भेद मानते है। दूसरे कई आचार्यों

ने प्राकृत के अन्य भी कई भेद बतलाये है, परन्तु सब ने महाराष्ट्री, शौरसेनी और मागधी को बिना किसी दलील के स्वीकार किया है। वास्तव मे ये ही तीनों प्रधान है और काव्य नाटकों मे इन्ही तीनों का समावेश है। अत ये ही तीन प्रधान प्राकृत है।

सस्कृत साहित्य मे ऐसा कोई भी नाटक नही है जो केवल सस्कृत ही मे हो और उसमे प्राकृत न हो। नाटकों मे कुलीन, श्रेष्ठ तथा शिक्षित पुरुष सस्कृत भाषा का व्यवहार करते है तथा कुलीन और शिक्षिता स्त्री शौरसेनी मे गद्य तथा महाराष्ट्री मे पद्य का व्यवहार करती है। मतलब यह कि साधारण बात चीत तो शौरसेनी मे और कुछ गान आदि महाराष्ट्री मे करती है। शौरसेनी गद्य की तथा महाराष्ट्री पद्य की भाषा है। किसी भी नाटक अथवा प्राकृत के का यग्रन्थ मे गद्य महाराष्ट्री मे और पद्य शौरसेनी मे दृष्टिगोचर नही होते। नाटकों मे निम्न लोगों की तथा नीच वर्णो की बोली मागधी भाषा मे पाई जाती है। नाटकों मे प्रयुक्त प्राकृत के महाराष्ट्री, शौरसेनी और मागधी ये तीन प्रकार ही प्रधान है और उन्ही का व्यवहार अधिकता से पाया जाता है। इनके अतिरिक्त और भी आवन्ती, ढक्क, शाबरी, प्राच्या और चाण्डाली भाषाये देखने मे आती है, परन्तु कई आचार्यो के मत से आवन्ती और प्राच्या शौरसेनी के तथा ढक्क, शाबरी और चाण्डाली मागधी के अन्तर्गत है। केवल विक्रमोर्वशीय मे कुछ पद्य अपभ्रश के भी आये है। इसके विषय मे कुछ लोगों का कहना है कि अपभ्रश के वे पद्य पीछे से जोडे गये है।

महाराष्ट्री भाषा का नाम महाराष्ट्र के नाम पर पडा। महाराष्ट्र की भाषा महाराष्ट्री कहलाई। इसमे अक्षरों का लोप बहुत होता है, इसलिए इसका व्यवहार पद्य के लिए उत्तम माना गया। इसमें अक्षरों का इतना लोप होता है कि भाषा की जटिलता बढ जाती है इसलिए इसका गद्य समझना बडा कठिन होता है। इस भाषा के विषय मे ऊपर लिखा जा चुका है।

शौरसेनी भाषा का नाटकों मे प्रयुक्त गद्यभाषाओं मे प्रथम स्थान है। शूरसेनों की भाषा का नाम शौरसेनी पड़ा। शूरसेनों की राजधानी मथुरा थी और मथुरा के आस पास बोली जाने वाली भाषा शौरसेनी कहलाती थी।

मागधी से वररुचि के अनुसार मगध देश की भाषा समझी जाती है। 'मागधाना भाषा मागधी' (वर० ११ १ वृत्ति)। पटने के समीपवर्ती स्थलों को मगध कहते थे। आज भी बिहार राज्य मे बोली जानेवाली भोजपुरी आदि भाषाओं का मागधी से बहुत कुछ सामीप्य है। मार्कण्डेय का कथन है कि राक्षस, भिक्षु, क्षपणक और चेटी आदि की भाषा का नाम मागधी है—'राक्षसभिक्षुक्षपणकचेटाद्या मागधी प्राहु' (मा० १२ १ वृ०)। भरत के अनुसार अन्त पुर में रहने वालो की भाषा मागधी है। इनके अनुसार नपुसक, स्नातक और कञ्चुकी अन्त पुर मे नियुक्त होते थे। दशरूपक के अनुसार पिशाच और अत्यन्त नीच लोग पैशाची और मागधी बोलते है—'पिशाचात्यन्तनीचादो पैशाच मागध तथा।'

अवन्ति देश की भाषा आवन्ती कहलाती है। अवन्ति देश मे चेदि, मालव, उज्जयिनी आदि देश सम्मिलित थे—'चेदिमालवोज्जयिन्यादिरवन्तीदेश' तद्भवा आवन्ती दाण्डिकादि भाषा' (मार्क० ११।१ की वृत्ति)। आवन्ती महाराष्ट्री और शौरसेनी के साकर्य से सिद्ध होती है। 'भरत' के अनुसार नाटकों मे यह सदा मध्यम पात्रों द्वारा प्रयुक्त होती है। मार्कण्डेय के अनुसार यह भाषा का एक भेद है।

प्राच्या मार्कण्डेय के अनुसार विदूषक और विट आदि हँसोड़ पात्रों की भाषा है। भरत नाट्यशास्त्र के अनुसार विदूषक आदि की भाषा प्राच्या है—'प्राच्या विदूषकादीनाम्।' पृथ्वीधर ने मृच्छकटिक की टीका मे इसी मत का समर्थन करते हुए लिखा है कि—'प्राच्यभाषापाठको विदूषक' अर्थात् विदूषक प्राच्य भाषा का पाठक होता है।

ढक्क भाषा पृथ्वीधर के अनुसार मृच्छकटिक मे माथुर और द्यूतकर की बोली है। ढक्क शब्द से जान पडता है कि यह ढाका के आस पास की भाषा थी।

चाण्डालों की भाषा चाण्डाली तथा शबरों की भाषा शाबरी कहलाती थी। अस्तु।

शूद्रक के मृच्छकटिक मे प्राकृत के नाना प्रकार देखने मे आते है। अन्य नाटकों मे महाराष्ट्री, शोरसेनी और मागधी ये तीन ही भाषाय पाई जाती है। किसी किसी नाटक मे एक पात्र चाण्डाल भी है जो चाण्डाली बोलता है। मृच्छकटिक मे अन्य प्राकृत के अतिरिक्त ढक्क और आवन्ती भी आती है। माथुर तथा द्यूतकर ढक्क और वीरक तथा चन्दनक आवन्ती भाषा बोलते है। विदूषक की भाषा किसी किसी के विचार से प्राच्या है। कर्णपूरक और वीरक के पद्य महाराष्ट्री मे है। नटी, मैत्रेय, वसन्तसेना, चेटी, रदनिका, मदनिका, कर्णपूरक आदि के गद्य की भाषा शौरसेनी है। शकार, चेट, चारुदत्त का लडका और भिक्षु की बोली, मागधी मे है।

प्राकृत भाषा मे कर्पूरमञ्जरी नामक एक ही सट्टक है। इसमे महाराष्ट्री और शौरसेनी दो ही भाषाये है। जितने पद्य है, वे सब महाराष्ट्री मे और जितने गद्य है सब शौरसेनी मे लिखे गये है। कहीं-कही इन दोनों की खिचडी भी दिखाइ पडती है। जैसे—'गेण्हिअ के' स्थान पर 'घेत्तूण' का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार अनेक स्थलो पर ऐसे उदाहरण मिलते है। मालूम नही, यह कवि का प्रमाद है या छापेखानों की भूल। कर्पूरमञ्जरी के अनेक सस्करण निकल चुके है पर तु प्राकृत भाषा की दृष्टि से 'हारवार्ड ओरिएण्टल सीरीज' द्वारा सपादित तथा चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी से प्रकाशित सस्करण सर्वोत्तम है।

सस्कृत नाटकों मे प्राकृत की दृष्टि से मृच्छकटिक के अतिरिक्त विक्रमोर्वशीय, अभिज्ञानशाकुन्तल, वेणीसहार, मुद्राराक्षस, उत्तरराम-चरित आदि प्रसिद्ध नाटक है।

नाटकों मे सूत्रधार का पाठ सबसे पहले आता है। सूत्रधार की भाषा सस्कृत है, परन्तु महाकवि भास प्रणीत 'चारुदत्त' मे यह शौरसेनी मे बोलता है। 'मृच्छकटिक' मे भी नटी के साथ बातचीत करते समय सूत्रधार ने शौरसेनी का ही व्यवहार किया है।

नटी की भाषा सब नाटकों मे शौरसेनी ही है। पर यह स्मरण रहे कि शौरसेनी गद्य की भाषा हे। इसलिए नटी को जहाँ गाने की आवश्यकता पडी है, वहाँ गान महाराष्ट्री भाषा मे है। यथा शाकुन्तल मे—'नटी गायति—

ईसीसि चुम्बिआइ भमरेहि सुउमारकेसरसिहाइ।
ओदसअन्ति दअमाणा पमदाओ सिरीसकुसुमाणि ॥'

पारिपार्श्वक की भाषा सस्कृत मे ही पाई जाती है। इसका पाठ विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र, वेणीसहार तथा माधवभट्ट रचित सुभद्राहरण आदि नाटकों मे आया है।

विदूषक की वोली सब नाटकों मे एक सी ही है। इसकी भाषा हेमचन्द्र और त्रिविक्रम के अनुसार शौरसेनी तथा मार्कण्डेय के अनुसार प्राच्या है। इसका पाठ मृच्छकटिक, अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र आदि नाटकों मे आया है। मालविकाग्निमित्र मे इसका पाठ प्रधान रूप से आया है और प्रत्येक अङ्क मे है।

सूत की बोली सस्कृत मे पाई जाती है। जहाँ जहाँ सूत का पाठ है, वहाँ वह सस्कृत ही बोलता पाया जाता है। अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, प्रतिमा, वेणीसहार तथा कसवध आदि नाटकों मे सूत का पाठ पाया जाता है।

राजा की भाषा अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, प्रतिमा, मुद्रा राक्षस, मालविकाग्निमित्र, वेणीसहार, कर्णसुन्दरी तथा कसवध आदि नाटकों में सस्कृत ही पाई जाती है। केवल विक्रमोर्वशीय के चौथे अङ्क में पुरूरवा नामक राजा ने उर्वशी के लिए विक्षिप्त हो कर हस, भौंरे तथा

चक्रवाक आदि न बातचीत करते हुए महारा ट्री और अपभ्रश का भी प्रयोग किया हे। चौथे अङ्क के ६, ११, १४, १९, २०, २४, २८, २९, ३५, ३६, ४१, ५३, ५४, ५९, ६३, ६८, ७१ और ७५ सख्यावाले श्लोकों को महाराष्ट्री तथा १२, ४३, ४५, ४८ और ५० सख्यावाले श्लोको को अपभ्रश भाषा मे कहते है। यथा—

राजा—'मम्मररणिअमणोहरए, कुसुमिअतरुवरपल्लविए।
दइआविरहुम्माइअओ, काणण भमइ गइदओ ॥'
[मर्मररणितमनोहरे कुसुमिततरुवरपल्लविते।
दयिताविरहोन्मादित कानने भ्रमति गजेन्द्र ॥]
(विक्र० ४।३५)

'हउ पइ पुछिछमि अरक्खहि गअवरु, ललिअपहारे णासिअतरुवरु।
दूरविणिज्जिअ ससहरुकन्ती, दिट्ठी पिअ पइ समुह-जन्ती ॥'
[अह त्वा पृच्छामि आचक्ष्व गजवर, ललितप्रहारेण नाशिततरुवर।
दूरविनिर्जित शशधर कान्तिर्दृष्टा प्रिया त्वया समुख यान्ती ॥]

पिछले पृष्ठ के वर्णित दोनों श्लोक क्रमश महाराष्ट्री और अपभ्रश भाषा के है।

कञ्चुकी की बोली सस्कृत भाषा मे पाई जाती है। इसका पाठ अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, उत्तररामचरित, प्रतिमा, मुद्राराक्षस, मालविकाग्निमित्र तथा वेणी सहार आदि नाटकों मे आया है।

प्रतीहारी, चेटी, तापसी आदि की बोली शौरसेनी मे है। ये पात्र प्राय सभी नाटकों मे आये हैं। दौवारिक की भाषा भी शौरसेनी ही पाई जाती है। परन्तु कसवध मे हेमाङ्गद नाम के एक दौवारिक ने एक स्थान पर एक श्लोक सस्कृत मे भी कहा है। सुभद्राहरण, अभिज्ञानशाकुन्तल आदि अनेक नाटकों मे दौवारिक का पाठ है।

अभिज्ञानशाकुन्तल मे रक्षियों (सिपाहियों), धीवर और शकुन्तला के पुत्र की, चारुदत्त म शकार की, मृच्छकटिक मे शकार, चेट, चारुदत्त के पुत्र, सवाहक और भिक्षु की, वेणीसहार में राक्षस

और राक्षसी की तथा कसवध मे कुब्जक और रजक की बोली मागधी भाषा मे है। मागधी गद्य और पद्य दोनों की ही भाषा है। यद्यपि उच्च कुल की एव शिक्षित नारियाँ गद्य पद्य मे क्रमश शौरसेनी, महाराष्ट्री का ही व्यवहार करती है, तो भी कई नाटको मे नारी का पाठ सस्कृत भाषा मे भी मिलता है। जैसे उत्तररामचरित में तापसी, आत्रेयी, वासन्ती, तमसा, मुरला, अरुन्धती, पृथिवी, भागीरथी और गङ्गा की, कर्णसुन्दरी मे सखी और नायिका के पद्य की, कसवध मे दूती विलासवती, देवकी और केवल कुछ स्थलों पर कुब्जा की बोली सस्कृत भाषा मे पाई जाती है। प्रतिमा मे भट एक स्थान पर शौरसेनी तथा दूसरे पर सस्कृत का प्रयोग करता है। किसी किसी नाटक मे ऐसा भी देखा जाता है कि जब कोइ पात्र किसी दूसरे का अनुकरण करता है, तो वह अपनी भाषा छोडकर अनुकार्य व्यक्ति की ही भाषा बोलता है। जैसे मुद्राराक्षस मे सस्कृत का बोलने वाला विराध आहितुण्डिक का अनुकरण करने पर शौरसेनी भी बोलता है। वेणी सहार मे मुनिवेषधारी राक्षस सस्कृत भाषा का भी व्यवहार करता है।

मृच्छकटिक मे स्थावरक और रोहसेन नामक चाण्डालों तथा मुद्राराक्षस मे आये चाण्डालो की बोली चाण्डाली कहलाती है। इन सब के अतिरिक्त जिन पात्रों की चर्चा नही की गई है, उनके साथ वे ही साधारण नियम लागू है।

साहित्यदर्पण मे श्रेष्ठ चेट और राजपुत्रों की भाषा अर्द्धमागधी बतलाई गई है। परन्तु किसी नाटककार ने किसी भी पात्र के लिए इस भाषा का व्यवहार नही किया है। चेट का पाठ मृच्छकटिक मे आया है, जो मागधी मे है। इसी प्रकार राजपुत्रों की भाषा भी अर्द्धमागधी में नहीं है—'चेटाना राजपुत्राणा श्रेष्ठानाञ्चार्द्धमागधी' (साहि० ६, १६०)।

साहित्यदर्पण में विश्वनाथ ने भाषा विभाग का वर्णन करते हुए लिखा है कि शिक्षित मध्यम तथा उच्च वर्ग के मनुष्यों की भाषा सस्कृत

तथा मध्यम और उत्तम वर्ग की स्त्रियों की भाषा शौरसेनी है। योद्धा और नागरिकों की भाषा दाक्षिणात्या है। परन्तु यह भाषा भी प्रयुक्त हुई दृष्टिगोचर नही होती। विश्वनाथ ने बालकों की बोली का विधान करते हुए लिखा है कि बालक कभी कभी संस्कृत भी बोलते है। परन्तु किसी भी नाटक मे कोई बालक संस्कृत बोलता नही पाया जाता। कवियों ने उपर्युक्त नियम का बिलकुल पालन नही किया है।

ऐश्वर्य से पागल, दरिद्र, भिक्षु एवं वल्कल धारण करने वाले पुरुषों की भाषा प्राकृत बतलाई गई है। पर उत्तम सन्यासियों के लिए संस्कृत का विधान है। कभी कभी वेश्या के लिए भी संस्कृत भाषा के व्यवहार का विधान है।

साहित्यदर्पण के अनुसार व्यापक नियम यह है कि जिस पात्र के देश की जो भाषा है, वह उसी को बोलता है और कार्यवश उत्तम आदि पात्र भाषा का परिवर्तन भी करते है—

'यद्देश्य नीचपात्रं तु तद्देश्य तस्य भाषितम्।
कार्यतश्चोत्तमादीना कार्यो भाषा विपर्यय ॥'

भाषा का परिवर्तन करना मुद्राराक्षस आदि नाटकों मे पाया जाता है।

स्त्री, सखी, बालवेश्या, धूर्त तथा अप्सराये अपनी चतुरता प्रदर्शित करने के लिए बीच मे संस्कृत बोल सकती है—

'योषित् सखी बालवेश्याकितवाप्सरसा तथा।
वैदग्ध्यार्थं प्रदातव्य संस्कृत चान्तराऽन्तरा ॥'

कर्णसुन्दरी में सखी और नायिका, कंसवध में दौवारिक और कुब्जा तथा सुभद्राहरण मे नटी भी विदग्धता दिखलाने के लिए संस्कृत भाषा बोलती है।

मालविकाग्निमित्र मे परिव्राजिका कार्यवश संस्कृत बोलती है।

वाह्लीक भाषा जो उत्तर देशवासियों के लिए और द्राविडी जो द्रविड देशवासियों के लिए कही गई है, उनका नाटकों मे कही भी अस्तित्व देखने मे नही आता—'वाह्लीकभाषोदीच्याना द्राविडी द्रविडादिषु' (साहि० ६, १६२)।

एक बात और उल्लेखनीय है। प्राय देखा जाता है कि एक ही घर मे पुरुष सस्कृत, स्त्री शौरसेनी और लडका मागधी बोलता है। इसका क्या कारण है ? लडके तो ऐसे होते नही कि बचपन मे ही कोई स्वतन्त्र भाषा सीख ले। जो भाषा उनकी माता तथा घरवाले बोलते है, वही भाषा वे सीखेगे और बोलेगे। माता की भाषा से भिन्न भाषा कभी भी उनसे उच्चारित नही हो सकती। फिर नाटकों मे ऐसी विचित्रता क्यों देखने मे आती है ? शकुन्तला मे दुष्यन्त आदि सस्कृत मे, शकुन्तला तथा उसकी सखियाँ शौरसेनी मे बोलती है। तब दुष्यन्त का लडका मागधी कैसे सीख गया ? इसी प्रकार मृच्छकटिक मे चारुदत्त का लडका भी मागधी बोलता है। इस प्रकार नाटकों के सहारे ठीक विचार नही किया जा सकता, क्योंकि बोली दूसरी होने पर भी विशेष स्थल के लिए अन्य बोली बोलनी पडती है। किन्तु यह भी देखने में आता है कि लडकों की बोली स्वभावत ही मागधी होती है। आजकल के लडके भी प्राय मागधी ही बोलते है। जैसे —'ए ताता ताल लोपेया द।' इसकी हिन्दी 'ऐ चाचा, चार रुपया दो' होगी। इस प्रकार सब लडके र के स्थान मे ल का प्रयोग करते है। अत इस सम्बन्ध मे उक्त सन्देह अनावश्यक है।

पहले प्राकृत की उत्पत्ति के विषय मे मैने अपनी सम्मति न देकर केवल भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के मत का ही उल्लेख किया है। अब अपनी सम्मति देना आवश्यक समझ अपना निर्णय दे रहा हूँ।

मेरे विचार से प्राकृत की उत्पत्ति सस्कृत ही से जान पडती है क्योंकि भाषा विज्ञान की ओर दृष्टि डालने से मालूम होता है कि मनुष्य कष्टसाध्य प्रयत्न न कर सुखोच्चार्य शब्द की ओर ही ढुलक जाता है। अत जो अशिक्षित जन सस्कृत बोलने की चेष्टा तो करते थे, किन्तु बोल नही पाते थे उन्ही के उच्चारण दोष से बिगड बिगड कर एक अन्य भाषा बन गई। साराश यह कि सस्कृत ही का अशुद्ध स्वरूप प्राकृत है। इसके विरोध मे कुछ लोगों का यह कहना

कि प्राकृत के सब शब्द सस्कृत से ही सिद्ध नही होते इसलिये उसकी जननी सस्कृत नही है। यह कहना ठीक प्रतीत नही होता क्योकि आज भी कुछ शब्द ऐसे देखने मे आते है जिनका मूल मालूम है, पर उनम इतना परिवर्तन हो गया है कि उनके मूल शब्द का अनुमान भी नही होता। जैसे—'हू कम्स देअर' के स्थान मे 'हुकुमदर' या 'हुकुम सदर', 'सिगनल' के स्थान मे 'सिकन्दर', 'कृष्णाष्टमी' के स्थान मे 'किसुन ऑठी' (यह बोली नेपाल की तराई के पास सुनने मे आती है) 'इजलास' के स्थान मे 'गिलाम्' और 'सेवासमिति' के स्थान म 'सेवा सपाठी' कहते हुए लोग देखने मे आते है। इन उदाहरणो से यह अनुमान किया जाता है कि सस्कृत ही प्राकृत की जननी है। कुछ शब्द जो सिद्ध नही होते इसका कारण यह है कि उनमे बहुत परिवर्तन हो गया है। जब प्राकृत के प्राय सभी शब्दों के मूल का पता सस्कृत से लग जाता है तब थोडे शब्दो के न मिलने के कारण प्राकृत को स्वतन्त्र मानना ठीक नही है।

विक्रमोर्वशीय म अपभ्रश के जो पद्य आये हैं, उनके विषय मे कुछ लोगों का कथन है कि वास्तव मे ये पद्य पहले के नही है, बाद मे जोडे गये है। इसके प्रमाण मे वे कहते है कि राजा उत्तम पात्रों मे गिना जाता है। उत्तम पात्रों की बोली सस्कृत है। इसके अतिरिक्त एक ही पद्य की कई बार आवृत्ति की गई है, जिससे ज्ञात होता है कि ये पीछे से जोडे गये है। परन्तु यह बात नही है। यद्यपि राजा उत्तम पात्रों मे है और इसकी बोली सस्कृत है तो भी कार्यवश वह अन्य भाषाओं को भी बोल सकता है। आज भी हम सभ्य समाज मे यदि शिष्ट भाषा का प्रयोग करते है तो आवश्यकता पडने पर साधारण जनों से ग्राम्य बोलियों मे भी बात करना नही छोडते। पुरूरवा ने अपनी प्रिया के लिए आकुल होकर हाथी, भौंरे, चक्रवाक आदि से कहा था। उन्होंने समझा होगा कि विना महाराष्ट्री तथा अपभ्रश मे बोले वे लोग समझेंगे नही, और नही समझने के कारण कदाचित्

उत्तर नही दे सकेंगे। इसलिये लाचारीवश ही उन्होंने प्राकृत का आश्रय लिया होगा, इसमे सदेह नही। एक ही बात की आवृत्ति भी साधारण बात है। जब किसी को उत्तर नही मिलता तो वह पुन पुन उसी प्रश्न को दुहराता ही है। इसलिए मेरे विचार से ये पद्य पीछे के नही है।

प्राकृत के वैयाकरणों के दो वर्ग है—एक त्रिविक्रम का और दूसरा मार्कण्डेय का। त्रिविक्रम के अनुयायी हेमचन्द्र, लक्ष्मीधर और सिंहराज है। लक्ष्मीधर ने त्रिविक्रम के सूत्रों पर अपनी वृत्ति लिखी है जैसे पाणिनि के सूत्रों पर वामन, माधव आदि कितने ही वृत्तिकारों की वृत्तियाँ रची गई है। लक्ष्मीधर के ग्रन्थ का नाम षड्भाषा चन्द्रिका है। मार्कण्डेय के अनुयायी वररुचि है। पहले लिखा जा चुका है कि किस ग्रन्थ मे किन किन प्रकार की प्राकृतो का वर्णन मिलता है।

सब वैयाकरणों ने महाराष्ट्री को प्रधान मान कर सर्वप्रथम उसी का निरूपण किया है अत यहाँ भी प्रस्तुत प्राकृत व्याकरण के विद्वान् लेखक ने पहले महाराष्ट्री के ही लक्षण दिये है। उसके बाद शौरसेनी, मागधी, पैशाची और अपभ्रंश के भी विशेष विशेष नियम बतला दिये गये है, जिनसे शब्दों के निर्वचन के विषय मे जानकारी प्राप्त कर लेना अतिशय सरल हो गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ मेरी ही प्रेरणा से श्रीसोमेश्वरनाथ सचालक मण्डल, अरेराज (चम्पारन) के अनुसन्धान विभाग की ओर से पूर्ण परिश्रम एव खोज के साथ निर्मित हुआ है। इसके लेखक ने इस ग्रन्थ को अरेराज जैसे साधनहीन स्थान मे, जहाँ न कोई अच्छा पुस्तकालय ही है और न सुयोग्य परामर्शदाता ही, अकेले जुटकर इस ग्रन्थ का इस रूप मे निर्माण किया है। एतदर्थ विद्वान् लेखक को इस सम्बन्ध मे जितनी भी बधाई दी जाय, थोडी होगी।

सभव है इस पुस्तक मे कुछ लोगो को अपूर्णता दिखलाई दे, किन्तु जितना भर लिखा जा चुका है, उतने से ही हिन्दी द्वारा प्राकृत पढ़ने वाले छात्रो का अतिशय उपकार होगा, इसमे तनिक भी सदेह नही।

मुझे अपने छात्र-जीवन मे हिन्दी मे एक प्राकृत व्याकरण की आवश्यकता प्रतीत हुई थी। आज उस इच्छा की पूर्ति से मुझे बड़ी प्रसन्नता है। इस ग्रन्थ के लिखने मे लेखक को उत्साहित करनेवालो मे मेरे अतिरिक्त तिरहुत प्रमण्डल के आयुक्त श्री श्रीधर वासुदेव सोहोनी तथा चम्पारन के कर्मठ साहित्यिक श्री गणेश चौबे रहे है। अत ये दोनों ही महानुभाव मेरे लिए धन्यवादार्ह है।

ग्रन्थो के न मिलने से जो कठिनाइयाँ आई, उन्हे बहुत कुछ बिहार रिसर्च सोसाइटी पटना, धर्मसमाज सस्कृत महाविद्यालय मुजफ्फरपुर एव सोमेश्वरनाथ सस्कृत महाविद्यालय अरेराज के पुस्तकालयों ने दूर किया है, अत इन सस्थाओं के अध्यक्ष भी धन्यवादार्ह है।

ध्रुवनारायण त्रिपाठी

विषय-प्रवेश



प्रसिद्ध वैयाकरण हेमचन्द्र के अनुसार 'प्रकृति' (=सस्कृत) प्राकृत शब्द की निष्पत्ति मानी गई है। 'प्रकृति सस्कृतम्। । भव तत आगत वा प्राकृतम्।' अर्थात् जिसकी उत्पत्ति स्कृत से हुई हो अथवा सस्कृत से निकलकर जो अलग निर्मित या हो वही प्राकृत* है।

कुछ भाषा शास्त्री 'प्रकृत्या (स्वभावेन) सिद्ध प्राकृतम्' इस त्पत्ति के अनुसार स्वभावसिद्ध को ही 'प्राकृत' मानते है।

---

* देखिए—हेम० ८ १ १ अथ प्राकृतम् और उसी सूत्र पर हर पाण्डुरङ्ग पण्डित का अंग्रेजी नोट—Hemachandra's stem of grammar consists of eight chapters, the st seven deal with Sanskrit grammar and the last apter with six dialects of Prakrit, viz, महाराष्ट्री, रसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका पैशाची and अपभ्रश The ord Prakrit is derived from प्रकृति which according the auther, means Sanskrit Hemachandra cla fies Prakrit words into तद्भव, तत्सम, and देशी He es not treat of तत्सम here as he has already done in the preceding chapters He does not speak देशी words here but discusses only तद्भव words of th types, सिद्ध and साध्यमान।

विवादग्रस्त* इन दोनो व्युत्पत्तियो को लेकर विद्वानों मे काफी मतभेद रहा है। किन्तु हम यहाँ हेमचन्द्रवाली व्युत्पत्ति को ही मानकर चलेगे।

अब आगे चलकर हम नियम, उदाहरण, विशेष तथा पादटिप्पणी के सम्मिलित क्रमो से प्राकृत शब्दो की निरुक्ति का प्रयास करेगे।

(१) लोक मे प्रचलित वर्णसमाम्नाय ही प्राकृत मे भी गृहीत है, किन्तु नीचे लिखे ऋ, ॠ, ऌ, ऐ, औ ये पॉच स्वर वर्ण और ङ, ञ, श, ष, न, य ये छ व्यञ्जन प्राकृत मे नही होते†। हॉ, अपने वर्गवाले अक्षरो से सयुक्त ङ और ञ का व्यवहार देखने को मिलता है। जैसे—पङ्को (पङ्क), सङ्खो (शङ्ख), सङ्का (शङ्का), कञ्चुओ (कञ्चुक), वञ्जन (व्यञ्जनम्)।

---

* इस सम्बन्ध मे श्रीहृषीकेश शास्त्री भट्टाचार्य के सस्कृत इङ्गलिस प्राकृत व्याकरण (१८८३ ई०) के प्रिफेस की नीचे उद्धृत पड्क्तियॉ प्रकाश डालती है—Modern philologist have not yet satisfactorily solved the question whether these dialects are derived directly from the Sanskrit or (through) some of its corruptions It is contended by some that Pali was the medium through which all the Prakrit dialects come into existence

† हेमचन्द्र के अनुसार ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ऐ औ ये छ स्वर और ङ, ञ, श, ष, विसर्जनीय और प्लुत प्राकृत के वर्ण समाम्नाय मे नहीं होते। किन्ही किन्ही शब्दो मे हेमचन्द्र के अनुसार ऐ और औ भी देखे जाते है। जैसे—कैअव (कैतवम्), सौअरिअ (सौन्दर्यम्) कौरवा (कौरवा)

(२) भिन्न वर्गवाले व्यञ्जन वर्णों का परस्पर सयोग नहीं होता अर्थात् त्+क, प्+क, क्+त, क्+य, क्+र, क्+ल, ल्+क और क्+व इनका परस्पर सयोग न होकर केवल 'क्क' रूप ही होता है। उसी तरह ड्+ग, ढ्+ग, ग्+न, ग्+य, ग्+र, र्+ग और ल्+ग का परस्पर सयोग न होकर केवल ग्ग रूप ही रहता है। जैसे—उक्कठा (उत्कण्ठा), अक्कवल (अप्क्रमलम्), णक्कचरो (नक्तञ्चर), जण्णवक्केण (याज्ञवल्क्येन), सक्को (शक्र), विक्कवो (विक्लव), उक्का (उल्का), पिक्क (पक्कम्), खग्गो (खड्ग), अग्गिणी (अग्नीन्), जोग्गो (योग्य), कअग्गहो (कचग्रह), मग्गो (मार्ग) वग्गा (वल्गा) ।

विशेष—इसी तरह दूसरे भिन्नवर्गीय वर्णों के बारे मे भी जानना चाहिए। जैसे—सत्तावीसा (सप्त-विशति), कण्णउर (कर्णपुरम्)

(३) वर्ग के पॉचवे अक्षरो का अपने वर्ग के अक्षरो के साथ भी कही-कही सयोग देखा जाता है, किन्तु सर्वत्र नही। यथा—अङ्को (अङ्क), इङ्गालो (अङ्गार), तालवेण्ट (तालवृन्तम्), वञ्चणीयम् (वञ्चनीयम्), फन्दन (स्पन्दनम्), उम्बर (उदुम्बरम्)

(४) प्राकृत मे ऐसा व्यञ्जन नही मिलता जो (सस्कृत के यावत् , तावत् , ईषत् के तकार के समान) स्वर-रहित हो।

(५) प्राकृत मे प्रकृति, प्रत्यय, लिङ्ग, कारक, समाससञ्ज्ञा आदि सस्कृत के समान ही होते है।

(६) प्राकृत मे द्विवचन नही होता। इसी प्रकार सम्प्रदान कारक मे आनेवाली चतुर्थी विभक्ति भी प्राकृत मे नही होती है। हिन्दी और अग्रेजी की तरह द्विवचन का काम बहुवचन

से और चतुर्थी का काम षष्ठी से पूरा कर लिया जाता है*। द्विवचन के बदले बहुवचन का उदाहरण जैसे—वच्छा चलन्ति (वत्सौ चलत), चतुर्थी के बदले षष्ठी जैसे—विप्पस्स देहि (विप्राय देहि)

(७) समास मे कभी कभी दीर्घ स्वर ह्रस्व स्वर के रूप मे और ह्रस्व स्वर दीर्घ स्वर के रूप मे बदलता हुआ देखा जाता है। दीर्घ का ह्रस्व जैसे—जहट्ठिअ (यथा स्थितम्), अतावेइ (अन्तर्वेदी), ह्रस्व का दीर्घ जेसे—सत्तावीसा (सप्त-विशति)।

(८) कभी कभी दीर्घ और ह्रस्व के क्रमश ह्रस्व और दीर्घ रूप समास मे विकल्प से होते देखे जाते है। जेसे—णइसोत्त, णईसोत्त (नदीस्रोत॰), बहुमुह बहूमुह (वधूमुखम्), पिआपिअ, पीआपीअ (प्रियाप्रियम्)

विशेष :—कभी कभी स्वरो के उक्त परिवर्तन नही भी देखे जाते है। जैसे—जुवइ अणो (युवतिजन)

(९) दो पदो मे सान्निध्य रहने पर सस्कृत के लिए विहित कुल सन्धि-कार्य प्राकृत मे विकल्प से किये जाते है। जैसे—वास+इसी, वासेसी (व्यासर्षि), दहि+ईसरो, दहीसरो (दधीश्वर॰)

---

* देखिए वररुचिसूत्र द्विवचनस्य बहुवचनम ६ ३२ और चतुर्थ्या षष्ठी ६ ६४ अर्द्धमागधी मे चतुर्थी देखी जाती है। जैसे—अधम्माय कुज्झइ (अधर्माय क्रु यति), ससाराए सुख (ससाराय सुखम्), अट्ठाए दण्डो (अर्थाय दण्ड) इत्यादि।

विशेष :—(क) एक पद में सन्धि कार्य नही होता। जैसे—
पाओ (पाद), पई, वच्छाओ, मुद्धाए इत्यादि।
(ख) कही कही एक पद में भी शब्दो के स्वभाव-वश सन्धि होती देखा जाती है। जैसे—काहिइ, काही, बिइओ, बीओ।

(१०) 'इ' और 'उ' का विजातीय स्वर के साथ कभी सन्धि-कार्य नही होता। जैसे—विअ (इव), महुइँ (मधूनि), न वेरिवग्गे वि अवयासो* (न वैरिवर्गेऽप्यवकाशः), दणु इन्दरुहिरलित्तो† (दनुजेन्द्ररुधिरलिप्त)

(११) सजातीय स्वर के साथ सन्धि हो जाती है। जैसे—पुहवी+ईसो=पुहवीसो (पृथिवीश), कुलूद+आहिपो=कुलू-दाहिपो (कुलूताधिप)।

(१२) 'ए' और 'ओ' के आगे यदि कोई स्वर वर्ण हो तो उनमे सन्धि नही होती है। जैसे—देवीए+एत्थ, एओ+एत्थ (देव्या अत्र, एकोऽत्र), वहुआइ **नहुल्लिहणे आबन्धन्तीएँ** कञ्चुअं अङ्गे (बध्वा नखोल्लेखने आबध्नत्या कञ्चुकमङ्गे), त चेव मलिअ विसदण्ड **विरसमालक्खिमो एण्हि** (तदेव मृदित-विसदण्डविरसमालक्षयामह इदानीम्)

---

* भीय परित्ताणमइ पइण्ण मसिणो तुहाधिरूढस्स।
(भीतपरित्राणमयी प्रतिज्ञामसेस्तवाधिरूढस्य।)
मन्ने सङ्काविहुरे न वेरिवग्गे वि अवयासो।
(मन्ये शङ्काविधुरे न वैरिवर्गेऽप्यवकाशः॥)

† **दणु इन्द रुहिरलित्तो** सहइ उइन्दो नहप्पहावलि अरुणो।
(दनुजेन्द्ररुधिरलिप्त शोभते उपेन्द्रो नखप्रभावल्ल्यरुण)

(१३) व्यञ्जनघटित स्वर से व्यञ्जन का लोप हो जाने पर जो स्वर बँचा रह जाता है उसे प्राकृत के वैयाकरण लोग **'उद्वृत्त'** कहते है। कोई भी 'उद्वृत्त' स्वर किसी भी स्वर के साथ सन्धि कार्य को नही प्राप्त करता है। जैसे—गन्ध-उडि (गन्धकुटीम्), निसाअरो (निशाचर), रयणीअरो (रजनीचर॰)

विशेष :—कही कही इस नियम के प्रतिकूल उद्वृत्त स्वर का दूसरे स्वर के साथ सन्धिकार्य विकल्प से होता है। और कही कही सन्धि अवश्य होती है। विकल्प से जैसे—सुउरिसो, सूरिसो (सुपुरुष॰), नित्य जैसे—चक्काओ (चक्रवाक), सालाहणो (सातवाहन)

(१४) 'तिप्' आदि प्रत्ययो के स्वर किसी भी स्वर के साथ सन्धि कार्य प्राप्त नही करते है। जैसे—होइ इह (भवतीह)

(१५) किसी स्वर वर्ण के पर मे रहने पर उसके पूर्व के स्वर (उद्वृत्त अथवा अनुद्वृत्त) का वैकल्पिक लुक् होता है। जैसे—तिअस (त्रिदश) के सकार के आगेवाले अकार (अनुद्वृत्त) का 'ईसो' (ईश) के ई के पर मे रहने पर लुक् हो गया। अब स् और ई के मिल जाने से 'तिअसीसो' हुआ। वैकल्पिक होने के कारण 'तिअस ईसो' भी होता है। इसी प्रकार 'राउल' (उद्वृत्त अस्वर का लुक्) और राअ उल (राजकुलम्) भी जानना चाहिए।*

---

* तुलना कीजिए—अण्णावअणुक्कण्ठो (आज्ञावचनोत्कण्ठ) अभि॰ शा॰, २ अ), सलिलसेअसभमुग्गदो (सलिलसेकसभ्रमोद्गत) अभि॰ शा॰, २ अ ।

विशेष :—(क) शौरसेनी आदि प्राकृत के अन्य भेदो मे उक्त नियम लागू नही होता।

(ख) प्राकृत प्रकाश के अनुसार किसी भी सयुक्ताक्षर के पूर्व मे वर्तमान स्वर से पूर्ववर्ती स्वर का सब जगह लोप होना माना जाता है। जैसे—णत्थि (नास्ति)

(१६) शब्दो के अन्त्य व्यञ्जन का सर्वत्र लुक् होता है। जैसे-

प्राकृत	सस्कृत
जाव	यावत्
ताव*	तावत्
जसो†	यश
णह‡	नभ
सिर	शिर

विशेष :—समास मे उक्त नियम विकल्प से होता है। सभिक्खू (लुक्) सज्जणो (अलुक्)

(१७) 'श्रत्' और 'उत्' इन दोनो के अन्त्य व्यञ्जन का लुक् नही होता। जैसे—सद्धा (श्रद्धा), उण्णाय (उन्नयम्)

(१८) 'निर्' और 'दुर्' के अन्तिम व्यञ्जन र् का लुक् विकल्प से होता है। जैसे—निस्सह (लुगभाव), नीसह (लुक्), दुस्सहो (लुगभाव), दूसहो (लुक्)। स निस्सहम्, दुस्सह ।

* शौरसेनी मे दाव होता है।

† नसान्तप्रावृट्सरद पुसि। वर सू ४ १८ नान्त, सान्त प्रावृष् और सरद् शब्दो का प्रयोग पुल्लिङ्ग मे होता है।

‡ न सिरोनभसी। वर० सू० ४ १९ शिरस् और नमस् शब्दों के पुल्लिङ्ग मे प्रयोग का निषेध है।

(१९) स्वर वर्ण के पर मे रहने पर 'अन्तर्' 'निर्' और 'दुर्' के अन्त्य व्यञ्जन (रेफ) का लुक् नही होता। जैसे—अन्तरप्पा (अन्तरात्मा), अन्तरिदा* (अन्तरिता), नि (णि) रुत्तर† (निरुत्तरम्) णिराबाव‡ (निराबाधम्), दुरुत्तर (दुरुत्तरम्) दुरागद§ (दुरागतम्)।

विशेष :—कही कही 'निर्' के रेफ् का लुक् देखा भी जाता है। जैसे—मुद्राराक्षस के पॉचवे अङ्क मे क्षपणक कहता है 'ता जइ भाउराअणस्स मुद्दालञ्छिदोऽसि तदो गच्छ वीसत्थो, अण्णधा णिवत्तिअ णिउक्कण्ठ£ चिट्ठ। (तद् यदि भागुरायणस्य मुद्रालाञ्छितोऽसि तदा गच्छ विश्वस्त। अन्यथा निवृत्य निरुत्कण्ठ तिष्ठ।)

---

* तेन हि लदाविडवन्तरिदा सुणिस्स (तेन हि लताविटपान्तरिता शृण्ये।) विक्र० अ० २ मे देवीवचन।

† वअस्स, णिरुत्तरा एसा (वयस्य, निरुत्तरा एषा) विक्र० अ० ३ मे चित्रलेखावचन।

‡ इमिणा दब्भोदएण णिराबाध एव्व दे सरीर भविस्सदि (अनेन दर्भोदकेन निराबाधमेव ते शरीर भविष्यति।) अभि० शा०, अ० ३ मे गौतमीवचन।

§ दुरागद दाणिं सवुत्त (दुरागतमिदानी सवृत्तम्) विक्र० अ० २ मे देवीवचन।

£ वररुचि के (३ १) मत से क्, ग्, ड्, त्, द्, प्, ष्, स यदि सयोग के आदि मे हो तो उनका लोप हो जाता है। और

(२०) विद्युत् शब्द को छोड़कर स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान सभी व्यञ्जनान्त शब्दो के अन्त्य व्यञ्जन का आत्व होता है। जैसे—सरिआ (सरित्), सपआ (सपद्), वाआ* (वाक्), अच्छरा† (अप्सर)

उन्हीं के अन्य सूत्र (३ ५०) के अनुसार आदि मे नहीं रहनेवाले जो सयुक्त के शेष अथवा आदेशभूत अक्षर हो उनका द्वित्व माना गया है। इस प्रकार उत्कण्ठा मे त् का लोप और क् का द्वित्व करके 'उक्कण्ठा' बनता है। उत्पात का 'उप्पाओ' बनता है। यह प्रकार उत्तम है। प्राकृतप्रकाश मे दूसरे भी लोपविधायक सूत्र देखे जाते है। जैसे—(१) उदुम्बरे दोर्लोप। वर० २ ४ उदुम्बर शब्द मे दु का लोप होता है। उबर (उदुम्बरम्) (२) कालायसे यस्य वा। वर० ३ ४ कालायस मे य का लोप विकल्प से होता है। कालास काला अस (कालायस) (३) भाजने जस्य। वर० ४ ४ भाजन शब्द मे ज का वैकल्पिक लोप होता है। भाण, भाअण (भाजनम्) (४) यावदादिषु वस्य। वर० ५ ४ यावत् प्रभृति शब्दो म 'व' का वैकल्पिक लोप होता है। जा, जाव, ता, ताव, पाराओ, पारावओ अनुत्तन्तो, अनुवत्तन्तो, जीअ, जीविअ, एअ एव्व, एअ एव्व, कुलअ, कुवलअ, (यावत्, तावत्, पारावत, अनुवर्तमान, जीवितम् एव, एव, कुवलयम्)

* एत्तिअ जेव्व अत्थि मे वाआच्छल (एतावदेवास्ति मे वाक्छलम्) मुद्रा० अ० १ मे चन्दनदासवचन। णत्थि मे वाआविहवो (नास्ति मे वाग्विभव) विक्र० अ० २ मे उर्वशीवचन।

† सहि, अच्छरावावारपज्जाएण तत्र भअदो सुज्जस्स उवट्ठाणे वट्टती (सखि, अप्सरोव्यापारपर्यायेण तत्र भवत सूर्यस्योपस्थाने वर्तमाना) विक्र० अ० ४ म चित्रलेखावचन।

विशेष—(क) यह नियम इसी अध्याय के नियम १६ का अपवाद है।

(ख) विद्युत् शब्द का प्राकृत रूप विज्जू होता है।

(ग) उक्त नियम से जो आ होता है, उसका उच्चारण कभी-कभी ईषत्स्पृष्टतर या के के समान भी होता है। सरिया, पाडिवया, सपया।

(घ) अप्सरस् का एक रूप अच्छरसा भी होता है।

(२१) स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान रेफान्त शब्द के अन्तिम र् का रा आदेश होता है। जैसे—धुरा*, गिरा†, पुरा (धू, गी, पू)

(२२) 'क्षुध्' शब्द के अन्त्य व्यञ्जन का 'हा' आदेश होता है। जैसे—छुहा (क्षुत्)

(२३) 'शरत्' प्रभृति शब्दो के अन्तिम व्यञ्जन के स्थान मे 'अ'‡ आदेश होता है। जैसे—सरअ,§ भिसअ (शरत्, भिषक्)

---

* दुव्वोज्झा वि अवलम्बिआ कज्जधुआ। राव० ४ ४४

† पासम्मि ठिआ तस्स य महूअगोरीओ महुअमहुरगिरा। (पार्श्वे स्थिता तस्य या मधूकगौर्यो मधूकमधुरगिर।) कुमा० पा० १ ७५

‡ प्राकृत प्रकाश के 'शरदो द' वर० सू० ४ १० के अनुसार शरत् के अन्तिम व्यञ्जन का 'द्' आदेश' होता है। इसके अनुसार शरत् के लिए 'सरअ' न होकर 'सरदो' रूप होता है।

§ सीआ वाह विहाओ दहमुहवज्झ दिअहो उवगओ सरओ राव० १ १६

(२४) 'दिश्' और 'प्रावृष्' शब्दो के अन्तिम व्यञ्जनो के स्थान मे 'स' आदेश होता है। जैसे—दिसा,* पाउसो† (दिक्, प्रावृट्)

(२५) 'आयुष्' और 'अप्सरस्' के अन्त्य व्यञ्जनो का 'स' आदेश विकल्प से होता है। जैसे—दीहाउसो,‡ दीहाऊ, अच्छरसा,§ अच्छरा() (अप्सरा)

(२६) ककुभ् शब्द के अन्त्य व्यञ्जन का ह आदेश होता है। जैसे—कउहा (ककुप्)

(२७) धनुष् शब्द के अन्त्य व्यञ्जन के स्थान मे ह आदेश विकल्प से होता है। जैसे—धणुह, धणू □ (धनु)

(२८) अन्त्य 'म्' का अनुस्वार होता है। जैसे—जलं, फलं, वच्छं, गिरिं पेच्छ (जलम्, फलम्, वत्सम्, गिरिम्, प्रेक्षस्व)।

---

* फुरइ फुरिअट्टहास उद्धपडित्ततिमिर मित्र दिसा-अक्क। रावण० १ ५

† दिसाण पाउस-किलन्ताण। (दिशा प्रावृट्क्लान्तानाम्।) कुमा० पा० १ ६

‡ दीहाऊ वि अदीहाउसमाणी सइ विवेइ-जणो। (दीर्घायुरपि अदीर्घायुर्मानी सदा विवेकिजन।) कुमा० पा० १ १०

§ जीअ-विढत्तच्छरस। रावण० १३ ४७

() गअण-णिराअ-भिएण-घण मेसि अच्छरेहि। रावण० ७ ४५

□ कुसुमधणू धणुहधरो कउहा-मुह-मण्डणम्मि चन्दम्मि। (कुसुमधनुर्धनुधर ककुम्मुखमण्डने चन्द्रे।) कुमा० पा० १ ११

(२९) कही-कहीं अनन्त्य मकार का वैकल्पिक रूप से अनुस्वार होता है। जैसे—वणम्मि, वणमि (वने)

(३०) स्वर के पर मे रहने पर अन्त्य मकार का अनुस्वार विकल्प से होता है। जैसे—फलं अवहरइ, फलमवहरइ (फल-मवहरति)

विशेष—अनुस्वार के अभाव पक्ष मे म् का म् ही रह गया। लुक् का अपवाद होने से लुक् (१ १६) नहीं हुआ।

(३१) कभी-कभी 'म्' के अतिरिक्त दूसरे व्यञ्जनों के स्थान मे भी पाक्षिक मकार होता देखा जाता है। जैसे—वीसुं*, पिहं, सम्मं, सक्खं, जं, तं, (विष्वक्, पृथक्, सम्यक्, साक्षात्, यत्, तत्,)

(३२) व्यञ्जन वर्णों के पर मे रहने पर ङ् ञ् ण् न् के स्थान मे अनुस्वार होता है। जैसे—पंत्ती, परंमुहो, कंचुओ, वंचणं, संमुहो, उक्कंठा, कंसो, अंसो (पङ्क्ति, पराङ्मुख, कञ्चुक, वञ्चनम्, षण्मुख, उत्कण्ठा, कंस, अंश)

(३३) वक्रप्रभृति† शब्दो मे कहीं प्रथम, कहीं द्वितीय तथा कहीं तृतीय स्वर के आगे अनुस्वार का आगम होता है।

---

* वीसुं वासा नीसित्त महि अले ऊस मालि तेअस्स (विष्वग्वर्षानिषिक्तमहीतले उस्रमालितेजस । कुमार पा० १ ३२

† वक्रत्र्यस्रवयस्याश्रु श्मश्रुपुच्छातिमुक्तकौ,
गृष्टिर्मनस्विनी स्पर्शश्रुतप्रतिश्रुत तथा।
निवसन दर्शनञ्चैव वक्रादिष्वेवमादय ॥

(प्राकृतकल्पलतिका के अनुसार वक्रादि गण । यह गण आकृति गण माना जाता है।)

जेसे—वक (वक्रम्), तस (त्र्यस्रम्), असु (अश्रु), मसू (श्मश्रु) पुछ (पुच्छम्) गुछ (गुच्छम्), मुढा अथवा मुड (मूर्द्धा), फसो (स्पर्श॰), बुधो (बृध्न॰), ककोडो (कर्कोट॰), कुपल (कुट्मल अथवा कुड्मलम्), दसण (दर्शनम्) विछिओ (वृश्चिक), गिठी अथवा गुठी (गृष्टि) मजारो (मार्जार)*
वयसो (वयस्य॰), मणसिणी (मनस्विनी), मणसिला (मन-शिला), पडिसुद (प्रतिश्रुतम्), पडिसुआ (प्रतिश्रुत्)† उवरि (उपरि), अहिमुको (अभिमुक्त) अणिउँतय, अइमुतय (अति-मुक्तकम्)‡

(३४) क्त्वा एव स्वादि के ण और सु के आगे विकल्प से अनुस्वार आता है।

क्त्वा के आगे जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
काउण (अनुस्वार), काउण (अनुस्वार का अभाव)	कृत्वा

स्वादि के ण के आगे जैसे—

वच्छेण (अनुस्वार), वच्छेण (अनु० का अभाव)	वृत्तेण

स्वादि के सु के आगे जैसे—

वच्छेसु (अनुस्वार), वच्छेसु (अनु० का अभाव)	वृत्तेषु

---

* वक से मजारो तक प्रथम स्वर के आगे अनुस्वार का आगम हुआ है।

† वयसो से पडिसुआ तक शब्दो मे द्वितीय स्वर के आगे अनुस्वार का आगम होता हे।

‡ उवरिं से अइमुतय तक शब्दो मे तृतीय स्वर के आगे अनुस्वार का आगम होता है।

(२५) विशति प्रभृति* शब्दो के अनुस्वार का लुक् होता है। जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
वीसा	विशति•
तीसा	त्रिशत्
सक्कश्र	सस्कृतम्
सक्कारो	सस्कार•
सत्तुश्र	सस्तुतम्

(३६) मासादि गण† मे अनुस्वार का लुक् विकल्प से होता है। जैसे—

(क) प्रथम स्वर के आगे अनुस्वार का लुक्—

प्राकृत	सस्कृत
मास, मस	मासम्
मासल, मसल	मासलम्
कि, कि,	किम्

---

* विंशत्यादि गण मे विंशति, त्रिंशत्, सस्कृत, सस्कार और सस्तुत शब्द गृहीत है।

† मासादि गण के विषय मे प्राकृतप्रकाश मे यो लिखा गया है—'यत्र क्वचित् वृत्तभङ्गभयात् त्यज्यमान क्रियमाणश्च विन्दुर्भवति स मासादिषु द्रष्टव्य ।' अर्थात् छन्दोभङ्ग के भय से जिस किसी शब्द मे अनुस्वार छोड़ा जाता या गृहीत होता है, वह शब्द मासादि गण मे माना जाता है।

प्राकृत	संस्कृत
कास, कस	कासम्
सीहो, सिघो	सिंहः
पासू, पसू	पांसुः (शु)

(ख) द्वितीय स्वर के आगे अनुस्वार का लुक्—

प्राकृत	संस्कृत
कहं, कह	कथम्
एवं, एव	एवम्
नूणं, नूण	नूनम्

(ग) तृतीय स्वर के आगे अनुस्वार का लुक्—

प्राकृत	संस्कृत
इआणिं, इआणि	इदानीम्
समुहं, समुह	सम्मुखम्
केसुअं, किंसुअं	किंशुकम्

(३७) वर्गों का यदि कोई अक्षर पर में हो तो पूर्व के अनुस्वार के स्थान में पर अक्षर के वर्ग का पञ्चम अक्षर विकल्प से होता है। क, ख, ग, घ के पर में जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
पङ्को, पंको	पङ्कः
सङ्खो संखो	शङ्खः
अङ्गणं, अंगणं	अङ्गनम्
लङ्घणं, लंघणं	लङ्घनम्

च, छ, ज, झ के पर में जैसे—

कञ्चुओ, कचुओ	कञ्चुक
लञ्छण, लछण	लाञ्छनम्
व्यञ्जिअ, वजिअ	व्यञ्जितम्
सञ्झा, सझा	सन्ध्या

ट, ठ, ड, ढ के पर मे जैसे—

कण्टओ, कटओ	कण्टक
उक्कण्ठा, उक्कठा	उत्कण्ठा
कण्ड, कड	काण्डम्
सण्ढो, सढो	षण्ढ

त, थ, द, ध के पर मे जैसे—

अन्तर, अतर	अन्तरम
पन्थो, पथो	पन्था
चन्दो, चदो	चन्द्र
बन्धवो, बधवो	बान्धव

प, फ, ब, भ के पर मे रहने पर जैसे—

कम्पइ, कपइ	कम्पते
वम्फइ, वफइ	काङ्क्षति
कलम्बो, कलबो	कलम्ब
आरम्भो, आरभो	आरम्भ

विशेष :—(क) पर मे वर्ग का अक्षर नहीं रहने से किसुओ और सहरइ मे उक्त नियम लागू नहीं हुआ।

(ख) प्राकृत के अन्य वैयाकरण उक्त नियम को वैकल्पिक न मान कर नित्य मानते है।

लिङ्गानुशासन

(३८) प्रावृष् , शरद् और तरणि शब्दो का पुल्लिङ्ग मे प्रयोग किया जाना चाहिए। जैसे—पाउसो,* सरओ,† तरणी‡

(३९) दामन्, शिरस् और नभस् से वर्जित सकारान्त तथा नकारान्त शब्द पुल्लिङ्ग मे प्रयुक्त होते है।

सान्त जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
जसो[]	यश
पओ()	पय
तमो§	तम
तेओ△	तेज
सरो×	सर

---

* जइआ गिम्हो पयहओ तइअ चिअ फिर आसि **पाउसो**। कुमा० पा० ४ ७८

† दहमुह वज्झ दिअहो **उअगओ सरओ**। रावण० १ १६

‡ न जत्थ दीसइ **फुडो तरणी**। कुमार० पा० १ २१

[] पारोहो व्व **खुडिओ महेन्दस्स जसो**। रावण० १ ४

() धीरअ सइ मुहल घण **पअ-विज्जन्तअ**। रावण० २ २४

§ णह णिह **तमेण** व चउद्दिस भाविअ। रावण० २ २३

△ देखिए १ ३१ की पादटिप्पणी।

× **अमुणा सरेण** हसाण माणस त पि विम्हरिअ। कुमा० पा ५ ६५

नान्त जैसे—

जम्मो*	जन्म
नम्मो†	नर्म
कम्मो][	कर्म
वम्मो[]	वर्म

(४०) दामन्, शिरस् और नभस् शब्द नपुसक लिङ्ग मे प्रयुक्त होते है। जैसे—दाम() (दाम), सिर§ (शिर), नह× (नभ)

विशेष:—(क) यह नियम पूर्व नियम (१ ३९) मे प्रतिषिद्ध दामन् आदि तीनों शब्दों के लिङ्ग का बोधन करता है।

(ख) नीचे लिखे उदाहरणो मे भी उक्त १ ३९ नियम प्रवृत्त नही होता है। अर्थात् नपुसकत्व हो जाता है। जैसे—

---

* सहलो **जम्मो** सभल च जीविअ ताण देव फणि चिन्ध। कुमा० पा० २ ५६

† इअ **नम्म-पङ्क** जल पाण रई। कुमा० पा० ४ ३३

[] काही सउहे गमण **सभ्भा-कम्म** च काहीअ। कुमा० पा० ५, ८७

][**अग्घिअवम्मा** (राजितवर्माण) छज्जिअ सिरक्कया। कुमा० पा० ६ ६३

() **गलिअ** घण लच्छि रअण रसणा **दाम**। रावण० १ १८

§ **उण्णामिअ** णणु **सिर** जाअ। रावण० ४ ५६

× थाण प्फिडिअ सिढिल **पडन्त** व णह। रावण० ४ ५४

वय* (वय), सुमणो† (सुमन), सम्म‡ (शर्म), चम्म[] (चर्म)

(४१) अक्खि (आँख) के समानार्थक शब्द तथा निम्न निर्दिष्ट वचनादि()गण के शब्द पुल्लिङ्ग मे विकल्प से प्रयुक्त होते है। अक्षि शब्द का पाठ अञ्जल्यादि गण मे भी किया गया है, इसलिए स्त्रीलिङ्ग मे भी उसका प्रयोग होता है। जैसे—

प्राकृत		सस्कृत
अच्छी§	(पुलिङ्ग)	अक्षिणी
अच्छीइ][	(नपुसक)	अक्षिणी
एसा अच्छी	(स्त्रीलिङ्ग)	एतदक्षि
चक्खू (पुल्लिङ्ग) / चक्खूइ (नपुसक)		चक्षुषी
णअणो (पुल्लिङ्ग) / णअण (नपुसक)	△	नयनम्

* † सव्ववयाण मज्झिमवय व सुमणाण जाइ सुमण वा। कुमा० पा० १ २३

‡ सम्माण मुत्ति सम्म न पुहइ नयराण ज सेय। कुमा० पा० १ २३

[] चम्म जाण न अच्छी। कुमा० पा० १ २४

(वचनादि गण मे वचन, कुल, माहात्मा दु ख, छ दस्, विज्जु आदि शब्द गृहीत है।

§ अज्ज वि सा सवइ ते अच्छी। (अद्यापि सा शपति तेऽक्षिणी)

][नच्चावियाइँ तेणम्ह अच्छीइ (नर्तितानि तेनास्माकमक्षीणि)

△ शाकल्य शरद स्त्रीत्वे क्लीबे नान्तश्च कुण्डिन । पुक्लीबयोस्तथाख्यात नयनादि तथा परे । कल्पलतिका।

विअसन्ति जत्थ नयणा कि पुण अन्नाण नयणाइ, कुमा० पा० १ २४

लोअणो (पुल्लिङ्ग) } * लोअण (नपुसक)	लोचनम्
वअणो (पुल्लिङ्ग) } † वअण (नपुसक)	वचनम्
कुलो (पुल्लिङ्ग) } कुल (नपुसक)	कुलम्
माहप्पो } ‡ माहप्प	माहात्म्यम्

(४२) किसी किसी आचार्य के मत से पृष्ठ, अक्षि और प्रश्न शब्द विकल्प से स्त्रीलिङ्ग मे प्रयुक्त होते है। जैसे—पुट्ठी, पुट्ठ (पृष्ठम्), अच्छी, अच्छ (अक्षि), पण्हा, पण्हो (प्रश्न॰)।

(४३) गुणादि() शब्द नपुसक लिङ्ग मे विकल्प से प्रयुक्त होते है। जेसे—गुणा□ गुणो (गुण), देवाणि, देवा (देवा), खग्ग, खग्गो (खड्ग), मण्डलग्ग, मण्डलग्गो (मण्डलाग्र), कररुह, कररुहो (कररुह), रुक्खाइ, रुक्खा (वृक्षा)

(४४) इमान्त (इमन् प्रत्यय जिसके अन्त मे आया हो)

---

* विहसतहिओ विहसेन्त लोअणो। कुमा॰ पा॰ ५ ८४

† गुरुणो वयणा वयणाइ। कुमा॰ पा॰ १ २५

‡ नेत्र और कमल शब्दो का वचनादि मे ग्रहण नहीं है। क्योंकि वे सस्कृत के अनुसार ही है।

() गुणादि मे गुण, देव, विन्दु, खड्ग, मण्डलाग्र, कररुह, और वृक्ष शब्द गृहीत है।

□ विहवेहिं गुणाइ मग्गन्ति (विभवैर्गुणा मृग्यन्ते) हेम॰ १ ३४

और अञ्जल्यादि* गण के शब्द विकल्प से स्त्रीलिङ्ग मे प्रयुक्त होते है।

इमान्त मे जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
एसा गरिमा, एसो गरिमा	एष गरिमा
एसा महिमा, एसो महिमा†	एष महिमा

अञ्जल्यादि मे जैसे—

एसा अजली, एसो अजली‡	एष अञ्जलि
चोरिआ (स्त्री०), चोरिआ (पु०)	चौर्यम्
निही (स्त्री०), निही (पु०)△	निधि
विही (स्त्री०), विही (पु०)	विधि
गठी (स्त्री०), गठी (पु०)	ग्रन्थि'

(४५) जब बाहु शब्द स्त्री लिङ्ग मे प्रयुक्त होता है, तब उसके उकार के स्थान मे आकार आदेश होता है। किन्तु जब

---

* अञ्जल्यादि गण मे अञ्जलि, पृष्ठ, अक्षि, प्रश्न, चौर्य, कुक्षि, बलि, निधि, विधि, रश्मि और ग्रन्थि शब्द गृहीत है। रश्मि स्त्रिया वेति कल्पलतिका। कल्पलतिकाया काश्मीरोष्म सीम शब्दा पठिता।

† एयाए महिमाए हरिओ महिमा सुर पुरीए।

—कुमा० पा० १ २६

‡ जत्थञ्जलिणा कणय रयणाइ वि अञ्जलीइ देइ जणो।

—वही। १ २७

△ कणय-निही अक्खीणो रयण-निही अक्खया तह वि।

—वही। १ २७

पुल्लिङ्ग मे प्रयुक्त होता है तब आकार आदेश न होकर बाहु रूप ही रह जाता है। जैसे एसा बाहा*, एसो बाहू†। (एष बाहु॰)

(४६) सस्कृत व्याकरण के अनुसार जब किसी अकार के आगे विसर्ग आया हो, तो उस विसर्ग के स्थान मे ओ आदेश हो जाता है और ओ के पूर्व के व्यञ्जन सहित अ का लोप होता है। जैसे—सव्वओ (सर्वत), पुरओ (पुरत॰), अग्गओ (अग्रत.), मग्गओ (मार्गत)

विशेष :—यह सार्वत्रिक नियम नही है कि शब्द अकारान्त ही हो। अत व्यञ्जनान्त शब्दो मे भी उक्त नियम लागू हो जाता है। जैसे—भवओ (भवत॰), भवन्तो (भवन्त॰), सन्तो (सन्त॰), कुदो (कुत)

(४७) **माल्य** शब्द के पर मे रहने पर **निर्** और **स्था** धातु के पर मे रहने पर **प्रति** के स्थान मे क्रमश॰ **ओत्** और **परि** आदेश विकल्प से होते है। जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
ओमल्ल अथवा ओमाल (ओ) निम्मल (ओ का अभाव)	निर्माल्यम्
परिट्ठा (परि आदेश) पइट्ठा (परि का अभाव)	प्रतिष्ठा

* तत्थ सिरि कुमर बालो बाहाए सव्वओ वि धरिअ धरो।
—कुमा॰ पा॰ १ २८.

† बाहूसु सिला अल हिएसु णिसण्णो। —रावण॰ ३ १

परिट्ठिअ (परि आदेश) पइट्ठिअ (परि का अभाव)	प्रतिष्ठितम्

(४८) त्यद् आदि* सर्वनामों से पर मे रहनेवाले अव्ययो तथा अव्ययो से पर मे रहनेवाले त्यदादि के आदि स्वर का लुक् विकल्प से होता है। जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
अम्हेव्व (त्यदादि से पर अव्यय के आदि स्वर का लुक्)	वयमेव
अम्हे एव्व (लुक् का अभाव)	वयमेव
जइह (अव्यय से पर मे आनेवाले त्यदादि के आदि स्वर का लुक् जइ अह (लुक् का अभाव	यद्यहम्

(४९) पद से पर मे रहनेवाले अपि अव्यय के आदि अ का लुक् विकल्प से होता है। जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
त पि, तमवि	तमपि
कि पि, किमबि	किमपि
केण वि, केणावि	केनापि
कह पि, कहमवि	कथमपि

(५०) पद से पर मे रहनेवाले इति अव्यय के आदि इकार

---

* त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवतु किम् ये ही त्यदादि सर्वनाम माने गये है।

का लुक् विकल्प से होता है और स्वर से पर मे रहनेवाले तकार का द्वित्व है। जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
कि ति	किमिति
य ति	यदिति
दिट्ठ ति	दृष्टमिति
न जुत्त ति	न युक्तमिति

स्वर से पर रहने पर जैसे—

तह त्ति	तथेति
पिओ त्ति	प्रिय इति
पुरिसो त्ति	पुरुष इति

विशेष—पद से पर मे नही रहने के कारण नीचे लिखे उदाहरण मे न तो इति के आदि इ का लुक् हुआ और न तकार का द्वित्व ही। इअ* विञ्झ गुहा-निलयाए।

(५१)—जिन श्, ष्, स् से पूर्व अथवा पर मे रहनेवाले य्, र्, व्, श्, ष्, स् वर्णों का प्राकृत के नियमानुसार लोप हुआ हो उन शकार, षकार और सकारो के आदि स्वर का दीर्घ हो जाता है†। जैसे—

---

* देखिए—नियम १ ६६

† इस नियम को पूर्णत समझने के लिए हेमचन्द्र के अधोम-नयाम् २ ७८ अनादौ शेषादेशयोद्वित्वम्। २ ८९ न दीर्घानुस्वा-रात्। २ ९२ आदि सूत्रो का मनन आवश्यक है।

प्राकृत		संस्कृत
पासइ	(यलोप२ ७८, द्वि०२ ८९, = पस्सइ सलुक् २ ७७, दीर्घ)	पश्यति
कासवो	(,, ,, ,, ,, = कस्सवो ,, ,, ,,)	काश्यय
वीसमइ	(र लोप २ ७९, दीर्घ)	विश्राम्यति
वीसामो	(,, ,, ,,)	विश्राम
सफासो	(,, ,, द्वित्व२ ८९, सफस्सो सलुक् २ ७७, दीर्घ)	सफासो
आसो	(व लोप २ ७९ ,, ,, अस्सो ,, ,, ,,)	अश्व
वीससइ	(, ,, ,, विस्ससइ ,, ,, ,,)	विश्वसिति
विसासो	(,, ,, ,, ,, विस्सासो ,, ,, ,,)	विश्वास
दूसासणो	(श लोप २ ७७, दीर्घ)	दुश्शासन.
मणासिला	श लोप २ ७७, दीर्घ)	मन शिला
सीसो	(य लोप २ ७८ द्वित्व२ ८९ सिस्सो सलुक् २ ७७दीर्घ)	शिष्य
पूसो	(,, ,, ,, ,, पुस्सो ,, ,, ,,)	पुष्य.
मनूसो	(,, ,, ,, ,, मनुस्सो ,, ,, ,,)	मनुष्य
कासओ	(र लोप २ ७९ ,, ,, कस्सओ ,, ,, ,,)	कर्षक
वासा	(,, ,, ,, ,, वस्सा ,, ,, ,,)	वर्षा
वीसु	(व लोप २ ७९ उत्व१ ५२ द्वि, विस्सु ,, ,, ,,)	विष्वक्
सास	(य लोप २ ७८ ,, ,, सस्स ,, ,, ,,)	सस्यम्
कासइ	(य लोप २ ७८, द्वित्व२ ८९, कस्सइ, सलुक् २ ७७, दीर्घ)	कस्यचित्
ऊसो	(र लोप२ ७९, ,, ,, ,, उस्सो ,, ,, ,,)	उस्र.
विकासरो	(व लोप ,, ,, ,, विकस्सरो ,, ,, ,,)	विकस्वर
नीसो	(,, ,, ,, ,, निस्सो ,, ,,)	निस्व.
नीसहो	(स लोप २ ७७ दीर्घ	निस्सह.

(५२)—समृद्धयादि*गण के शब्दो मे आदि अकार का दीर्घ विकल्प से होता है। जैसे—सामिद्धी, समिद्धी (समृद्धि), पाअड, पअड (प्रकटम्), पासिद्धी, पसिद्धी (प्रसिद्धि), पाडिवआ, पडिवआ (प्रतिपदा), पासुत्त, पसुत्त (प्रसुप्तम्), पाडिसिद्धी, पडिसिद्धी (प्रतिसिद्धि) सारिच्छो, सरिच्छो (सदृक्ष), माणसी, मणसी (मनस्वी), माणसिणी, मणसिणी (मनस्विनी), आहिआई,* अहिआई† (अभिजाति), पारोहो, परोहो (प्ररोह), पावासू, पवासू (प्रवासी), पाडिप्फद्धी, पडिप्फद्धी (प्रतिस्पर्द्धी), आसो अस्सो (अश्व)।

विशेष—प्राकृतप्रकाश ने इस गण को आकृति गण माना है। ऊपर उदाहरणो मे इसीलिए मनस्वी, प्ररोह और अश्व॰ की उक्त गण के भीतर सिद्धि मानी गई है।

(५३) दक्षिण शब्द मे आदि अकार का, ह के पर मे रहने पर, दीर्घ होता है। जैसे—दाहिणो (दक्षिण॰)

विशेष—ह नही रहने पर दक्षिण का दक्खिणो यही रूप रह जाता है।

(५४) स्वप्न आदि शब्दो मे आदि 'अ' का इकार होता है। जैसे—सिविणो (स्वप्न), इसि (ईषत्), वेडिसो (वेतस),

---

* समृद्धयादि गण के शब्दों का परिगणन यो है—

समृद्धि, प्रतिसिद्धिश्च, प्रसिद्धि प्रकट तथा,
प्रसुप्तश्च प्रतिस्पर्द्धी प्रतिपच्च मनस्विनी।
अभिजाति, सदृक्षश्च समृद्धयादिरय गण ॥—कल्पलतिका।

* आहिजाई यह पाठान्तर है।

† अहिजाई यह पाठान्तर है।

विलिअ (व्यलीकम्), विअण (व्यजनम्), मुइंगो (मृदङ्ग॰), किविणो (कृपण॰), उत्तिमो (उत्तम), मिरिअ (मरियम्), दिण्ण* (दत्तम्)।

विशेष—जहाँ दत्त के त्त के स्थान मे णत्व नही हुआ हो, वहाँ उक्त नियम मे बहुल (प्राय॰) का अधिकार होने से इत्व नही होता है। जैसे—दत्त, देवदत्तो।

(५५) मयट् प्रत्यय मे आदि अ के स्थान मे 'अइ' आदेश विकल्प से होता है। अइ होने पर जैसे—विसमइओ, अइ के अभाव मे जैसे—विसमओ (विषमय॰)

(५६) अभिज्ञ† आदि शब्दो मे णत्व करने पर ज्ञ के ही

---

* प्राकृत प्रकाश मे—'इदीषत्पक्वस्वप्नवेतसव्यजनमृदङ्गाङ्गारेषु' यह सूत्र है। इस सूत्र मे 'वेति निवृत्तम्' ऐसा कहा गया है। इसि (ईषत्), पिक्क (पक्व), सिविणो (स्वप्न), वेडिसो (वेतस), विअणो (व्यजनम्), मिइङ्गो (मृदङ्ग), इङ्गालो (अङ्गार)। किंतु **प्राकृतमञ्जरी** के अनुसार यह इत्व विकल्प से होता है। ईषत् पक्व तथा स्वप्नो वेतसो व्यजन पुन। मृदङ्गश्च तथाङ्गार एषु शब्देषु सत्सु। अ न इद्वा भवेदीषदीसि वा पुनरीस वा। पक्व पिक्कञ्च पक्कञ्च तथान्येष्वपि दृश्यताम्। इत्वमीषत्पदे कैश्चिदीकारस्यापि चेष्यते। 'इसि चुम्बिअमित्यादि रूप तेन हि सिद्धयति। शौर-सेनी मे **अङ्गार** और **वेतस** के आदि अकार का इकार नही होता। आर्ष मे स्वप्न शब्द के आदि अकार का उकार भी होता है। जैसे—सुमिणो। इसके लिए देखिए—हेम॰ १ ४६।

† जिनके ज्ञ का णत्व कर देने पर उत्व देखा जाता है, वे ही अभिज्ञादि है। देखिए हेम॰ १ ५६

अकार का उत्व होना है। जैसे—अहिण्णू (अभिज्ञ), सव्वण्णू* (सर्वज्ञ), आगमण्णू (आगमज्ञ)

विशेष—णत्वाभाव मे अहिज्जो (अभिज्ञ) और सव्वज्जो (सर्वज्ञ) रूप होते है। अभिज्ञादि से भिन्न स्थल मे नियम नही लगता। पण्णो (प्राज्ञ)।

(५७) शय्या† आदि शब्दो मे आदि अकार का एकार आदेश होता है। जैसे—सेज्जा‡ (शय्या), सुदे॰ (सुन्दरम्), उक्केरो (उत्कर), तेरहो (त्रयोदश), अच्छेरं (आश्चर्यम्), पेरन्त (पर्यन्तम्), वेल्ली (वल्लि)

विशेष—कोई-कोई प्राकृत वैयाकरण शय्यादि गण मे कन्दुक का भी पाठ मानते है। उनके मत से गेडुअ (कन्दुकम्) रूप होता है।

(५८) अपि धातु के आदि अ का ओ आदेश विकल्प से होता है। ओ जैसे—ओप्पेइ, ओ का अभाव जेसे—अप्पेइ

---

* पैशाची मे सव्वण्णू न होकर सव्वञ्ञो और शौरसेनी मे सव्वण्णो होता है।

† शय्यादि गण मे निम्नलिखित शब्द ही माने गये हैं—

शय्या त्रयोदशाश्चर्य पर्यन्तोत्करवल्लय,
सौन्दर्य चोते शय्यादिगण शेषस्तु पूर्ववत्॥

‡ प्रसिद्ध वैयाकरण हेमचन्द ने एच्छय्यादौ १ ५७ और वल्ल्युत्करपर्यन्ताश्चर्ये वा १ ५८ इन दो सूत्रो को बनाकर प्रथम सूत्र से नित्य एत्व करते हुए सेज्जा, सुन्देर, गेन्दुअ, एत्थ (अत्र) इन उदाहरणो की सिद्धि मानी है। दूसरे से वैकल्पिक एत्व करते हुए वेल्ली, वल्ली, उक्केरो, उक्करो, पेरन्तो, पज्जन्तो, अच्छेर, अच्छरिअ, अच्छअर, अच्छरिज्ज, अच्छरीअ उदाहरण दिये है।

(अर्पयति), एव ओ आदेश जैसे—ओप्पिअ, ओ का अभाव जैसे—अप्पिअ (अर्पितम्)

(५६) स्वप् धातु मे आदि अ के स्थान मे ओत् और उत् आदेश पर्याय (बारी बारी) से होते है। ओत् जैसे—सोवइ, उत् जैसे—सुवइ (स्वपिति)।

(६०) नञ् के बाद मे आनेवाले पुनर् शब्द के अ के स्थान मे आ और आइ आदेश विकल्प से होते है। जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
ण उणा (आ)	न पुन
ण उणाइ (आइ)	
ण उण (पक्ष मे)	

(६१) अव्ययो मे और उत्खात,* चामर, कालक, स्थापित प्रतिस्थापित, सस्थापित, प्राकृत, तालवृन्त हालिक, नाराच, बलाका कुमार, खादित, ब्राह्मण एव पूर्वाह्न शब्दो मे आदि

---

* प्राकृत प्रकाश और कल्पलतिका मे उक्त उदाहरणो की सिद्धि के लिए 'अदातो यथादिषु वा' सूत्र मिलता है। कल्पलतिका मे यथादि गण मे शब्दो का परिगणना यो की गइ है—

यथातथातालवृन्त प्राकृतात्खातचामरम्।
चाटुप्रहावप्रस्तारप्रवाहाहालिकस्तथा ॥
मार्जारश्च कुमारश्च मार्जारेयुरलोनिनि।
सस्थापित खादितश्च मरालश्चैवमादय ॥

प्राकृतमञ्जरीकार यथादि गण की गणना इस प्रकार करते हे—

यथा चामरदावाग्निप्रहारोत्खातहालिका
तालवन्न्ततथाचाट यथादि स्यादय गण ।

आकार का अकार विकल्प से होता है। यथा—जह, जहा (यथा), तह, तहा (तथा), अहव, अहवा (अथवा), उक्खअ, उक्खाअ (उत्खातम्), चमर, चामर (चामरम्), कलओ, कालओ (कालक), ठविअ, ठाविअ (स्थापितम्), परिठविअ, परिष्ठापि (प्रतिष्ठापितम्), सठविअ, सठाविअ (सस्थापितम्) पउअ, पाउअ (प्राकृतम्), तलवेण्ट, तालवेण्ट (तालवृन्तम्), हलिओ, हालिओ (हालिक), णराओ, णाराओ (नाराच), वलआ, वलाआ (वलाका) कुमरो, कुमारो (कुमार'), खइअ, खाइअ (खादितम्), बम्हणो, बाम्हणो (ब्राह्मण), पुव्वण्हो, पुव्वाण्हो* (पूर्वाह्ण)

(६२) घञ् को निमित्त मानकर जहाँ आ रूप वृद्धि हुई हो, उस आदि आकार का अत्व विकल्प से होता है। जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
पवहो पवाहो	प्रवाह

---

* प्राकृत प्रकाश और कल्पलतिका के अनुसार प्रस्तार प्रहार, दावाग्नि, चाटु, मार्जार, मराल, प्रवाह इन शब्दों के आदि आकार का भी अत्व विकल्प से होता है। कल्पलतिका के अनुसार स्थापित, पाशुर तथा माधुर्य के आदि आकार का नित्य ही अत्व होता है। शौरसेनी आदि प्राकृत के अङ्गों मे कहीं अत्व का निषेध देखा जाता है। क्रमश यहाँ उदाहरण दिये जा रहे है।—पत्थरो, पत्थारो (प्रस्तार), पहरो, पहारो (प्रहार), दवग्गी, दावग्गी (दवाग्नि), चडु, चाडु (चाटु), मज्जारो, माज्जारो (मार्जार), मरलो, मरालो (मराल), पवहो, पवाहो (प्रवाह)।—ठविअ (स्थापितम्), पसुर (पाशुरम्), मधुरीअ (माधुर्यम्), जधा (यथा), तधा (तथा)।

पअरो } अकार
पआरो }

विशेष—कुछ घञन्त शब्दो मे यह नियम लागू नहीं होता। जैसे—राओ (राग) इत्यादि।

(६३) मास जैसे शब्दो मे अनुस्वार रहने पर (देखिए नियम १ ३६) आदि आकार का अत्व होता है जैसे—मस (मांसम्) पसू (पाशु), पसनो (पासन), कस (कासम्), कसिओ (कासिक), वसिओ (वासिक), ससिद्धिओ (सांसिद्धिक), सजत्तिओ (सायात्रिक)

(६४) सदा आदि शब्दो मे आकार का इकार आदेश विकल्प से होता है। **इकार जैसे**—सइ, तइ, जइ, **णिसिअरो**। **इकार का अभाव जैसे**—सआ, तआ, जआ, **णिसाअरो** (सदा, तदा, यदा, निशाचर)

(६५) यदि आर्या शब्द श्वश्रु (सास) के अर्थ मे प्रयुक्त हो तो 'र्य' के पूर्ववर्ती आकार के स्थान मे ऊ होता है। जैसे—ऊज्जा (सास अर्थ), अज्जा (श्रेष्ठ अर्थ), (आर्या)।

(६६) मात्रट् प्रत्यय के आकार के स्थान मे एकार विकल्प से होता है। **एकार आदेश जैसे**—एतिअमेत्त। **एकाराभाव जैसे**—एतिअमत्त (एतावन्मात्रम्)।

विशेष—कहीं कहीं मात्र शब्द मे भी आकार का एकार होता देखा जाता है। जैसे—भोअणमेत्त (भोजन मात्रम्)

(६७) सयोग से अव्यवहित पूर्ववर्ती दीर्घ का कभी कभी ह्रस्व रूप हो जाता है। जैसे—अब (आम्रम्), तब (ताम्रम्),

विरहग्गी (विरहाग्नि), अस्स (आस्यम्), मुनिदो (मुनीन्द्रो) तित्थ (तीर्थम्), गुम्ल्लावा (गुरूल्लापा), चुण्णो (चूर्ण), नरिन्दो (नरेन्द्र), मिलिच्छो (म्लेन्छ), अहरुट्ठ (अधरोष्ठम्), नीलुप्पल (नीलोत्पलम्)

विशेष—सयोग पर मे नही रहने से आयास ईसरो, ऊसरो आदि शब्दो मे उक्त नियम लागू नही होता है।

(६८) आदि इकार का सयोग के पर मे रहने पर एकार विकल्प से होता है। **एकार होने पर जैसे**—पेण्ड, णेद्दा, सेदूर, धम्मेल्ल, वेण्हू, पेट्ठ, चेण्ह, वेल्ल। **एकाराभाव मे जैसे**—पिण्ड, णिद्दा, सिदूर, धम्मिल्ल, विण्हू, पिट्ठ, चिण्ह, विल्ल (पिण्डम् निद्रा, सिन्दूरम्, धम्मिल्ल, विष्णु, पृष्ठम्, चिह्नम्, विल्लम्)

विशेष—इस नियम के अनुसार पिण्डादि मे जो एत्व होता है, **शौरसेनी आदि** मे नही होता। उसमे पिण्ड, णिद्दा और धम्मिल्ल ये ही रूप होते है।

(६९) जब इति शब्द किसी वाक्य के आदि मे प्रयुक्त होता है, तब तकारवाले इकार का अकार हो जाता है जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
इअ ज पिअवसाणे	इति यत् प्रियावसाने
इअ उअह अण्णह वअण	इति पश्यतान्यथा वचनम्

विशेष— इति शब्द के वाक्यादि मे प्रयुक्त नही रहने पर अत्व नही होता। जैसे—पिओ* त्ति (प्रिय इति), पुरिसो त्ति (पुरुष इति)

* देखो नियम १ ५०

(७०) जहाँ निर् के रेफ का लोप होता है, वहाँ नि के इकार का ईकार हो जाता है। जैसे—णीसहो (निस्सह) णीसासो (निःश्वास)।

विशेष—रेफ के लोप का अभाव रहने पर उक्त ईकार नहीं होता। जैसे—णिरओ (निरय), णिस्सहो (निःसह)।

(७१) द्वि शब्द और नि उपसर्ग के इकार का उ आदेश होता है। किन्तु कही कही यह नियम नही भी लागू होता है। द्वि शब्द के विषय मे कही विकल्प से उत्व होता और कही ओत्व भी देखा जाता है। **द्वि शब्द के विषय मे नित्य उत्व जैसे**—दुवाई, दुवे, दुवअण (द्वौ, द्विवचनम्), **द्वि शब्द मे विकल्प से उत्व जैसे**—दुउणो, दिउणो, दुइओ, दिउओ (द्विगुण, द्वितीय) **द्वि शब्द के विषय मे नियम की अप्रवृत्ति**—दिओ, द्विरओ (द्विज, द्विरद), **द्वि शब्द के विषय में ओत्व**—दोवअण (द्विवचनम्)। नि उपसर्ग के विषय मे इकार का उत्व जैसे—णुमज्जइ, णुमण्णो (निमज्जति, निमग्न), **नि उपसर्ग के विषय मे नियम की अप्रवृत्ति जैसे**—णिवडइ (निपतति)

(७२) कृञ् धातु के प्रयोग मे द्विधा शब्द के इकार का ओत्व और उत्व होता है। जैसे—

प्राकृत	सस्कृत
दोहा इअ (ओकार) दुहा इअ (उकार)	द्विधा कृतम्

दोहा किज्जदि (ओकार) } द्विधा क्रियते
दुहा किज्जदि (उकार) }

विशेष—(क) कृञ् का प्रयोग नही रहने से दिहा-गय (द्विधागतम्) मे उक्त नियम नही लगा।
(ख) कही कही केवल (कृञ् रहित) द्विधा मे भी उत्व देखा जाता है। दुहा वि सो सुर-वहू-सत्थो (द्विधापि स सुरवधूसार्थः)

(७३) पानीय* गण के शब्दो मे दीर्घ ईकार के स्थान मे ह्रस्व इकार होता है। जैसे—पाणिअ (पानीयम्), अलिअ (अलीकम्), जिअइ (जीवति), जिअउ (जीवतु), विलिअ (व्रीडितम्), करिसो (करीष), सिरिसो (शिरीष), दुइअ (द्वितीयम्), तइअ (तृतीयम्), गहिर (गभीरम्), उवणिअ (उपनीतम्), आणिअ (आनीतम्), पलिविअ (प्रदीपितम्), ओसिअन्तो (अवसीदन्), पसिअ (प्रसीद), गहिअ (गृहीतम्), वम्मिओ (वल्मीक), तयाणिं (तदानीम्)†

---

* **कल्पलतिका** के अनुसार पानीय गण मे निम्नलिखित शब्द सगृहीत है—

पानीयव्रीडितालीकद्वितीय च तृतीयकम्,
यथागृहीतमानीत गभीरञ्च करीषवत्
इदानीं च तदानीं च पानीयादिगणो यथा।

प्राकृतमञ्जरी मे इनसे भी कम सगृहीत हुए है—

पानीयव्रीडितालीकद्वितृतीयकरीषका
गभीरञ्च तदानीञ्च पानीयादिरय गण।

† **प्राकृतप्रकाश** पानीयादि गण मे उपनीत, आनीत, जीवति,

विशेष—बहुल का अधिकार आने से अर्थात् इस नियम के प्रायिक होने से पाणीअ, अलीअ, जीअइ, करीसो, उवणीओ ये रूप भी सिद्ध होते हैं।

(७४) तीर्थ शब्द के ईकार का ऊकार तब होता है, जब कि उसके आगे का 'र्थ' ह हो गया हो। **ह होने पर ऊकार जैसे**—तूह। **ह नही होने पर उत्वाभाव और ह्रस्व जैसे**—तित्थ (तीथम्)

(७५) मुकुलादि गण मे आदि उकार के स्थान मे अकार आदेश होता है।

[**प्राकृतप्रकाश मे मुकुलादि** गण न कहकर **मुकुटादि*** गण कहा गया है। जैसे—**अन्मुकुटादिषु**]

मुकुलादि अथवा मुकुटादि के उदाहरण—मउल (मुकुलम्), गरुई (गुर्वी), मउड† (मुकुटम्), जहुट्ठिलो, जहिट्ठिलो (युधिष्ठिर), सोअमल्ल (सौकुमार्यम्), गलोई (गुडूची)

विशेष—कही कही प्रथम उकार का आकार भी होता देखा जाता है। जैसे—विद्दाओ (विद्रुत)

जीवतु, प्रदीपित प्रसीद, शिरीष, गृहीत, वल्मीक और अवसीदन् शब्दों का उल्लेख नहीं करता।

* मुकुटादि गण मे **प्राकृतमञ्जरी** के अनुसार निम्नलिखित शब्द हैं।

मुकुट मुकुल गुर्वी सुकुमारो युधिष्ठिर —
अगुरूपरि शब्दौ च मुकुटादिरय गण ।

† तुलना कीजिए—भोजपुरी का 'मउर' शब्द और सस्कृत का 'मौलि' शब्द।

(७६) यदि गुरु शब्द के आगे स्वार्थ मे क प्रत्यय किया गया हो, तो उस गुरु शब्द के आदि उकार का अ आदेश विकल्प से होता है। जैसे—गरुओ, गुरुओ (गुरुक गुरु) स्वार्थिक क के अभाव मे गुरुओ (गुरुक । थोडा गुरु) होता है।

(७७) उत्साह और उच्छन्न शब्दो को छोडकर वैसे हो अन्य शब्दो मे 'त्स' और 'च्छ' के पर मे रहने पर पूर्व के आदि उकार का दीर्घ ऊकार होता है जैसे—ऊसुओ (उत्सुक), ऊसओ (उत्सव), ऊसित्तो (उत्सिक्त), ऊच्छुओ (उच्छुक । उद्‌गता शुका यस्मात् स)

विशेष—उच्छाहो (उत्साह॰), उच्छण्णो (उच्छन्न) मे उक्त नियमानुसार दीर्घ ऊकार नही होता।

(७८) दुर् उपसर्ग के रेफ का लोप हो जाने पर ह्रस्व उ का दीर्घ ऊ विकल्प से होता है। **ऊकार जैसे**—दूसहो, दूहओ, **ऊ का अभाव जैसे**—दुसहो, दुहओ (दु सह , दुर्भग)

विशेष—दुस्सहो विरहो मे रेफ का लोप नही रहने से वैकल्पिक ऊकार नही हुआ।

(७९) सयुक्त अक्षरो के पर मे रहने पर पूर्ववर्ती प्रथम उकार का ओकर होता है। जैसे—

तोण्ड* (तुण्डम्), मोण्ड (मुण्डम्), पोक्खर (पुष्करम्), कोट्टिम (कुट्टिमम्), पोत्थअ (पुस्तकम्), लोद्धओ (लुब्धक), मोत्ता (मुक्ता) वोक्कन्त (व्युत्क्रान्तम्), कोन्तलो (कुन्तल)

---

* प्राकृत प्रकाश मे 'उत् ओत्तुण्डरूपेषु' १० २० यह सूत्र है। कल्पलतिका के अनुसार तुण्डादिगण के शब्द यों परिगणित है—तुण्डकुट्टिमकुद्दालमुक्तामुद्‌गरलुब्धका । पुस्तकश्चैवमन्येऽपि कुम्भीकुन्तल पुष्करा ।

विशेष—शौरसेनी में यह ओत्व नित्य नहीं होता।

(८०) शब्द के आदि ऋकार का अकार होता है। जैसे—घअ (घृतम्), तण (तृणम्), कअ (कृतम्) वसहो (वृषभ) मओ (मृग अथवा मृत) वड्ढी आदि।

(८१) कृपादि†गण के शब्दों में आदि ऋकार का इत्व होता है। जैसे–किवा (कृपा), दिट्ठ (दृष्टम्), सिट्ठी (सृष्टि), भिऊ (भृगु), सिंगारो (शृङ्गार), घुसिण (घुसृणम्), इड्ढी (ऋद्धि), किसाणू (कृशानु) किई (कृति), किवणो (कृपण), भिंगारो (भृङ्गार), किसो (कृश), विञ्चुओ (वृश्चिक), विंहिओ (बृंहित), तिप्प (तृप्तम्), किच्च (कृत्यम्), हिअ (हृतम्), विसी (वृषि), सइ (सकृत्), हिअअ (हृदयम्), दिट्ठी (दृष्टि), गिट्ठी (गृष्टि), भिंगो (भृङ्ग), सियालो (शृगाल) विड्ढी (वृद्धि), घिणा (घृणा), किच्छ (कृच्छ्रम्), निवो (नृप), विहा (स्पृहा), गिड्ढी (गृद्धि), किसरो (कृशर), धिई (धृति), किनाण (कृपाणम्), किसिओ (कृषित), वित्त (वृत्तम्), वाहित्त (व्याहृतम्), इसी (ऋषि), वितिण्हो (वितृष्ण), मिट्ठ (मृष्टम्), सिट्ठ (सृष्टम्), पित्थी

† कृपादिगण के उदाहरणों की सिद्धि के लिए प्राकृतप्रकाश में इदृष्यादिषु सूत्र आया है। ऋष्यादिगण के शब्दों की गणना कल्पलतिका में इस प्रकार की गई है—ऋष्यादिषु कृति कृत्या धृष्टो वृषभ वृश्चिक। वृषश्च पृथुलो गृध्रा मृगाङ्को मसृण कृषि। सृष्टिर्दृढो भृतो गृष्टिवितृष्णकृतकृत्तय। सङ्गाराजकृष्णोऽयमृष्यादिगण ईदृश। प्राकृतमञ्जरीकार के मत से ऋष्यादिगण यो है—ऋषिर्दृष्टि कृशो घृष्टि कृपाशृङ्गारवृश्चिका, मृदङ्गो हृदय भृङ्ग शृगाल इति सृष्टय। विमृष्टश्च मृगस्तद्वद् भृत्यश्च कृशरस्तथा। आकृति प्रकृतिश्चैव स्यादृश्यादिरय गण।

(पृथ्वी), समिद्धी (समृद्धि), किवो (कृप), वित्ती (वृत्ति), उक्किट्ठ (उत्कृष्टम्)

विशेष—**कल्पलतिका** के अनुसार नीचे लिखे शब्दो मे ऋकार का नित्य ही इत्व होता है शेष मे विकल्प से—भृङ्गभृङ्गारशृङ्गारा कृपाण कृपण कृपा। शृगालहृदये वृष्टिर्दष्टिवृंहितमेव च। समृद्धि कृशरातृप्तिवृत्ति वृद्धिस्तु कृत्रिमम्। कृकराकुस्तथे-त्यादौ नित्यमित्व ऋतो मतम्। **विकल्प जैसे**—विसो, वसो (वृष) किण्हो, कण्हो (विष्णुवाची कृष्ण)

(८२) पृष्ठ शब्द जहाँ किसी समास आदि मे उत्तर पद नही हो, वहाँ ऋ का इ विकल्प से होता है जैसे—पिट्ठ, पट्ठ (पृष्ठम्)

विशेष—महिविट्ठ (महीपृष्ठम्) मे उत्तरपद रहने से पृष्ठ शब्द का वैकल्पिक इत्व नही हुआ।

(८३) ऋतु प्रभृति* शब्दों मे आदि ऋ का उकार होता है। जैसे—उदू (ऋतु), पउत्ती (प्रवृत्ति), परामुट्ठो (परामृष्ट), पाउसो (प्रावृट्), परहुओ (परभृत्), णिव्वुअ, णिव्वुद (निर्वृतम्), उसहो (ऋषभ), भाउओ (भ्रातृक), पहुदि (प्रभृति), सवुद

---

* कल्पलतिका मे ऋत्वादि गण यो माना गया है—

ऋतुर्मृदङ्गो निभृत वृत परभृतो मृत। प्रावृट् प्रवृत्तिर्वृत्ता तो मातृका भ्रातृकस्तथा। मृणालपृथिवीवृन्दावनजामातृका आप। वृन्दारकश्च प्रभृति पृष्ठ वृद्धादय परे॥ अत्र लक्ष्यानुसारतोऽन्येऽपि शब्दा ज्ञेया। (यहाँ लक्ष्यो के अनुसार ऐसे ही दूसरे शब्दो को भी जानना चाहिए।)

(सवृत्तम्), वुड्ढो (वृद्ध) मुडाल (मृणालम्), पाहुद (प्राभृतम्), पुट्ठ (पृष्ठम्), पुहइ, पुहवी (पृथिवी), पाउअ (प्रावृतम्) भुई (भृति), विउअ (विवृतम्), वुदावण (वृन्दावनम्), जामाउओ, जामादुओ (जामातृक), पिउओ (पितृक), णिहुअ, णिहुद (निभृतम्), णिव्वुई (निर्वृति), बुड्ढी (वृद्धि), माउआ (मातृका), णिउअ (निवृतम्), वुत्तान्तो (वृत्तान्त), उजू (ऋजु), पुहुवी (पृथिवी), वुद (वृन्दम्), माऊ, मादु (माता)

विशेष—मृगाङ्क शब्द मे मुअको और मअको दोनों रूप होगे।

(८४) समास आदि मे जो पद प्रधान न होकर गौण होता है, उसके अन्तिम ऋ के स्थान मे उकार होता है। जैसे—

प्राकृत	संस्कृत
माउ मण्डल मादु-मण्डल	मातृमण्डलम्
माउ-हर मादु-हर	मातृगृहम्
पिउ-वण	पितृवनम्

(८५) गौण (अप्रधान) मातृ शब्द के ऋकार का इकार विकल्प से होता है। जैसे—माइ-मण्डल, माइ-हर। पक्ष मे—माउ (दु)-मण्डल, माउ (दु)-हर

विशेष—कभी-कभी प्रधान (अगौण) मातृ के ऋकार का भी इत्व हो जाता है। जैसे—माइणो (मातु)

(८६) व्यञ्जन से सम्पर्करहित ऋ का रि आदेश कहीं विकल्प

से और कही नित्य होता है। जैसे—रिद्धी (ऋद्धि), रिण, ऋण (ऋणम्), रिज्जू, उज्जू (ऋजु), रिसहो, उसहो (ऋषभ), रिऊ, उदू (ऋतु), रिसो, इसी (ऋषि)

(८७) जिस दृश धातु के आगे कृत् के क्विप्, टक् और सक् प्रत्यय आये हो, उसके ऋ का रि आदेश होता है। जैसे—एआरिसो, तारिसो, सरिसो, सरिच्छो, एरिसो, केरिसो अण्णारिसो अम्हारिसो, तुम्हारिसो।

विशेष—शौरसेनी, पैशाची और अपभ्रंश मे इन शब्दों के रूप कुछ और ही होते है।

शौर०	जादिस	यादृशम्
	तादिस	तादृशम्
पै०	जातिस	यादृशम्
	तातिस	तादृशम्
अप०	जइश	यादृशम्
	तइश	तादृशम्

(८८) किसी भी शब्द मे आदि ऐकार का एकार होता है। जैसे—सेलो (शैल), सेत्त, सेच्च (शैत्यम्), एरावणो (ऐरावत), तेल्लुक (त्रैलोक्यम्), केलासो (कैलास), केढवो (कैतव), वेहव्व (वैधव्यम्)

(८९) दैत्यादि* गण मे ऐ के स्थान मे ए का अपवाद

---

* कल्पलतिका के अनुसार दैत्यादि गण के शब्द निम्नलिखित है—

दैत्यादौ वैश्यवैशाखवैशम्पायनकैतवा,
स्वैरवैदेहवैदेशच्चैत्रवैषयिका अपि।
दैत्यादिष्वपि विज्ञेयास्तथा वैदेशिकादय ॥

अइ आदेश होता है। जेसे—*दइच्च (दैत्यम्), दइण्ण (दैन्यम्), अइसरिअ (ऐश्वयम्), भइरवो (भैरव॰), दइवअ (दैवतम्), वइआलीओ (वैतालिक), वइएसो (वैदेश), बइएहो (वैदेह), वइअब्भो (वैदर्भ), वइस्साणरो (वैश्वानर), कैअव (कैतवम्), वइसाहो (वैशाख), वइसालो (वैशाल)

(९०) वैरादि† गण मे ऐत् के स्थान मे अइ आदेश विकल्प से होता है। जैसे—वइर, वेर (वैरम्), कइलासो, केलासो (कैलास) कइरव, केरव (कैरवम्), वइसवणो, वेसवणो (वैश्रवण), वइसपाअणो, वेसपाअणो (वैशम्पायन), वइआलिओ, वेआलिओ (वैतालिक), वइसिओ, वेसिओ (वैशिक), चइत्तो, चेत्तो (चैत्र)

(९१) शब्द के आदि औकार का ओकार आदेश होता है। जैसे—कोमुई (कौमुदी), जोव्वण (यौवनम्) कोत्थुहो (कौस्तुभ), सोहग्ग (सौभाग्यम्), दोहग्ग (दौर्भाग्यम्) गोदमो (गौतम), कोसबी (कौशाम्बी), कोचो (क्रौञ्च), कोसिओ (कौशिक)

(९२) सौन्दर्यादि‡ गण के शब्दो मे औत् के स्थान मे उत्

---

* प्राकृतमञ्जरी के अनुसार दैत्यादि गण मे निम्नलिखित शब्द परिगृहीत है—

दैत्य स्वैर चैत्य कैटभवैदेहकौ च वैशाख,
वैशिकभैरववैशम्पायनवैदेशिकाश्च दैत्यादि ।

† वैरादिगण मे वैर, कैतव, चैत्र कैलास, दैव और भैरव गृहीत है। शौरसेनी मे दैव शब्द मे यह नियम लागू नहीं होता।

‡ कल्पलतिका के अनुसार सौन्दर्यादिगण के शब्द यो है—

सौन्दर्यं शौण्डिको दौवारिक शौण्डोपरिष्टकम्।

आदेश होता है। जैसे—सुन्देर, सुन्दरिअ (सौन्दर्यम्) सुडो (शौण्ड), दुवारिओ (दौवारिक), मुञ्जाय (अ)णो (मौञ्जायन), सुगन्धत्तण (सौगन्ध्यम्), पुलोमी (पौलोमी), सुवण्णिओ (सौवर्णिक)

(९३) कौक्षेयक और पौरादि† गण के शब्दो मे औत् के स्थान मे अउ आदेश होता है। जैसे—कउक्खेअओ, कुक्खेअओ (कौक्षेयक), पउरो (पौर), कउरओ(वो) (कौरव), पउरिस (पौरुषम्), सउह (सौधम्), गउडो (गौड), मउली (मौलि), मउण (मौनम्), सउरा (सौरा), कउला (कौला)।

विशेष—कौशल शब्द के विषय मे दो रूप होते है—

कोसलो, कउसलो (कौशलम्)

(९४) अव और अप उपसर्गों के आदि स्वर का आगेवाले सस्वर व्यञ्जन के साथ 'ओत्' विकल्प से होता है। जैसे—ओआसो, अवआसो (अवकाश), ओसरइ,, अवसरइ (अपसरति), ओहणं, अअहण (अपघनम्)।

विशेष—उक्त नियम कहीं पर नही भी लागू होता है।

जैसे—अवगअ (अपगतम्), अवसदो (अपसद)

कौक्षेय पौरुष पौलोमिमौञ्जदौस्याधिकादय ॥

प्राकृतमञ्जरी के अनुसार—

सौन्दर्यशौण्डकौक्षेयास्तथा मौञ्जायनो ऽपि च।
तथा दौवारिकश्चेति सौन्दर्यादिरय गण ॥

कल्पलतिका के अनुसार पौरादि निम्नलिखित हैं—

पौरपौरुषशैलानि गौडक्षौरितकौरवा ।
कोशलमौलिबौचित्य पौराकृतिगणा मता ॥

(९५) आगेवाले सस्वर व्यञ्जन के साथ उप के आदि स्वर के स्थान मे ऊत् और ओत् आदेश विकल्प होते है। जैसे— ऊहसिअ ओहसिअ (उपहसितम्), ऊआसो, ओआसो (उपवास)।

❀ प्रथम अध्याय समाप्त ❀



द्वितीय अध्याय

(१) स्वर से पर मे रहनेवाले, अनादिभूत तथा दूसरे किसी व्यञ्जन से सयोगरहित क, ग, च, ज, त, द, प, य और व अक्षरो का प्राय लुक् होता है। **कलोप जैसे**—लोओ, सअढ,* मउलो, णउलो, णोआ (लोक, शकटम्, मुकुलम्, नकुल, नौका), **गलोप जैसे**—णओ,† णअर‡, मअङ्को§, साअरो, भाइरही (नगो, नगरम्, मृगाङ्क, सागर, भागीरथी), **चलोप जैसे**—सई, कअग्गहो,() वअण, सूई, रोअदि, उइद, सूअअ (शची, कचग्रह, वचनम्, सूची, रोचते, उचितम्, सूचकम्), **जलोप जैसे**—रअओ, पआवई,[] गओ, रअद (रजक, प्रजापति, गज, रजतम्), **तलोप जैसे**—विआण, किअ, रसा अल,)(रअण (वितानम्, कृतम्, रसातलम्, रत्नम्), **दलोप जैसे**—

---

* **सयढ** पाठान्तर हेम० व्या० मे है।

† हेम० व्या० मे 'नओ' पाठान्तर है।

‡ हेम० व्या० मे 'नयर' पाठान्तर है।

§ हेम० व्या० मे 'मयङ्को' पा०।

() हेम० व्या० 'कयग्गहो' पा०।

[] हेम० व्या० 'पयावई' पा०।

)(हेम० व्या० 'रसा यल' पा०।

जइ, नई, गआ*, मअणो†, वअण, मओ (यदि, नदी, गदा, मदन, वदनम् मद), **पलोप जैसे**—रिऊ, सुउरिसो, कई, विउलं (रिपु, सुपुरुष, कपि, विपुलम्), **यलोप जैसे**—दआलू‡, णअण△, विओओ, वाउणा (दयालु, नयनम्, वियोग वायुना), **वलोप जैसे**—जीओ, दिअहो, लाअण्ण,)(विओहो, वडआ-णलो§ (जीव, दिवस, लावण्यम्, विबोध, वडवानल)

विशेष—(क) **प्रायः कहने से** कहीं-कहीं लोप नहीं होता है। जैसे–सुकुसुम, प्रयाग-जल, पियगमण, सुगदो, अगुरू,() सचाव, विजण, अतुल, सुतर,[] विदुरो, आदरो, अपारो, अजसो देवो, दाणवो सबहुमान इत्यादि।

(ख) **स्वर से पर में नहीं रहने के कारण** सकरो, सगमो, णक्कचरो,][धणजओ,

---

* हेम० व्या० 'गया' पा०।

† हेम० व्या० 'मयणो' पा०।

‡ हेम० व्या 'दयालू' पा०।

△ 'नयण पा० हेम० व्या०।

)('लायण्ण' पा० हेम० व्या०।

§ 'वलयाणलो' पा० हेम० व्या०।

() 'अगरू' पा० हेम० व्या०।

[] 'सुतार' पा० हेम० व्या०।

][नक्कचरो पा० हेम० व्या०। नत्तचरो भी पाठ मिलता है।

पुरदरो और सवरो इत्यादि मे लोप नही होता ।

(ग) अक्को, वग्गो, अग्घो, मग्गो, आदि मे **सयुक्त होने के कारण** लोप नही होता है ।

(घ) कालो, गन्धो, चोरो, जारो, तरू, दवो पाव आदि मे **आद्यत्तर होने के कारण** लोप नही होता है ।

(ङ) **समास मे** उत्तर पद के आदि का लोप होता और नही भी होता है । जैसे—सह अरो, सहचरो, जलअरो, जलचरो, सह आरो सहकारो आदि ।

(च) कुछ लोग किन्ही प्रयोगो मे क का लोप नही कर के ग आदेश करते है जैसे—एगत्तरा (एकत्वम्), एगो (एक), अमुगो (अमुक), आगारो (आकार) आगरिसो (आकर्ष)

(छ) कही आदि के कादि वर्णों का भी लोप, कही च का ज और कही आर्ष मे च का ट आदेश* भी होते देखे जाते है ।

---

* **शौरसेनी मे** पताका, व्यापृत, और गर्भित को छोड़ कर अन्य त के स्थान मे द आदेश होता है । पताका का पडाआ, व्यापृत का व्वावडो और गर्भित का गब्भिरा मे रूप होते है । भरत के तकार का धकार होकर भरधो रूप होता है । इसी प्रकार द का प्राय लोप नहीं

आदि के कादि के लोप जैसे—स उण (स पुन), सो अ (स च,) इन्ध (चिह्नम्), च का ज जैसे—पिसाजी (पिशाची), आर्ष मे च का ट जैसे—आउण्टणं (आकुञ्चनम्)

विशेष—जहाँ नियम २१ के अनुसार कादि वर्णों के लोप हो चुकने पर अ अथवा आ अवशिष्ट हों, वहाँ लघुप्रयत्नतर यकार का उच्चारण जानना चाहिए।

(२) अवर्ण से पर मे अनादि प का लुक् नही होता है। जैसे—सवहो (शपथ), सावो (शाप)

(३) स्वर से पर मे होनेवाले असयुक्त तथा अनादि ख, घ, थ, ध और भ अक्षरो के स्थान मे प्राय ह आदेश होता है।

होता। जैसे—वदण,सौदामिणी। प्राय कहने से हिअअ मे लोप हो जाता है। मागधी मे छ के स्थान मे श्च आदेश होता है। ज घ के स्थान मे य होता है। य का लोप नहीं होता। पैशाची मे त और द के स्थान मे त होता है। हृदय का हितय रूप होता है। अपभ्र श मे स्वर से परे अनादि और असयुक्त क, ख, त, थ, प और फ के स्थान मे क्रमश ग, घ, द, ध, व और भ ये ही आदेश होते है। पैशाची मे वर्ग के तृतीय और चतुर्थ अक्षरों के स्थान मे क्रमश वर्ग के प्रथम और द्वितीय अक्षर होते है। जैसे नगर का नकर तथा भगवती का फकवती। प्रसङ्ग उपस्थित हो जाने के कारण यहाँ इतनी बाते लिखी गइ।

ख का ह जैसे—महो, मुह, मेहला, लिहइ, पमुहेण, सही आलिहिदा (मख, मुखम्, मेखला, लिखति, प्रमुखेण, सखी, आलिखिता), **घ का ह जैसे**—मेहो जहण, माहो, लाहअं, लहु (मेघ, जघनम्, माघ लाघनम्, लघु), **थ का ह जैसे**—नाहो*, गाहा, मिहुण, सनहो कहेहि, कह, मणोरहो (नाथ, गाथा, मिथुनम्, शपथ, कथय, कथम्, मनोरथ), **ध का ह जैसे**—साहू, राहा, वाहो, बहिरो, वाहइ, इदहणू, अहिअ, माहवीलदा, महुअरो (साधु, राधा, बाधा, बधिर, बाधते, इन्द्रधनु, अधिकम्, माधवीलता, मधुकर, भ का ह† जैसे—सहा, सहावो, णह, सोहइ, सोहण, आहरण, दुल्लहो (सभा, स्वभाव, नभ, शोभते, शोभनम्, आभरणम्, दुर्लभ)

विशेष—(क) **स्वर से पर मे नही रहने से**—सखो (शङ्ख) सघो (सङ्घ) और कथा (कन्था) मे ह आदेश नही हुआ।

(ख **सयुक्त होने से**—लुम्पइ (लुम्पति) और अक्खइ (अक्षति) मे ह आदेश नही हुआ।

(ग) **आदि में होने के कारण** गज्जतो (गर्जयन्) खे और गज्जइ घणो (गर्जयतिघण) मे आदेश नही हुआ।

---

* पृथिवी और प्रथम को छोड़कर शौरसेनी मे थ का प्राय घ होता है। जैसे—जधा (यथा), तधा (तथा) और अण्णधा (अन्यथा)। पृथिवी के लिए पहुवी और प्रथम के लिए पढुम होते है।

† शौरसेनी मे ध द्व द के समान और भ द्व व के समान उच्चारण भर होता है लेख मे तो ध और भ ही रहते हैं।

(घ) **प्रायः कथन के बल से** पखलो (प्रखल), पलबघणो (प्रलम्बघ्न), अधीरो (अधीर), अधण्णो (अधन्य), जिणधम्मो (जिनधर्म) इत्यादि मे ह आदेश नही होता।

(४) स्वर से पर मे रहनेवाले असयुक्त और अनादि ट ठ और ड के स्थान मे क्रमश' ड ढ और ल आदेश होते है। ट का ड जैसे—णडो*, भडो, विडवो, घडो, घडइ (नट, भट, विटप, घट, घटते), ठ का ढ जैसे'—मढो, सढो कमढो, कुढारो (मठ, शठ, कमठ, कुठार), ड का ल जैसे'—वलवा-मुह, गरुलो, कीलइ, तलाओ, बलही (बढवामुखम्, गरुड क्रीडति, तडाग, वलही)

विशेष—(क) स्वर से पर मे ऐसा कहने से घटा (घण्टा) वैकुठो (वैकुण्ठ), मोंड (मुण्डम्) एव कोंड (कुण्डम्) मे ट, ठ और ड के स्थान मे क्रमश ड, ढ और ल नही हुए।

(ख) सयुक्त रहने के कारण खट्टा, चिट्ठइ (तिष्ठति) खड्गो के ट, ठ और ड के स्थान मे ड, ढ और ल नही हुए।

(ग) अनादि नही होने से टक, ठाई (स्थायी) और डिंभो मे ट, ठ ड के ड, ढ, ल नही हुए।

(घ) कही पर ट का ड नहीं होता और ण्यन्त पट धातु मे ट का ल आदेश विकल्प से होता है। अटइ (अटति) में डादेश का अभाव और फालेइ, फाडेइ (पाटयति) मे ट के स्थान मे ल और ड पर्याय से हुए।

(ड) ड का ल आदेश प्रायिक है, अत आगेवाले शब्दों मे विकल्प से ल होता हे । वलिस, वडिस, दालिम, दाडिम, गुलो, गुडो, णाली, नाडी, णल, णड । प्राकृत-प्रकाशकार दाडिम, वडिस, निविड मे ल आदेश नही मानते है। कल्प लतिका के मत से केवल पीडित और गुड मे वैकल्पिक लत्व होता है । वस्तुत निविड, पीडिअ और णीड मे ल का अभाव ही उचित है ।

(५) 'प्रति' उपसर्ग मे तकार के स्थान मे प्राय डकार आदेश होता है। जैसे —पडिवण्ण (प्रतिपन्नम्), पडिसरो (प्रतिसर), पडिमा (प्रतिमा)

विशेष—'प्राय' कहने से आगे के उदाहरणो मे डकार विधान वाला नियम नही लागू हुआ । पइव (प्रतीपम्), सपई (सप्रति), पइट्ठाण (प्रति-ष्ठानम्), पइट्ठा (प्रतिष्ठा), पइण्णा (प्रतिज्ञा)

(६) ऋत्वादि गण* के शब्दो मे तकार का दकार होता है। जैसे —उदू (ऋतु), रअद (रजतम्), आअदो (आगत), णिव्वुदी (निर्वृति), आउदी (आवृति), सवुदी (सवृति), सुइदी (सुकृति), आइदी (आकृति), हदो (हत), सजदो

---

* ऋत्वादिगण के शब्द इस प्रकार उल्लिखित हैं —

ऋतु किरातो रजतञ्च तात सुसङ्गत सयतसाम्प्रतञ्च
सुसस्कृतिप्रीतिसमानशब्दास्तथाकृतिर्निर्वृतितुल्यमेतत् ।
उपसर्गसमायुक्ते कृतिवृती वृतागतौ ।
ऋत्वादिगणने नेया अन्ये शिष्टानुसारत ॥

(सयत), विउद (विवृतम्), सजादो (सयात), सपदि (सप्रति), पडिवद्दी (प्रतिपत्ति)।

विशेष—उक्त नियम प्राकृतप्रकाश (२ ७) के ऋत्वादिषु तो द सूत्र के अनुसार बनाया गया है। किन्तु साधारण प्राकृत के लिए इस नियम को नही मानते। वे कहते हैं कि—'स तु शौरसेनी-मागधी-विषय एव दृश्यत इति नोच्यते।' अर्थात् यत यह सूत्र शौरसेनी और मागधी भाषाओ मे ही लागू होता है अत हम इसका परित्याग करते है।

अत साधारण प्राकृत मे उक्त गण मे तकार का दकार आदेश नही होता। रूप इस प्रकार के होगे—उऊ (ऋतु), रअअ (रजतम्), एअ (एतम्), गओ (गत), सपअ (साम्प्रतम्), जओ (यत), तओ (तन), कअ (कृतम्), हआसो (हताश), ताओ (तात)

(७) दश और दह, प्रदीपि और दीप धातुओ के दकार के स्थान मे क्रमश ड, ल और वैकल्पिक ध आदेश होते है। जैसे —

प्राकृत		सस्कृत
डसइ	(द=ड)	दशति
डहइ	(द=ड)	दहति
पलीवेइ	(द=ल)	प्रदीपयति
पलित्त	(द=ल)	प्रदीप्तम्
धिप्पइ, दिप्पइ	(वैकल्पिक ध)	दीप्यति

(८) स्वर से पर मे रहनेवाले असयुक्त और अनादि* न का ण आदेश होता है। किन्तु आदि मे वर्तमान असयुक्त न का विकल्प से ण होता है। स्वर से पर अनादि और असयुक्त न का ण जैसे॰—सअण (शयनम्), कणअ (कनकम्), वअण (वचनम्), माणुसो (मानुष)। आदि मे असयुक्त न का वैकल्पिक ण जैसे —णरो, नरो (नर), णई, नई (नदी)

विशेष—आदि मे वर्तमान सयुक्त न का वैकल्पिक णत्व नही होता। जैसे॰—न्याय

(९) स्वर से पर मे रहनेवाले असयुक्त और अनादि† प के स्थान मे प्राय व आदेश हो जाता है। जैसे —सवहो (शपथ) सावो (शाप), उवसग्गो (उपसर्ग॰), पईवो (प्रदीप), कासवो (काश्यप), पाव (पापम्), उवमा (उपमा), महिवालो (महीपाल), गोवेइ (गोपयति), कलावो (कलाप), तवइ (तपति), कवोलो (कपोल॰)

विशेष—(क) स्वर से पर मे रहनेवाले कहने से कम्पइ (कम्पते) मे व आदेश नही हुआ।

(ख) असंयुक्त कहने से अप्पमत्तो (अप्रमत्त) मे व आदेश नही हुआ।

---

* प्राकृत प्रकाश २ ४ सर्वत्र (आदि और अनादि मे) न का ण मानता है। ऊपर का नियम ८ हेमचन्द्र के अनुसार है। पैशाची मे णकार का नकार हो जाता है।

† शौरसेनी मे अपूर्व शब्द के स्थान मे 'अवरूव' और अउव्व ये दो रूप होते हैं।

विशेष—उक्त नियम मे विस के स्त्रीलिङ्ग रूप विसिनी का उल्लेख हुआ है। अत विस (विसम्) मे यह नियम लागू नही हुआ।

(१४) पद के आदि य का ज* आदेश होता है। जैसे —जसो (यश), जमो (यम), जाइ (याति)

विशेष—(क) पद के आदि मे न होने के कारण अवअवो (अवयव) मे नियम नही लगा।

(ख) उपसर्गयुक्त हो जाने पर अनादि य का भी ज आदेश होता है। जैसे —सजमो (सयम), सजोओ (सयोग), अवजसो (अपयश)।

(ग) कल्पलतिका के मत से सामान्यत' उत्तर पदस्थ य का भी ज आदेश होता है। जैसे —गाढ-जो०नणा (गाढयौवना), अजोग्गो (अयोग्य)

(घ) कभी-कभी आदि य का लोप भी हो जाता है। जैसे —अहाजाअ (यथाजातम्)

(१५) तीय एव कृत् प्रत्ययो के यकार के स्थान मे द्विरुक्त ज (ज्ज) आदेश विकल्प से होता है। जैसे —

प्राकृत	सस्कृत
दीज्जी, दीओ	द्वितीय
करणिज्ज, करणीअ	करणीयम्
रमणिज्ज, रमणीअ	रमणीयम्
पेज्ज, पेअ	पेयम्

* मागधी मे य का ज आदेश नहीं होता है।

(१६) युष्मद् शब्द के य के स्थान मे त आदेश होता है। जैसे —तुम्हारिसो (युष्मादृश)

(१७) छाया शब्द मे यकार के स्थान मे हकार आदेश होता है। जैसे —छाहा (छाया)

(१८) हरिद्रादि* गण के शब्दों मे असयुक्त र के स्थान मे ल आदेश होता है। जैसे —हलद्दा (हरिद्रा), दलिद्दो (दरिद्र)

✓(१९) सस्कृत वर्णमाला के श और ष के स्थान मे प्राकृत मे स आदेश होता है। जैसे —कुसो (कुश), सेसो (शेष)

विशेष—वस्तुस्थिति तो यह है कि प्राकृत वर्णमाला मे श और ष वर्णों के लिए कोई स्थान ही नही है।

✓(२०) अनुस्वार से पर मे रहनेवाले ह के स्थान मे घ आदेश होता है। जैसे —सिघो, सीहो (सिह), सघारो, सहारो (सहार)

विशेष—कहीं कही अनुस्वार से पर मे नही रहने पर भी ह का घ होता देखा जाता है। जैसे —दाघो (दाह)

द्वितीय अध्याय समाप्त

---

* कल्पलतिका के मत से हरिद्रादि गण यों है —

हरिद्रामुखराङ्गारसुकुमारयुधिष्ठिरा ।
करुणाच्चरणश्चैव परिखापरिघावपि ॥
किरातश्चाङ्गुरी चैव दरिद्रश्चैवमादय ।

आदि शब्द से पारिभद्र, जठर, निष्ठुर और अपद्वार शब्दों का इस गण मे सग्रह किया जाता है। चरण शब्द शरीराङ्गवाची गृहीत है। इसलिए 'पइस्स चरण' मे नियम नहीं लगता। मागधी और पैशाची मे र के स्थान मे ल होता है।

प्राकृत व्याकरण

तृतीय अध्याय

(१) क, ग, ट, ड, त, द, प, श, ष और स व्यञ्जन वर्ण जब किसी सयोग के प्रथम अक्षर हो तो उनका लुक् हो जाता है। और अनादि मे वर्तमान शेष वर्णो का द्वित्व होता है। जैसे :—

प्राकृत			संस्कृत
भुत्त	[कलुक्	, तद्वित्व]	भुक्तम्
सित्थ	[कलुक्	, थद्वित्व]	सिक्थम्
भत्त	[कलुक्	, तद्वित्व]	भक्तम्
मुत्त	[कलुक्	, तद्वित्व]	मुक्तम्
दुद्ध	[गलुक्	, धद्वित्व]	दुग्धम्
मुद्ध	[गलुक्	, धद्वित्व]	मुग्धम्
सिणिद्धो	[गलुक्	, धद्वित्व]	स्निग्धम्
सप्पओ	[टलुक्	, पद्वित्व]	षट्पद
खग्गो	[डलुक्	, गद्वित्व]	खड्ग
सज्जो	[डलुक्	, जद्वित्व]	षड्ज
उप्पल	[तलुक्	, पद्वित्व]	उत्पलम्
उप्पाओ	[तलुक्	, पद्वित्व]	उत्पात
मुग्गो	[दलुक्	, गद्वित्व]	मुद्ग
मुग्गरो	[दलुक्	, गद्वित्व]	मुद्गर
मग्गू	[दलुक्	, गद्वित्व]	मद्गु

सुत्त	[पलुक् ,	तद्वित्व]	सुप्तम्
पज्जत्त	[पलुक् ,	तद्वित्व]	पर्याप्तम्
गुत्तो	[पलुक् ,	तद्वित्व]	गुप्त
निच्चलो	[शलुक् ,	चद्वित्व]	निश्चल
चुअइ	[शलुक् ,	द्वित्वाभाव*]	श्च्योतति
गोट्ठी	[षलुक् ,	ठद्वित्व]	गोष्ठी
निट्ठुरो	[षलुक् ,	ठद्वित्व]	निष्ठुर
खलिअ	[सलुक् ,	ख का द्वित्वाभाव†]	स्खलितम्
णेहो	[सलुक् ,	ण का द्वित्वाभाव‡]	स्नेह

(२) म, न और य ये व्यञ्जन यदि सयुक्त के अन्तिम अक्षर हो तो उनका लुक् होता है और अनादि मे वर्तमान शेष वर्णों का द्वित्व हो जाता है। जैसे—

प्राकृत			संस्कृत
जुग्ग	[मलुक्,	गद्वित्व]	युग्मम्
रस्सी	[मलुक्,	सद्वित्व]	रश्मि
सरो	[मलुक्,	द्वित्वाभाव†]	स्मर
नग्गो	[नलुक्,	गद्वित्व]	नग्न
भग्गो	[नलुक्,	गद्वित्व]	भग्न
लग्ग	[नलुक्,	गद्वित्व]	लग्नम्
सोम्मो	[यलुक्,	मद्वित्व]	सौम्य

(३) ल, व, र ये व्यञ्जन सयुक्त के आद्यक्षर हों अथवा अन्त्याक्षर चन्द्र शब्द को छोडकर सर्वत्र (सयुक्त के आदि

* † ‡ आदि मे होने से चुअइ, खलिअ और णेहो मे द्वित्व नहीं हुए।

† आदि मे होने से सरो के स का द्वित्व नहीं हुआ।

और अन्त मे) उक्त व्यञ्जनो का लुक् होता है। और अनादि में स्थित शेष वर्णों का द्वित्व होता है। जैसे—

प्राकृत			संस्कृत
उक्का	[सयुक्तादि ललुक्,	कद्वित्व]	उल्का
वक्कल	[सयुक्तादि ललुक्,	कद्वित्व]	वल्कलम्
सण्ह	[सयुक्तान्त्य ललुक्,	द्वित्वाभाव]	श्लक्ष्णम्
विक्कवो	[सयुक्तन्त्य ललुक्,	कद्वित्व]	विक्लव
सद्दो	[सयुक्तादि वलुक्,	दद्वित्व]	शब्द
अद्दो	[सयुक्तादि वलुक्,	दद्वित्व]	अब्द
पिक्क	[सयुक्तान्त्य वलुक्,	कद्वित्व]	पक्वम्
धत्थ	[सयुक्तान्त्य वलुक्,	द्वित्वाभाव*]	ध्वस्तम्
अक्को	[सयुक्तादि रलुक्,	कद्वित्व]	अर्क
वग्गो	[सयुक्तादि रलुक्,	गद्वित्व]	वर्ग
चक्क	[सयुक्तान्त्य रलुक्'	कद्वित्व]	चक्र
गहो	[सयुक्तान्त्य रलुक ,	द्वित्वाभाव*]	ग्रह
रत्ती	[सयुक्तान्त्य रलुक्,	तद्वित्व]	रात्रि

विशेष—(क) चन्द्र शब्द का चन्द्रो यही रूप होता है। किन्तु हृषीकेश भट्टाचार्य अपने व्याकरण के पृष्ठ ५६ की पादटिप्पणी मे लिखते है कि We find the form चदो in many Manus cripts

(ख) द्व इत्यादि मे ,जहाँ दोनो व्यञ्जनों का लुक् प्राप्त हो, वहाँ प्राचीन प्राकृत आचार्यों के रूप दर्शन से कही सयुक्त के आदि वर्ण कहीं अन्त्य वर्ण और कही बारी-बारी से दोनों वर्णों के लुक

होते है। सयुक्तादिवर्ण का लुक् जैसे —उव्विग्गो (उद्विग्न) विउणो (द्विगुण), कम्मस (कल्मषम्), सव्व (सर्वम्), सयुक्तान्त्य वर्ण का लुक् जैसे —कव्व (काव्यम्), कुल्ला (कुल्या) मल्ल (माल्यम्), दिओ (द्विप), दुआई (द्विजाति)। बारी बारी से आद्यन्त वर्ण लुक् जैसे —वार, दार (द्वारम्)

(४) द्र के रेफ का लुक विकल्प से होता है। जैसे —दोहो, द्रोहो (द्रोह), रुद्दो, रुद्रो (रुद्र), भद्द भद्र (भद्रम्), समुद्दो, समुद्रो (समुद्र), द्रहो, दहो* (ह्रद)

(५) 'ज्ञा' धातु सम्बन्धी ञ का लुक् विकल्प से होता है एव अनादि ज का द्वित्व होता है। जैसे —सव्वज्जो, सव्वण्णू (सर्वज्ञ), अप्पज्जो, अप्पण्णू (अल्पज्ञ), अहिज्जो, अहिण्णू (अभिज्ञ), जाणं†, णाण (ज्ञानम्), दइवज्जो, दइवण्णू (दैवज्ञ), इङ्गिअज्जो, इङ्गिअण्णू (इङ्गितज्ञ), मणोज्ज, मणोण्ण (मनोज्ञम्), पज्जा, पण्णा (प्रज्ञा), अज्जा, आणा‡ (आज्ञा), सजा§, सण्णा (सज्ञा)

---

* ह्रद शब्द की स्थितिपरिवृत्ति (इसके लिए देखिए हेम० २ १२०) के बाद द्रह रूप होता है। यहाँ इसी द्रह मे उक्त नियम (३ ४) लग जाने से दहो और द्रहो रूप हुए। कुछ लोग र का लोप करना नहीं चाहते और कुछ लोग द्रह को सस्कृत मानते हैं।

† आदि मे होने से द्वित्व नहीं हुआ।

‡ किसी किसी पुस्तक मे 'अण्णा' पाठ मिलता है।

§ स्वर से पर मे नही होने से द्वित्व नहीं हुआ।

विशेष—कही-कही यह नियम नही लागू होता है। जैसे - विण्णाण (विज्ञानम्)*

(६) अनादि एकाकी व्यञ्जन, जो कि पूर्वोक्त नियमों से सयुक्त व्यञ्जन के लुक् होने पर अवशिष्ट रहता है द्वित्व† को प्राप्त करता है। जैसे —

प्राकृत		सस्कृत
दिट्ठी	[षलुक् , ठद्वित्व]	दृष्टि
हत्थो	[स लुक् , थ द्वित्व]	हस्त

(७) वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ वर्णों के द्वित्व का प्रसङ्ग हो तो द्वितीय वर्ण के ऊपर उसी वर्ग के प्रथम और चतुर्थ के ऊपर उसी वर्ग के तृतीय अक्षर होते है। जैसे —वक्खाण (व्याख्यानम्), अग्घो (अर्घ)

(८) दीर्घ स्वर एव अनुस्वार से पर मे रहनेवाले सयुक्तशेष व्यञ्जन (ऊपर से नियमो से सयुक्ताक्षरो मे व्यञ्जन के लुक् हो जाने पर अवशिष्ट व्यञ्जन) का द्वित्व नही होता है‡। जैसे —

---

* शौरसेनी मे ज्ञ के स्थान मे ञ होता है। मागधी और पैशाची मे ज्ञ के स्थान मे ञ्ञ होता है। पैशाची मे राजन् शब्द सम्बन्धी ज्ञ चिञ् विकल्प से होता है। शौरसेनी, मागधी और पैशाची मे न्य और ण्य के स्थान मे भी ञ्ञ होता है।

† हेमचन्द्र ने 'अनादौ शेषादेशयोर्द्वित्वम्' ८ ८६ सूत्र बनाकर आदेश का भी द्वित्व माना है। जैसे —उक्को, जक्खो, रग्गो, किच्ची, रुप्पी। कहीं पर यह नियम नहीं लगता है। जैसे—कसिणो। अनादि कहने से खलिअ, थेरो, खम्भो मे नियम नहीं लगा।

‡ यहाँ दीर्घ और अनुस्वार नियमवश सम्पन्न (लाक्षणिक) और स्वाभाविक (अलाक्षणिक) दोनों गृहीत है। लाक्षणिक दीर्घ —छूढो,

ईसरो (ईश्वर), लास (लास्यम्), सकतो (सक्रान्त), सञ्झा (सध्या)

(९) रेफ† और हकार का द्वित्व नही होता है। जैसे —सुदेर (सौन्दर्यम्), वम्हचेर (ब्रह्मचर्यम्), धीर (धैर्यम्), विहलो (विह्वल), कहावणो (कार्षापण)

(१०) वर्णों के द्वित्व करानेवाले पूर्वोक्त नियम समस्त (समासवाले) पदो मे विकल्प से प्रवृत्त होते है। तात्पर्य यह है कि समास मे शेष और आदेश व्यञ्जन का द्वित्व विकल्प से होता है। जैसे —नइ ग्गामो, नइ-गामो (नदी ग्राम), कुसुम-प्पयरो, कुसुम-पयरो (कुसुम प्रकर), देव त्थुई, देव-थुई (देव-स्तुति) इत्यादि।

विशेष—कभी-कभी पूर्वोक्त द्वित्वविधायक नियमों की विषयता नही होने पर भी समास मे वैकल्पिक द्वित्व होता देखा जाता है। जैसे —पम्मुक्क, पमुक्क (प्रमुक्तम्), तेल्लोक्क, तेलोक्क (त्रैलोक्यम्) इत्यादि।

(११) तैलादि* गण के शब्दो मे प्राचीन प्राकृत आचार्यों

नीसासो, फासो। अलाक्षणिक दीर्घ —पास, सीस। लाक्षणिक अनुस्वार —तस अलाक्षणिक अनुस्वार —सञ्झा, विंझो। यह नियम आदेश मे भी लगता है।

† रेफ शेष नहीं मिलता है। आदेश ही मिलता है। देखो नियम ३ ३

* प्राकृत प्रकाश मे तैलादि गण के बदले नीडादि गण से काम लिया गया है। कल्पलतिका मे नीडादि गण यों है —

नीड व्याहृतमण्डूकस्रातासि प्रेमयौवने।
ऋजु स्थूल तथा तैल त्रैलोक्य च गणो यथा॥

के निर्णयानुसार कही अन्त्य और कही अनन्त्य व्यञ्जनों का द्वित्व होता है। जैसे —तेल्ल (तैलम्), मडुक्को (मण्डूक), उज्जू (ऋजु), सोत्त (स्रोत), पेम्म (प्रेम) विड्डा (व्रीडा), जोव्वण (यौवनम्)

(१२) सेवादि* गण के शब्दो मे प्राचीन प्राकृत आचार्यों के निर्णयानुसार कही अन्त्य और कही अनन्त्य (किन्तु अनादि) व्यञ्जनो का विकल्प से द्वित्व होता है। जैसे —सेव्वा, सेवा (सेवा), विहित्तो, विहिओ (विहित), कोउहल्ल, कोउहल (कौतूहलम्), वाउल्लो, वाउलो (व्याकुल), नेड्ड, नीड, नेड (नीडम्), नक्खा, नहा (नखा), निहित्तो, निहिओ (निहित), वाहित्तो, वाहिओ (व्याहृत), माउक्क माउअ (मृदुकम्), एक्को, एओ (एक), थुल्लो, थोरो (स्थूल) हुत्त, हूअ (हुतम्), दइव्व, दइव (दैवम्), तुण्हिक्को, तुण्हिओ (तूष्णीक), मुक्को, मूओ (मूक), खण्णू, खाणू (स्थाणु), थिण्ण, थीण (स्त्यानम्), अम्हक्केर, अम्हकेर (अस्मदीयम्) इत्यादि।

(१३) त्त के स्थान मे ख आदेश होता है। किन्तु कुछ स्थलो मे छ और झ आदेश भी होते है। ख आदेश जैसे —

---

* कल्पलतिका मे सेवादि गण यो है —

सेवा कौतूहल दैव विहित मखजानुनी।
पिवादय सवा (?) शब्दा एतदाद्या यथार्थका ॥
त्रैलोक्य कर्णिकारश्च वेश्या भूर्जश्च दु खितम्।
रात्रिविश्वासनिश्वासा मनोऽस्त्रेश्वर रश्मय ॥
दीर्घैकशिवतूष्णीकमित्रपुष्पासि दुर्लभा।
दुष्करो निष्कृप कर्मकरेष्वासपरस्परम् ॥
नायकाद्यास्तथा शब्दा सेवादिगणसम्मता।

खओ (क्षय), लखण (लक्षणम्), छ और ख आदेश जैसे—छीण, खीण (क्षीणम्), झ और ख आदेश जैसे—झिज्जइ, खिद्यति (क्षिद्यति)

(१४) अक्ष्यादि* गण के शब्दो मे क्ष के स्थान मे ख न होकर छ आदेश होता है। जैसे—अच्छी (अक्षि), उच्छू (इक्षु)

विशेष—स्थगित शब्द के स्थ के स्थान मे भी उक्त नियम से छ आदेश हो जाता है। जैसे—छइअ (स्थगितम्)

(१५) उत्सव अर्थ के वाचक क्षण शब्द मे क्ष के स्थान मे छ आदेश होता है। **उत्सव अर्थ मे जैसे**—छणो, **समय अर्थ में जैसे**—खणो (क्षण)

(१६) सयुक्त क्म और ड्म के स्थान मे प आदेश होता है। **क्म मे जैसे**—रुप्प, रुप्पिणी (रुक्मम्, रुक्मिणी)। **ड्म में जैसे**—कुप्पल (कुड्मलम्)

विशेष—कही-कही क्म के लिए च्म आदेश भी देखा जाता है। जैसे—रुच्मी (रुक्मी)

(१७) ष्क और स्क के स्थान मे ख आदेश होता है, यदि उन सयुक्ताक्षरो से घटित शब्द द्वारा किसी नाम (सज्ञा) की प्रतीति होती हो। **ष्क का ख जैसे**—पोक्खर(पुष्करम्),पोक्ख-

---

* कल्पलतिका के अनुसार अक्ष्यादि गण यों हैं—

अक्ष्याक्षिचक्षुरक्षुण्णक्षार उत्क्षिप्तमक्षिके ।
दक्षो वक्ष सदृक्षोऽक्ष क्षेत्रक्षीरेक्षुकुक्षय ॥
क्षुधा चेत्यादय शब्दा अक्ष्यादिगणसम्मता ।

रिणी (पुष्करिणी), निक्ख (निष्क्म्) **स्क का ख जैसे**— खधो (स्कन्ध) खधावारो (स्कन्धावार)

विशेष—संज्ञा नहीं होने से दुक्कर (दुष्करम्) निक्काम्म (निष्काम्यम्) और सक्कअ (सस्कृतम्) मे उक्त नियम लागू नही हुआ ।

(१८) उष्ट्र, इष्ट और सदष्ट शब्द के ष्ट को छोडकर अन्य ष्ट के स्थान मे ठ आदेश होता है। जैसे —लट्ठी (यष्टि) मुट्ठी (मुष्टि), दिट्ठी (दृष्टि), सिट्ठी (सृष्टि), पुट्ठो (पुष्ट), कट्ठ (कष्टम्)

विशेष—उष्ट्र आदि मे ठ आदेश नही होने से उट्टो, इट्टा-चुण्ण व्व और सदट्टो रूप होते है।

(१९) चैत्य शब्द के त्य को छोडकर अन्य त्य के स्थान मे च आदेश होता है। जैसे —सच्च (सत्यम्), पच्चओ (प्रत्यय), निच्च (नित्यम्), पच्चच्छ (प्रत्यक्षम्)

विशेष—चैत्य शब्द का चइत्त रूप होता है।

(२०) कुछ स्थलो मे त्व, थ्व, द्व और ध्व के स्थान मे क्रमश च्च, च्छ, ज्ज और ज्झ आदेश होते है। **त्व का जैसे**— भोच्चा, णच्चा, सोच्चा (भुक्त्वा, ज्ञात्वा श्रुत्वा), **थ्व का जैसे**— पिच्छी (पृथ्वी), **द्व का जैसे**—विज्ज (विद्वान्), **ध्व का जैसे**—बुज्झा (बुद्ध्वा)

(२१) धूर्तादि गण के शब्दो को छोडकर अन्य र्त का ट आदेश विकल्प से होता है। जैसे —केवट्टो (कैवर्त्त), वट्टी (वर्ति), णट्टओ (नर्तक), णट्टई (नर्तकी) सवट्टिअ (सवर्तिकम्)

विशेष—धूर्तादि गण मे उक्त नियम लागू नही होता है। वुत्तो, कित्ती, वत्ता, आवत्तण, निवत्तण, पवत्तण, सवत्तण, आवत्तओ, निवत्तओ, पवत्तओ सवत्तओ, वत्तिआ, वत्तिओ, कत्तिओ, उक्कत्तिओ, कत्तरी, मुत्ती मुत्तो, मुहुत्तो।

(२२) ह्रस्व से पर मे वर्तमान थ्य, श्च, त्स और प्स के स्थान मे छ आदेश होता है। किन्तु निश्चल शब्द के श्च का छ आदेश नही होता। **थ्य का छ जैसे**:-पच्छ (पथ्यम्), पच्छा (पथ्या), मिच्छा (मिथ्या), रच्छा (रथ्या) **श्च का छ जैसे**:—पच्छिम (पश्चिमम्), अच्छेर (आश्चर्यम्), पच्छा (पश्चात्) **त्स का छ जैसे**:—उच्छाहो (उत्साह), मच्छरो (मत्सर), वच्छो (वत्स) **प्स का छ जैसे**—लिच्छइ (लिप्सति), जुगुच्छइ (जुगुप्सते), अच्छरा (अप्सरा)

विशेष—(क) ह्रस्व से पर मे नही रहने से ऊसारिओ (उत्सारित) मे उक्त नियम नही लगा।

(ख) निश्चल शब्द का णिच्चलो रूप होता है।

(ग) तथ्य का आर्ष प्राकृत रूप तत्थ और तच्च होता है।

(२३) सयुक्त द्य, य्य और र्य के स्थान मे ज आदेश होता है। **द्य का ज जैसे**:—मज्ज, अवज्ज, वेज्ज, विज्जा (मद्यम्, अवद्यम्, वेद्यम्, विद्या) **य्य का ज**

---

१ धूर्तादि गण मे धूर्त, कीर्ति, वार्ता, आवर्तन, निवर्तन, प्रवर्तन, सवर्तन, आवर्तक, निवर्तक, प्रवर्तक, सवर्तक, वर्तिका, वार्तिक, कार्तिक, उत्कर्तित, कर्तरी, मूर्ति, मूर्त और मुहूर्त शब्द परिगणित हैं।

जैसे :—जज्जो, सेज्जा (जय्य , शय्या) **र्य्य का ज जैसे :**—भज्जा, कज्ज, वज्ज, पज्जाओ, पज्जन्त (भार्य्या, कार्य्यम् , वर्य्यम् , पर्य्याय , पर्यन्तम्)

विशेष—(क) **शौरसेनी मे** र्य्य के स्थान मे य्य भी होता है ।

(ख) **पैशाची मे** र्य्य के स्थान मे कही रिय आदेश होता है ।

(२४) ध्य के स्थान मे झ एव म्न और ज्ञ के स्थान मे ण आदेश होते है । **ध्य का झ जैसे :**—झाण, उवज्झाओ, सज्झाओ, मज्झ, विज्झो, अज्झाओ (ध्यानम् , उपाध्याय , साध्याय या स्वाध्याय , मध्यम् , विन्ध्य , अध्याय) **म्न का ण जैसे :**—निण्ण, पज्जुण्णो, (निम्नम् , प्रद्युम्न) **ज्ञ का ण जैसे :**—णाण, सणा, पण्णा, विण्णाण (ज्ञानम् , सज्ञा, प्रज्ञा, विज्ञानम्)

(२५) समस्त और स्तम्ब के स्त को छोडकर अन्य स्त के स्थान मे थ आदेश होता है । जैसे —हत्थो, थोत्त, थोअ, पत्थरो, थुई (हस्त स्तोत्रम , स्तोकम् , प्रस्तर , स्तुति)

विशेष—(क) मागधी मे स्त और र्थ के स्थान मे स्त ही होता है ।

(ख) समस्त शब्द का रूप समत्त और स्तम्ब शब्द का तबो होता है ।

(२६) सयुक्त न्म के स्थान मे म आदेश होता है । जैसे —जम्मो, मम्महो (जन्म, मन्मथ)

(२७) ष्प और स्प के स्थान में फ आदेश होता है। **ष्प का फ जैसे :**—पुप्फ, सप्फ, निप्फेसो (पुष्पम्, शष्पम्, निष्पेष) **स्प का फ जैसे :**—फंदण, पडिप्फद्दी, फसो (स्पन्दनम्, प्रतिस्पर्द्धी, स्पर्श)

(२८) संयुक्त श्न, ष्ण, स्न, ह्न, ह्ण और सूक्ष्म शब्द के क्ष्म के स्थान में ण्ह आदेश होता है। **श्न का ण्ह जैसे :**—पण्हो (प्रश्न), **ष्ण का ण्ह जैसे :**—विण्हू, कण्हो उण्हीस (विष्णु, कृष्ण, उष्णीषम्) **स्न का ण्ह जैसे :**—जोण्हा, ण्हाऊ, ण्हाण, वण्ही, जण्हू (ज्योत्स्ना, स्नायु, स्नानम्, वह्नि, जह्नु) **ह्ण का ण्ह जैसे :**—पुव्वण्हो अवरण्हो (पूर्वाह्ण, अपराह्ण) **क्ष्ण का ण्ह जैसे :**—सण्ह, तिण्ह (श्लक्ष्णम्, तीक्ष्णम्) **सूक्ष्म के क्ष्म का ण्ह जैसे :**—सण्ह (सूक्ष्मम्)

(२९) संयुक्त श्म, ष्म, स्म और ह्म के स्थान में म्ह आदेश होता है। **श्म का म्ह जैसे :**—कम्हारो (काश्मीर) **ष्म का म्ह जैसे :**—गिम्हो, उम्ह (ग्रीष्म, उष्मा), **स्म का म्ह जैसे :**—अम्हारिसो, विम्हओ (अस्मादृश, विस्मय) **ह्म का म्ह जैसे :**—बम्हा, सम्हो, बम्हणो, बम्हचेर (ब्रह्मा, सुह्म, ब्राह्मण, ब्रह्मचर्यम्)

विशेष—(क) ब्रह्मचर्यम् के लिए कभी-कभी वम्भचेर रूप भी देखा जाता है।

(ख) रश्मि और स्मर में उक्त नियम लागू नहीं होता है। जैसे —रस्सी, सरो।

(३०) संयुक्त ह्य के स्थान मे म्ह आदेश होता है। जैसे —सम्भो, मम्भ, गुज्भ (सह्य , मह्यम , गुह्यम्)

(३१) संयुक्त ह्ल के स्थान मे ल्ह आदेश होता है। जैसे —कल्हार, पल्हाओ (कह्लारम् , प्रह्लाद)

(३२) जिस संयुक्त अक्षर का अन्त लकार से होता हो उसका विप्रकर्ष[1] होता है। और पूर्व के अक्षर को इत्व भी होता है। जैसे —किलिण्ण, किलिट्ठ, सिलिट्ठ, पिलुट्ठ, सिलोओ, किलेसो, मिलाण, किलिस्सइ (क्लिन्नम् , क्लिष्टम् , श्लिष्टम , प्लुष्टम् , श्लोक, क्लेश, म्लानम् क्लिश्यति)

विशेष—कमो (क्लम), पवो (प्लव) और सुक्-पक्खो (शुक्लपक्ष) मे उक्त नियम लागू नही होता।

(३३) उकारान्त किन्तु ङीप्रत्ययान्त तन्वी (तनु + ई) सदृश शब्दो मे वर्तमान संयुक्ताक्षरो का विप्रकर्ष होता है और पूर्व के अक्षर का उकार स्वर से योग होता है। जैसे —तिणुवी, तणुई (तन्वी), लहुवी, लहुई (लघ्वी), गुरुवी, गुरुई (गुर्वी), पुहुवी (पृथ्वी)

विशेष—उक्त नियम की विषयता नही रहने पर भी सुरुग्घो (स्रुघ्न) मे नियम प्रवृत्त हो जाता है। प्राकृत के प्राचीन ऋषियो के अनुसार सूक्ष्म शब्द का सुहुम रूप हो जाता है।

---

१ विप्रकर्ष से तात्पर्य पृथक् होने से है।

(३४) जब स्वस् और स्व शब्द किसी समास के अङ्ग न होकर पृथक् ही एक पद हो तब इनका विप्रकर्ष हो जाता एव पूर्व के व्यञ्जन मे उ स्वर का योग भी हो जाता है। जैसे —

प्राकृत	संस्कृत
सुवे कअ	स्वे कृतम्
सुवे जना	स्वे जना

विशेष—हेमचन्द्र ने ? ११४ मे **एकस्वरवाले पद मे** स्वस् और स्व शब्दो का उक्त कार्य माना है। उसका भी तात्पर्य पृथक् ही एक पद होने मे है। समास का अङ्ग हो जाने पर सयगो (स्वजन) हो जाता है।

(३५) शील (स्वभाव, आदत), धर्म (गुण) अथवा साधु (प्रवीण) अर्थ मे जो प्रत्यय आते है उनके स्थान मे 'इर' आदेश होता है। जैसे —हसिरो, रोचिरो, लज्जिरो, भमिरो, जम्पिरो, वेविरो, ऊससिरो (हसनशील इत्यादि)

विशेष—कोई-कोई तृन् के स्थान मे ही 'इर' का आदेश मानते है। उनके मत से सस्कृत के नमी और गमी के लिए नमिर और गमिर रूप नही सिद्ध होते।

(३६) क्त्वा प्रत्यय के स्थान मे तुम् , अत् , तूण और तुआण ये ४ आदेश होते हे। जैसे —

प्राकृत		संस्कृत
दड्ढु	[क्त्वा = तुम्]	दग्ध्वा
मोत्तु	[,, ,,]	मुक्त्वा
भमिअ	[क्त्वा = अत्]	भ्रमित्वा
रमिअ	[,, ,,]	रन्त्वा
घेत्तूण	[क्त्वा = तूण]	गृहीत्वा
काउण	[,, ,,]	कृत्वा
भोत्तुआण[1]	[क्त्वा=तुआण]	भुक्त्वा
सीउआण[2]	[,, ,,]	सवित्वा

विशेष—(क) कहीं-कहीं तुम्वाले म के अनुस्वार का लोप हो जाता है। जैसे —वन्दित्तु। म का लोप करके वन्दित्वा सस्कृत का वन्दित्ता प्राकृत रूप बनता है।

✓ (ख) **शौरसेनी मे** क्त्वा के स्थान मे इय और दूण आदेश होते है। कृ और गम धातुओ से अदूय होता है। मागधी-आवन्ती मे क्त्वा के स्थान मे तूण आदेश होता है। अपभ्रश मे क्त्वा के स्थान मे इइ, उइ, विअवि आदेश होते है।

(३७) इदमर्थ[3] मे प्रयुक्त प्रत्ययो के स्थान मे 'केर' आदेश होता है। जैसे —तुम्हकेरो, अम्हकेरो (युष्मदीय , अस्मदीय)

---

१ २ हेमचन्द्र २ १४६ में भेत्तुआण और सेउआण रूप मिलते है।

३ किसी से सम्बन्ध रखनेवाला पुरोवर्ती पदार्थ। जैसे—तुम्हारा यह ग्रन्थ, इस अर्थ में सस्कृत मे 'युष्मदीयो ग्रन्थ ' ऐसा प्रयोग इदमर्थ मे है।

विशेष—मईअ-पक्खे, पाणिणीआ (मदीयपक्षे, पाणिनीया) मे उक्त नियम नही लगता है। पर और राजन् शब्दो से पारक्क और राइक्क भी बनते है।

(३८) इदमर्थ मे युष्मद्-अस्मद् शब्दो से पर मे रहनेवाले अञ् प्रत्यय के स्थान मे 'एच्चय' आदेश होता है। जैसे—तुम्हेच्चय, अम्हेच्चय (यौष्माकम्, आस्माकम्)

विशेष—अपभ्रंश मे इदमर्थ प्रत्ययो के स्थान मे केवल 'आर' आदेश होता है। यथा—अम्हारो (अस्मदीय)।

(३९) त्व प्रत्यय के स्थान मे 'डिमा' और 'त्तण' आदेश विकल्प से होते है। जैसे—पीणिमा, पीणत्तण (पीनत्वम्)

विशेष—तल् (ता) प्रत्ययान्त पीनता आदि के स्थान मे पीणआ (या) इत्यादि रूप होतेहै। पीणदा रूप विशेष प्राकृत मे भले ही होता हो, किन्तु सामान्य प्राकृत मे नही होता। हाँ प्राकृतप्रकाशकार कुल प्राकृतो मे तल् प्रत्यय के स्थान मे 'दा' आदेश करते है।

(४०) अङ्कोठवर्जित शब्द से पर मे आनेवाले तैल' प्रत्यय के स्थान मे 'डेल्ल' आदेश होता है। जैसे—इङ्गुदीएल्ल (इङ्गुदीतैलम्)

विशेष—अङ्कोठ शब्द से अङ्कोल्लतेल्ल रूप होता है।

---

१ प्रा० प्र० ४ २२

(४१) यद्, तद् और एतद् शब्दों से पर में आनेवाले परिमाणार्थक प्रत्यय के स्थान में 'इत्तिअ' आदेश होता है और एतद् शब्द का लुक् भी होता है। जैसे —जित्तिअ, तित्तिअ, इत्तिअ (यावत्, तावत्, एतावत्)

(४२) इदम्, किम्, यद्, तद् और एतद् शब्दों से पर में आनेवाले परिमाणार्थक प्रत्यय के स्थान में 'डेत्तिअ'[1] 'डेत्तिल' और 'डेद्दह' आदेश होते हैं। इन प्रत्ययों के आने पर एतद् शब्द का लुक् हो जाता है। इदम् शब्द से जैसे — एत्तिअ, एत्तिल, एद्दह (इयत्), केत्तिअ, केत्तिल, केद्दह (कियत्), जेत्तिअ, जेत्तिल, जेद्दह (यावत्), तेत्तिअ, तेत्तिल, तेद्दह, (तावत्), एत्तिअ, एत्तिल, एद्दह (एतावत्)

(४३) कृत्वस् प्रत्यय (क्रिया की अभ्यावृत्ति की गणना अर्थ में होनेवाले) के स्थान में 'हुत्त'[2] आदेश होता है। जैसे —बहुहुत्त (बहुकृत्व)

(४४) मतुप् प्रत्यय के स्थान में आलु, इल्ल, उल्ल, आल, वन्त और इन्त आदेश होते हैं। आलु जैसे :— ईसालू, णिद्दालू (ईर्ष्यावान्, निद्रावान्) इल्ल जैसे :—विआरिल्लो, सोहिल्लो (विकारवान्, शोभावान्) उल्ल जैसे :— विआरुल्लो, मसुल्लो (विकारवान्, मांसवान्) आल जैसे :— रसालो, जडालो, जोण्हालो (रसवान्, जडवान्, ज्योत्स्ना-

१ प्रत्ययों के आदि ड् के इत् अर्थात् लुप्त होने से यद् और तद् के टि अर्थात् अद्भाग का भी लोप हो जाता है।

२ दे० 'सङ्ख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्।' पा० सू० ५।४।२७

वान्) **वन्त** **जैसे**:—धणवन्तो, भत्तिवन्तो (धनवान्, भक्तिमान्)

विशेष—(क) हेमचन्द्र के मत से मन्त और इर आदेश भी होते है। जैसे—सिरिमतो, पुण्णमतो, धणिरो (श्रीमान्, पुण्यवान्, धनवान्)

(ख) कुछ लोगों का कहना है कि इल्ल और उल्ल सार्वत्रिक न होकर पाणिनीय व्याकरण के शैषिक प्रकरण में ही आते हैं। जैसे—पुरिल्ल (पौरस्त्यम्), अप्पुल्ल (आत्मीयम्)

(४५) वति प्रत्यय के स्थान में 'व्व' यह आदेश होता है। जैसे—महुव्व (मधुवत्)

स्वार्थिक प्रत्यय।

प्राकृत	**प्रत्यय**	**संस्कृत**	**प्राकृत**	**प्रत्यय**	**संस्कृत**
नवल्लो	ल्ल	नव	मिसालिअ	डालिअ	मिश्र
एकल्लो, एक्कल्लो	,,	एक	दीहर	र	दीर्घ
अवरिल्लो	,,	उपरि	विज्जुला	ल	विद्युत्
भुमया	मया	भ्रू	पत्तल	,,	पत्रम्
भमया	डमया		पीवल	,,	पीतम्
सणिअ	डिअ	शनैः	पीअल		
मणिअं	,,	मनाक्	अन्धलो	,,	अन्ध
मणअं	डअं		जमल	,,	यम

विशेष—स्वार्थ में सभी शब्दों से क प्रत्यय होता है।

तृतीय अध्याय समाप्त



चतुर्थ अध्याय

[शब्दसाधन प्रकरण]

(१) प्राकृत मे सस्कृत के समान ही पुँल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुसक लिङ्ग होते है ।

विशेष—सस्कृत के जिन शब्दो का प्राकृत मे लिङ्ग बदल जाता है, उनके विषय मे इस ग्रन्थ के १–३८–४५ तक मे विचार किया गया है ।

(२) प्राकृत मे सस्कृत के समान तीनो वचन न होकर एकवचन और बहुवचन ही होते है ।

(३) कर्ता आदि छयो कारको की चतुर्थीरहित विभक्तियाँ प्राकृत शब्दो के आगे प्रयुक्त होती है । चतुर्थी के स्थान की पूर्ति षष्ठी विभक्ति से होती है । विभक्तिया के नाम पाणिनि के नामकरण के अनुसार ही है ।

(४) प्राकृत मे अवर्णान्त (अ और आ से अन्त होनेवाले), इवर्णान्त (इ और ई से अन्त होनेवाले), उवर्णान्त (उ और ऊ से अन्त होनेवाले), ऋवर्णान्त (ऋ से अन्त होनेवाले) तथा हलन्त (जिनके अन्त मे व्यञ्जन अक्षर आये हो) ये पाँच प्रकार के शब्द पाये जाते है ।

विशेष—वस्तुत प्रयोग मे ऋकारान्त तथा हलन्त शब्दा की उपलब्धि नही होने से तीन ही प्रकार के शब्द रह जाते है ।

(५) पुँल्लिङ्ग मे वर्तमान ह्रस्व अकारान्त शब्द के आगे आनेवाली प्रथमा के एकवचन की 'सु' विभक्ति के स्थान मे 'ओ' आदेश होता है। जैसे —देवो, हरिअदो, हदो (देव , हरिश्चन्द्र , ह्रद)

विशेष—(क) **मागधी** मे सु के पर मे रहने पर अन्त के अ का ए हो जाता है और सु का लोप हो जाता है। जैसे —रुक्खे, एशे, मेशे (वृक्ष , एप , मेप)

(ख) **अपभ्रश** मे सु और अम के पर मे रहने पर अन्त के अ के स्थान मे उ आदेश माना जाता है।

(६) जस् , शस् , ङसि और आम इन विभक्तिया के पर मे रहने पर पुँल्लिङ्ग शब्द के अन्त्य अ के स्थान मे आ आदेश होता है तथा जस् और शस् विभक्तियो का लोप होता है। जैसे —देवा, णउला (देवा , देवान् , नकुल नकुलान्)

(७) अन्त (अ से अन्त होनेवाले) शब्द से पर मे आनेवाले अम् के अकार का लुक् हो जाता है। जैसे — देव, णउल (देव, नकुलम्)

(८) ह्रस्व अकारान्त शब्द से पर मे आनेवाले टा (तृतीया के एकवचन) और आम् (षष्ठी के बहुवचन) के स्थान मे ण आदेश होता है। जैसे —देवेण, देवाण, अथवा देवाण (देवेन, देवानाम्)

विशेष—अपभ्रश मे टा के स्थान मे ण्ण और अनुस्वार होते है। तथा टा के पर मे रहने पर अ का नित्य

एत्व होता है एवं भिस् के पर में रहने पर विकल्प से। से अ पर में आप् का ह आदेश होता है।

(९) अदन्त (अ से अन्त होनेवाले) शब्दों के अन्तिम अ के स्थान में ए होता है, यदि उनसे आगे ङि (सप्तमी एकवचन) और ङस् (षष्ठी-एकवचन) से भिन्न विभक्तियाँ आती हो। जैसे—देवेहि, देवेसु, णउलेहि, णउलेसु (देवै देवेषु, नकुलै, नकुलेषु)

(१०) अदन्त (अ से अन्त होनेवाले) शब्द से पर मे आनेवाले भिस् के स्थान मे केवल (अनुनासिक एवं अनुस्वार से रहित), सानुनासिक और सानुस्वार 'हिं' आदेश होता है। जैसे—देवेहि, देवेहिँ, देवेहिं, णउलेहि, णउलेहिँ, णउलेहिं (देवै, नकुलै)

विशेष—'प्राकृतप्रकाश' और **'कल्पलतिका'** के अनुसार भिस् के स्थान मे केवल हिम् आदेश किया जाता है।

(११) अदन्त (अ से अन्त होनेवाले) शब्द से पर मे आनेवाले ङसि के स्थान मे त्तो, दो, दु, हि और हिन्तो आदेश होते है। दो और दु के दकार का लुक् भी होता है। जैसे—देवत्तो, देवाओ, देवाउ, देवाहि और देवाहिन्तो[1] (देवात्)

विशेष—(क) **प्राकृतप्रकाश** और **कल्पलतिका** के अनुसार ङसि के स्थान मे आदो, दु तथा हि आदेश किये जाते है।

---

१ हेमचन्द्र (३ ८) के अनुसार ङसि का लुक् होकर एक रूप 'देवा' भी होता है।

(ख) **शौरसेनी** मे ङसि के स्थान मे 'आदो', और 'आदु' आदेश होते है, किन्तु **कल्पलतिका** के अनुसार केवल 'दो' आदेश होता है।

(ग) **पैशाची** मे ङसि के स्थान मे 'आतो' और 'आत्तु' आदेश होते है।

(घ) **अपभ्रंश** मे ङसि के स्थान मे 'हे' और 'हु' आदेश होते है।

(१२) अदन्त (अ से अन्त होनेवाले) शब्द से पर मे आनेवाले भ्यस् के स्थान मे त्तो, दो, दु हि, हितो और सुतो आदेश होते ह। जैसे —देवत्तो, देवाओ, देवाउ, देवाहि, देवेहि, देवाहितो, देवेसुतो (देवेभ्य)

विशेष—अपभ्रंश मे अदन्त शब्दो से पर मे आनेवाले भ्यस् के स्थान मे 'हु' आदेश होता है।

(१३) अदन्त शब्द से पर मे आनेवाले ङस (षष्ठी-एकवचन) के स्थान मे 'स्स' आदेश होता है। जैसे —देवस्स, णउलस्स (देवस्य, नकुलस्य)

विशेष—(क) **मागधी** मे ङस् के स्थान मे विकल्प से 'आह' आदेश होता है।

(ख) **अपभ्रंश** मे ङस् के स्थान मे सु, हो, स्सो ये आदेश होते है।

(१४) अदन्त शब्द से पर मे आनेवाले ङि (सप्तमी-एकवचन) के स्थान मे 'ए' और 'म्मि' आदेश होते है। जैसे —देवे, देवेम्मि, णउले, णउलेम्मि (देवे, नकुले)

उपर्युक्त नियमों के अनुसार अकारान्त पुँल्लिङ्ग

देव शब्द के रूप—

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	देवो	देवा
द्वितीया	देवं	देवे, देवा
तृतीया	देवेण, देवेणं	देवेहि-हिँ-हिं
पञ्चमी	देवत्तो, देवाओ, देवाउ, देवाहि देवाहिन्तो इत्यादि	देवाहिंतो, देवासुंतो देवेहिंतो इत्यादि
षष्ठी	देवस्स	देवाण, देवाणं
सप्तमी	देवे, देवम्मि	देवेसु, देवेसुं
संबोधन	देव, देवो	देवा

कुल अकारान्त शब्दों के रूप उक्त **देव** शब्द के समान ही प्राय चलते हैं।

(१५) इदन्त (इ से अन्त होनेवाले) और उदन्त (उ से अन्त होनेवाले) पुँल्लिङ्ग शब्दों का सु, जस्, भिस्, भ्यस् और सुप् विभक्तियों के पर में रहने पर अन्त (इ और उ) का दीर्घ होता है।

विशेष—हेमचन्द्र के मत से शस् (द्वितीया-बहुवचन) के लुक् हो जाने पर भी इदन्त-उदन्त का दीर्घ होता है।

(१६) इदन्त और उदन्त पुँल्लिङ्ग शब्दों से पर में आनेवाले जस् के स्थान में ओ और णो आदेश होते हैं। कहीं-कहीं जस् का लुक् भी हो जाता है।

विशेष—हेम० ३, २०, २१, २२ के अनुसार इदन्त-उदन्त से पुँल्लिङ्ग में जस् के स्थान में डित् अउ-अओ आदेश और उदन्त से केवल डित् अवो आदेश विकल्प से होते हैं। णो आदेश भी विकल्प से होता है। डित् होने से पूर्व के 'टि' का लोप जानना चाहिए।

(१७) इदन्त और उदन्त पुँल्लिङ्ग शब्दों से पर में आनेवाले शस् के स्थान में नित्य और ङस् के स्थान में विकल्प से णो आदेश होता है।

विशेष—अपभ्रंश में इदन्त-उदन्त से पर में आनेवाले 'ङसि' के स्थान में 'हे', 'भ्यस् के स्थान में 'हु' और ङि के स्थान में हि आदेश होते हैं।

(१८) इदन्त और उदन्त शब्दों से पर में आनेवाले 'टा' (तृतीया-एकवचन) के स्थान में 'णा' आदेश होता है।

विशेष—अपभ्रंश में टा के स्थान में सानुस्वार ए और ण आदेश होते हैं।

(१९) शेष रूपों की सिद्धि अदन्त शब्दों के समान ही जाननी चाहिए।

उपर्युक्त नियमों के अनुसार इदन्त-पुँल्लिङ्ग

गिरि शब्द के रूप—

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	गिरी	गिरीओ, गिरिणो
द्वितीया	गिरिं	गिरिणो
तृतीया	गिरिणा	गिरीहि-हिँ-हिं

पञ्चमी	गिरित्तो इत्यादि	गिरिहितो गिरिसुतो इत्यादि
षष्ठी	गिरिणो, गिरिस्स	गिरिण, गिरिण
सप्तमी	गिरिम्मि	गिरीसु, गिरीसु
सबोधन	गिरि	गिरीओ

हेमचन्द्र (३, १६ २४) के अनुसार **गिरि** शब्द के रूप—

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	गिरी	गिरी, गिरवो, गिरउ, गिरिणो
द्वितीया	गिरि	गिरी, गिरिणो
तृतीया	गिरिणा	गिरीहि-हिँ-हि
पञ्चमी	गिरिणो, गिरित्तो गिरीओ, गिरीउ गिरीहितो	गिरित्तो, गिरीओ, गिरीउ, गिरीहितो, गिरीसुतो
षष्ठी	गिरिणो, गिरिस्स	गिरीण, गिरीण
सप्तमी	गिरिम्मि	गिरीसु, गिरीसु
सबोधन	गिरि, गिरी	गिरिणो, गिरओ, गिरउ, गिरी

उदन्त पुँल्लिङ्ग **गुरु** शब्द के रूप —

प्रथमा	गुरू	गुरुओ, गुरुणो
द्वितीया	गुरु	गुरुणो
तृतीया	गुरुणा	गुरूहि-हिँ-हि
पञ्चमी	गुरुत्तो इत्यादि	गुरुहितो इत्यादि
षष्ठी	गुरुणो, गुरुस्स	गुरुण, गुरुण
सप्तमी	गुरुम्मि	गुरूसु, गुरूसु
सबोधन	गुरु	गुरूओ

पुँल्लिङ्ग मे कुल इकारान्त, उकारान्त शब्दो के रूप **गिरि** ओर **गुरु** शब्दो के समान ही होते ह।

हेमचन्द्र के अनुसार गुरु शब्द के रूप —

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	गुरू	गुरू, गुरवो, गुरओ गुरउ, गुरुणो
द्वितीया	गुरु	गुरू, गुरुणो
तृतीया	गुरुणा	गुरूहि–हिँ –हि
पञ्चमी	गुरुणो, गुरुत्तो, गुरुओ गुरुउ, गुरूहितो	गुरुत्तो, गुरूओ, गुरूउ गुरूहितो, गुरूसुतो
षष्ठी	गुरुणो, गुरुस्स	गुरूण, गुरूण
सप्तमी	गुरुम्मि	गुरूसु, गुरूसु
सबोधन	गुरु, गुरू	गुरू, गुरुणो, गुरवो गुरउ, गुरओ

(२०) ऋकारान्त शब्दो के आगे किसी भी विभक्ति के आने पर अन्त्य ऋ के स्थान मे 'आर' आदेश होता है और उसका रूप अदन्त शब्दो जैसा पाया जाता है।

(२१) सु और अम् को छोड कर शेष सभी विभक्तियो के पर मे होने पर ऋकारान्त शब्द के अन्त्य ऋ के स्थान मे विकल्प से उकार होता है। उत्व पक्ष मे उकारान्त शब्दो के जैसे रूप होते है।

(२२) सबोधनवाले सु के पर मे रहने पर ऋदन्त शब्द-के अन्तिम ऋ के स्थान मे 'अ' आदेश विकल्प से होता है।

किन्तु जो ऋकारान्त शब्द विशेषण के रूप मे प्रयुक्त हुआ हो उसमे उक्त नियम लागू नही होता है। जैसे —हे पिअ, हे पिअर (हे पित)

विशेष—कर्तृशब्द विशेषणवाची ऋकारान्त है, अत उक्त नियम लागू नही हुआ। इससे 'हे कत्तार' रूप होगा।

(२३) पितृ, भ्रातृ और जामातृ शब्दो से पर मे किसी भी विभक्ति के आने पर ऋकार के स्थान मे 'आर' का अपवाद 'अर' आदेश होता है।

विशेष—(क) अर' आदेश होने पर उसके रूप भी अदन्त शब्दो के समान ही चलते है।

(ख) सु के पर मे रहने पर ऋदन्त शब्दो के ऋ के स्थान मे 'आ' आदेश विकल्प से होता है।

उपर्युक्त नियमो के अनुसार भर्तृ शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	भत्तारो	भत्तुणो भत्तारा
द्वितीया	भत्तार	भत्तुणो, भत्तारे
तृतीया	भत्तुणा, भत्तारेण	भत्तारेहि भत्तुहि
पञ्चमी	भत्तारादो, भत्तुणो, इत्यादि	भत्तारहितो, भत्तुहितो, इत्यादि
षष्ठी	भत्तुणो, भत्तारस्स	भत्तुण, भत्ताराण
सप्तमी	भत्तारे, भत्तारम्मि, भत्तुम्मि	भत्तुसु, भत्तारेसु
सबोधन	हे भत्तार	हे भत्तारा

हेमचन्द्र (३, ३६, ४०, ४४, ४८) के अनुसार भर्तृ शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	भत्तारो	भत्तारा, भत्तू, भत्तुणो भत्तउ, भत्तओ
द्वितीया	भत्तार	भत्तारे, भत्तू, भत्तुणो
तृतीया	भत्तुणा, भत्तारेण	भत्तूहि, भत्तारेहि
पञ्चमी	भत्तुणो भत्तूओ, भत्तूउ, भत्तूहि, भत्तूहितो, भत्ताराओ, भत्ताराउ, भत्ताराहि, भत्ताराहितो, भत्तारा	भत्तू, भत्तूओ, भत्तूहितो, भत्तूसुतो, भत्ताराओ, भत्ताराउ, भत्ताराहि, भत्तारेहि, भत्ताराहितो, भत्तारेहितो, भत्तारासुतो, भत्तारेसुती
षष्ठी	भत्तुणो, भत्तुस्स, भत्तारस्स	भत्तूण, भत्तूण, भत्ताराण, भत्ताराण
सप्तमी	भत्तुम्मि, भत्तारे, भत्तारम्मि	भत्तूसु, भत्तारेसु
सबोधन	हे भत्तार	हे भत्तारा

कुल ऋकारान्त पुॅल्लिङ्ग शब्दो के रूप भर्तृ शब्द के समान ही चलते है।

ऋकारान्त पितृ शब्द के रूप —

प्रथमा	पिआ, पिअरो	पिअरा
द्वितीया	पिअर	पिअरे, पिदुणो
तृतीया	पिअरेण, पिदुणा	पिअरेहि
पञ्चमी	पिअरादो, पिदुणो, इ०	पिअरहितो, पिदुहितो, इत्यादि
षष्ठी	पिअरस्स, पिदुणो	पिअराण, पिदुण

	एकवचन	बहुवचन
सप्तमी	पिअरे, पिअरम्मि, पिदुम्मि	पिअरेसु, पिदुसु
सबोधन	हे पिअ, हे पिअर	हे पिअरा

पितृ शब्द के समान ही भ्रातृ और जामातृ शब्दो के रूप चलते हे।

हेमचन्द्र (३ ३९-४०, ४४-४८) के अनुसार पितृ शब्द के रूप —

प्रथमा	पिआ[1], पिअरो	पिअरा, पिउणो, पिअवो, पिअओ, पिअउ पिऊ
द्वितीया	पिअर	पिअरे, पिअरा, पिउणो, पिऊ
तृतीया	पिअरेण, पिअरेण, पिउणा इत्यादि	पिअरेहि हि हिँ, पिऊहि हिँ-हि इत्यादि
सबोधन	पिअ, पिअर	पिअरा, पिउणो, पिअवो इत्यादि

शेष विभक्तियो के रूपो का ऊह कर लेना चाहिए।

(२४) प्राकृतप्रकाश और प्राकृतकल्पलतिका मे ईकारान्त ऊकारान्त शब्दो के साधन के लिए अलग सूत्र नही देखे जाते। इससे सिद्ध होता है कि उनके (ईकारान्त ऊकारान्त के) कार्य भी क्रमश इकारान्त उकारान्त शब्दो के समान ही होते है।

(२५) हेमचन्द्र ने सभी विभक्तियो मे क्विबन्त ईकारान्त ऊकारान्त शब्दो के दीर्घ ई ऊ के लिए ह्रस्व का विधान किया है। और केवल सबोधन के एकवचन मे अपने नियम को वैकल्पिक माना है।

१ शौरसेनी में प्रथमा के एकवचन में पिदा रूप होता है। देखिए 'तादकण्णो वि एदाए पिदा'—अभिज्ञान शाकुन्तल

(२६) पुँल्लिङ्ग मे गो शब्द का गाव यह रूप होता है। इसलिए इसके रूप अदन्त शब्दो के समान ही चलते है।

स्त्री प्रत्यय

(२७) प्राकृत मे कुछ ही ऐसे शब्द है, जिनमे विशेष नियमो के अनुसार विशेष स्त्री प्रत्यय आते है। शेष शब्दो के आगे सस्कृत के ही अनुसार स्त्री प्रत्यय आते है।

(२८) पाणिनि (४ १ १५) के अनुसार अण् आदि प्रत्यय निमित्तक जो ङीप् होता है, वह प्राकृत मे विकल्प से होता है। जैसे —साहणी, साहणा, कुरुचरी, कुरुचरा।

(२६) अजातिवाची पुँल्लिङ्ग नाम (प्रातिपदिक) से स्त्री लिङ्ग को बतलाने मे विकल्प से ङी प्रत्यय होता है। जैसे — नीली, नीला, काली, काला, हसमाणी, हसमाणा, सुप्पणही, सुप्पणहा, इमीए, इमाए, इमीण, इमाण, एईए, एआए, एईण, एआण।

विशेष—(क) कुमार्यादि मे सस्कृत के समान नित्य ही ङी होता है। कुमारी, गौरी इत्यादि।

(ख) जातिवाची मे उक्त नियम के नही लगने से करिणी, अया, एलया इत्यादि रूप होते है।

(३०) छाया और हरिद्रा शब्दो मे 'आप्' का प्रसङ्ग (प्राप्ति) होने पर विकल्प से 'ङी' प्रत्यय होता है। जैसे —छाही, छाहा,[1] हलद्दी, हलद्दा।

(३१) स्त्रीलिङ्ग मे स्वस्रादि[2] शब्दो से पर मे डा प्रत्यय

---

१ हेमचन्द्र के अनुसार 'छाया' पाठ है। देखें हेम० ३ ३४

२ स्वसा तिस्रश्चतस्रश्च ननान्दा दुहिता तथा।
याता मातेति सप्तैते स्वस्रादय उदाहृता ॥ सिद्धा कौ अजन्तस्त्री

होकर ससा आदि रूप हो जाते है और उनके रूप आदन्त शब्दो जैसे चलते है। जैसे —ससा, नणन्दा, दुहिआ।

(३२) सु, अम् और आम्वजित[1] सुप् (सभी विभक्तियो) के पर मे रहने पर किम्, यद् और तद् शब्दो से स्त्रीलिङ्ग मे 'ङी' प्रत्यय विकल्प से होता है। जैसे —कीओ, काओ, कीए, काए, कीसु, कासु, जीओ, जाओ, तीओ, ताओ।

(३३) स्त्रीलिङ्ग शब्द से पर मे आनेवाले जस् और शस् के स्थान मे विकल्प से 'उत्' और 'ओत्' आदेश होते है। और उनसे पूर्व के ह्रस्व स्वर का विकल्प से दीर्घ हो जाता है। जैसे —मालाउ, मालाओ, पक्ष मे–माला। बुद्धीउ, बुद्धीओ, पक्ष मे बुद्धी। सहीउ, सहीओ, पक्ष मे सही। धेणूउ, धेणूओ, पक्ष मे धेणू। वहूउ वहूओ, पक्ष मे वहू।

विशेष—शौरसेनी मे स्त्रीलिङ्ग शब्द से जस् का उत् नही होता है।

(३४) स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान नाम (प्रातिपदिक) से पर मे आनेवाले टा, ङस् और ङी के स्थान मे 'अत्' 'आत्' 'इत्' और 'एत्' आदेश होते है। पूर्व के ह्रस्व स्वर का दीर्घ भी होता है। आदन्त शब्द से टादि के स्थान मे केवल आत् आदेश नही होता। उक्त चारो आदेश जब ङसि के स्थान मे होते है, तब उनके पूर्व के ह्रस्व स्वर का विकल्प से दीर्घ हो जाता है। जैसे —मुद्धाअ, मुद्धाइ, मुद्धाए, बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धीइ, बुद्धीए।

विशेष—(क) अपभ्रंश मे टा के स्थान मे एत् होता है।

---

१ उक्त नियम हेमचन्द्र के अनुसार है। किन्तु एच भट्टाचार्य अपने प्राकृत व्याकरण में 'अनामि सुपि' लिखते हैं। पृ १०७, प १७

(ख) **अपभ्रंश** मे ङसि और ङस् के स्थान मे हे, भ्यस् ओर आम् के स्थान मे हु और ङि के स्थान मे हिँ होते है।

(३५) अम् विभक्ति के पर मे रहने पर स्त्रीलिङ्ग शब्द के अन्तिम दीघ को ह्रस्व विकल्प से होता है।

(३६) स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान दीर्घ ईकारान्त शब्द से पर मे आनेवाले सु जस् और शस् के स्थान मे 'आ' आदेश विकल्प से होता है।

(३७) सबोधनवाली विभक्ति के पर मे रहने पर आबन्त स्त्रीलिङ्ग शब्द के अन्तिम आ को 'ए' आदेश होता है।

आकारान्त स्त्रीलिङ्ग **लता** शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	लदा	लदा, लदाओ, लदाउ
द्वितीया	लद	लदा, लदाओ, लदाउ
तृतीया	लदाए, लदाइ, लदाअ	लदाहि हिँ हि
पञ्चमी	लदादो, लदाए, इत्यादि	लदाहितो, इत्यादि
षष्ठी	लदाए, लदाइ, लदाअ	लदाण, लदाण
सप्तमी	लदाए, लदाइ, लदाअ	लदासु, लदासु
सबोधन	हे लद	हे लदाओ

हेमचन्द्र के अनुसार **लता** शब्द के रूप —

प्रथमा	लदा	लदा, लदाओ, लदाउ
द्वितीया	लद	लदा, लदाओ, लदाउ

	एकवचन	बहुवचन
तृतीया	लदाए, लदाइ, लदाअ	लदाहि–हिँ–हि
पञ्चमी	लदाए, लदाइ, लदाअ लदत्तो, लदाओ, लदाउ लदाहितो, इत्यादि	लदत्तो, लदाओ, लदाउ लदाहिंतो, लदासुंतो
षष्ठी	लदाए, लदाइ, लदाअ	लदाण, लदाण
सप्तमी	लदाए, लदाइ, लदाअ	लदासु, लदासुं
संबोधन	हे लदे, लदा	हे लदा, लदाओ, लदाउ

इकारान्त स्त्रीलिङ्ग बुद्धि शब्द के रूप —

प्रथमा	बुद्धी	बुद्धी, बुद्धीओ, बुद्धीउ
द्वितीया	बुद्धिं	बुद्धी, बुद्धीओ, बुद्धीउ
तृतीया	बुद्धीए, बुद्धीइ, बुद्धीआ, बुद्धिअ	बुद्धीहि–हिँ–हि
पञ्चमी	बुद्धीए, बुद्धीइ, इत्यादि	बुद्धीहिंतो, बुद्धीसुन्तो इत्यादि
षष्ठी	बुद्धीए, बुद्धीइ, बुद्धीआ, बुद्धीअ	बुद्धीण, बुद्धीणं
सप्तमी	बुद्धीए, बुद्धीइ, बुद्धीआ, बुद्धीअ	बुद्धीसु, बुद्धीसुं
संबोधन	हे बुद्धी	हे बुद्धी, बुद्धीओ, इत्यादि

हेमचन्द्र के अनुसार बुद्धि शब्द के रूप —

प्रथमा	बुद्धी	बुद्धी, बुद्धीओ, बुद्धीउ
द्वितीया	बुद्धिं	बुद्धी, बुद्धीओ, बुद्धीउ
तृतीया	बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धीइ, बुद्धीए	बुद्धीहि–हिँ–हि
पञ्चमी	बुद्धीअ, बुद्धीआ, बुद्धित्तो बुद्धीइ, बुद्धीए, बुद्धीओ बुद्धीउ, बुद्धीहिंतो	बुद्धित्तो, बुद्धीओ–उ– हिंतो–सुंतो

	एकवचन	बहुवचन
षष्ठी	बुद्धीअ आ-इ-ए	बुद्धीण-ण
सप्तमी	,, ,, ,,	बुद्धीसु-सु
सबोधन	हे बुद्धि, बुद्धी	हे बुद्धी, बुद्धीओ, बुद्धीउ

कुल इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दो के रूप उक्त **बुद्धि** शब्द के समान ही चलते है। ऐसे ही **हेमचन्द्र** के अनुसार **धेणु, सही, वहू** शब्दो के रूप भी चलते है।

उकारान्त स्त्रीलिङ्ग **धेणु** शब्द के रूप —

प्रथमा	धेणू	धेणू, धेणूओ, धेणूउ
द्वितीया	धेणु	,, ,, ,,
तृतीया	धेणूए-इ-आ-अ	धेणूहि-हिँ-हि
पञ्चमी	धेणूत्तो धेणूइ, इत्यादि	धेणूहितो-सुतो
षष्ठी	धेणूए-इ-आ-अ	धेणूण, धेणूण
सप्तमी	,, ,, ,, ,,	धेणूसु-सु
सबोधन	हे धेणु धेणू	हे धेणू, धेणूओ, इत्यादि

सभी उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दो के रूप **धेणु** शब्द के समान ही चलते है।

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग **नदी** शब्द के रूप —

प्रथमा	नई नईआ	नईओ, नईआ
द्वितीया	नइ	नई, नईओ, नईआ
तृतीया	नईए-इ-आ-अ	नईहि-हिँ-हि
पञ्चमी	नईए, नईअ, नइदो, इत्यादि	नई, नईहितो, नईसुतो

	एकवचन	बहुवचन
षष्ठी	नईए,–इ,–आ–अ	नईण, नईण
सप्तमी	” ” ” ”	नईसु नईसु
संबोधन	हे नइ, नई	हे नई, नईओ, इत्यादि

कुल ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दो के रूप **नदी** शब्द के समान ही चलते है।

ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग **वहू** (वधू) शब्द के रूप —

प्रथमा	वहू	वहू , वहूओ, इत्यादि
द्वितीया	वहु	वहू , वहूओ, इत्यादि
तृतीया	वहूए–इ–आ–अ	वहूहि–हिँ–हि
पञ्चमी	वहूदो, वहूए, इत्यादि	वहूहितो–सुतो
षष्ठी	वहूए–इ–आ–अ	वहूण, वहूण
सप्तमी	” ” ” ”	वहूसु–सु
संबोधन	हे वहु, वहू	हे वहू, वहूओ, इत्यादि

कुल ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दो के रूप **वहू** शब्द के समान ही चलते है।

ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग **मातृ** शब्द के रूप —

---

१ हेमचन्द्र (३ ४६) के अनुसार मातृ शब्द के दो प्राकृत रूप मिलते हैं–माआ (माता) और माअरा (देवी Goddess)। हमें इस शब्द से ३ ४४ के अनुसार 'माउ' और १ १३५ के अनुसार 'माइ' रूप भी मिलते हैं। इनमें 'माआ' और 'माअरा' के रूप माला एव लता शब्दों के अनुसार, माउ के रूप धेणु के अनुसार और माइ के रूप बुद्धि शब्द के अनुसार चलते हैं।

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	माआ	माआ
द्वितीया	माअ[1]	माए
तृतीया	माआइ, माआअ, इत्यादि	माएहि-हिँ-हि
पञ्चमी	माआदो, माआए, इत्यादि	माआहितो, माआसुतो
षष्ठी	माआइ, माआअ, इत्यादि	माआण, माआण
सप्तमी	" " "	माआसु-सु
सबोधन	हे माअ, इत्यादि	हे माआ, इत्यादि

स्त्रीलिङ्ग मे गो शब्द के **गावी** और **गाई** ये दो रूप होते है। इन दोनो के रूप ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दो के अनुसार चलते है।

अजन्त नपुसक लिङ्ग के शब्दो के सम्बन्ध मे नियम —

(३८) नपुसक लिङ्ग मे वर्तमान स्वरान्त शब्दो से पर मे आनेवाले सु (प्रथमा के एकवचन) के स्थान मे 'म्' होता है। जैसे —वण (वनम्)

(३६) नपुसक लिङ्ग मे वर्तमान स्वरान्त शब्दो से पर मे आनेवाले जस् और शस् (प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन) के स्थान मे इ, इ और णि आदेश होते है। जैसे —कुलाइँ, कुलाइ और कुलाणि।

विशेष—(क) शौरसेनी मे नपुसक लिङ्ग मे जस्-शस् के स्थान मे केवल 'णि' आदेश होता है।

(ख) **अपभ्रंश मे** जस्-शस् के स्थान मे 'इ' आदेश होता है।

---

1 शौरसेनी में द्विताया के एकवचन में 'मादर' यह रूप होता है।

(४०) नपुसक लिङ्ग मे वर्तमान शब्दो से पर मे आनेवाले सबोधन के 'सु' का लोप होता है।

(४१) सु (प्रथमा के एकवचन) के पर मे रहने पर इदन्त-उदन्त नपुसक शब्दो के अन्तिम इ और उ को दीर्घ नही होता है।

अकारान्त नपुसकलिङ्ग **कुल** शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कुल	कुलाइँ, कुलाइ, कुलाणि
द्वितीया	"	" " "
सबोधन	हे कुल	

शेष रूप पुल्लिङ्ग के समान चलते है।

इकारान्त नपुसक **दधि** शब्द के रूप —

प्रथमा	दहि, दहि	दहीइँ, दहीइ, दहीणि
द्वितीया	" "	" " "
सबोधन	हे दहि	

उकारान्त नपुसक **मधु** शब्द के रूप —

प्रथमा	महु, महु	महूइँ, महूइ, महूणि
द्वितीया	" "	" " "
सबोधन	हे महु	

शेष रूपो का ऊह पुँल्लिङ्ग आदि से कर लेना चाहिए।

हलन्त शब्दो के साधनसबन्धी नियम एव उनके रूप —

प्राकृत मे हलन्त शब्द नही होते है। कुछ हलन्त शब्दो के

अन्त्य व्यञ्जनो का लोप होता है और कुछ हलन्त शब्द अजन्त के रूप मे परिणत हो जाते है। अत हलन्त शब्दो के साधनार्थ विशेष नियम नही है।

केवल **आत्मन्** और **राजन्** शब्दो के साधनार्थ प्राकृत के कुछ प्राचीन आचार्यो ने नियम बनाये है। वे ही नियम प्रयोग के अनुसार अन्य नान्त शब्दो के लिए भी उपयुक्त माने गये है।

राजन् शब्द के रूप —

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	राआ	राआणो, राआ
द्वितीया	राअं	राए, राआणो
तृतीया	रण्णा, राइणा	राएहि
पञ्चमी	राआदो, रण्णो, राआदु, राइणो	राआहितो, राइहितो
षष्ठी	रण्णो, राइणो, राअस्स	राआण, राइण, राआण्ण
सप्तमी	राअम्मि, राए, राइम्मि	राएसु, राएसुं
संबोधन	हे राआ, राअ	

हेमचन्द्र (३, ४९–५५,) के अनुसार **राजन्** शब्द के रूप —

प्रथमा	राया	राया, रायाणो, राइणो
द्वितीया	राय, राइण	राये, राया,रायाणो, राइणो
तृतीया	राइणा, रण्णा, राएण,राएणं	राएहि हिँ हिं,राईहि हिँ हिं
पञ्चमी	रण्णो, राइणो, रायत्तो, इ०	रायत्तो, राइत्तो, इत्यादि
षष्ठी	रण्णो, राइणो, रायस्स	राईण, राईणं, रायाण, रायाणं

	एकवचन	बहुवचन
सप्तमी	राये, रायम्मि, राइम्मि	राईसु, राईसुं, राएसु, राएसुं
सबोधन	हे राया, राय	राया, रायाणो, राइणो

आत्मन् शब्द के रूप —

प्रथमा	अप्पा, अप्पाणो	अप्पाणा, अप्पाण्णो, अप्पा
द्वितीया	अप्पाण, अप्प	अप्पाणे, अप्पणो
तृतीया	अप्पाणेण, अप्पणा	अप्पाणेहि, अप्पेहि
पञ्चमी	अप्पाणाओ, अप्पणो अप्पाओ, अप्पादो, इ०	अप्पाणाहिंतो, अप्पाहिंतो, इत्यादि
षष्ठी	अप्पाण्णस्स, अप्पणो	अप्पाणाण, अप्पाण
सप्तमी	अप्पाणम्मि, अप्पे	अप्पाणेसु, अप्पेसु
सबोधन	हे अप्प, इत्यादि	

विशेष—हेमचन्द्र (३ ५६-५७) के अनुसार आत्मन् शब्द के दो प्राकृत रूप अप्प और अप्पाण होते है। इनमे अप्प के रूप राजन् शब्द जैसे चलते है। और 'अप्पाण' के वच्छ अथवा देव शब्द के अनुसार। तृतीया के एकवचन मे उसके दो और अधिक रूप होते है–'अप्पणिआ' और 'अप्पणइआ'

(४२) प्राकृत कल्पलतिका के अनुसार 'भवत्' और 'भगवत्' के अन्तिम तकार के स्थान मे सु विभक्ति के पर मे रहने पर अनुस्वार किया जाता है। यह नियम यहाॅ भी गृहीत है। जैसे —भवं (भवान्), हे भवं (हे भवन्), भअवं (भगवान्), हे भअवं (हे भगवन्)

(४३) प्राच्या मे भवत शब्द के स्त्रीलिङ्ग मे भोदी यह रूप होता है।

सर्वनाम शब्दो के साधन के नियम और रूप —

प्राकृत मे सर्वनाम के सबध मे सामान्य नियम देखने मे नही आते है। जो भी नियम देखने मे आते है, विशेष स्थलो के लिए विशेष नियम है। केवल अदन्त सर्वनाम शब्दो की सिद्धि के लिए कुछ साधारण नियम है, जिनका नीचे उल्लेख हुआ है। अन्य विशेष नियमो का परिज्ञान उदाहरणो द्वारा ही सम्भव है। अदन्त सर्वनाम शब्दो के विषय मे नियम ये है —

(४४) सर्वादिगण पठित शब्दो के अन्तिम अ से पर मे आनेवाले जस् के स्थान मे 'ए' आदेश होता है।

विशेष—कही कहीं सर्वादि के प्रथम अ का वैकल्पिक एत्व होकर सेव्वे और सर्वे रूप होते है।

(४५) अदन्त सर्वादि से पर मे आनेवाले 'आम्' के स्थान मे 'एसि' आदेश विकल्प से होता है। तथा ङि' के स्थान मे 'स्सि', 'म्मि' और 'त्थ' ये आदेश होते है और इदम् तथा एतद् शब्दो को छोडकर अन्य सर्वादि शब्दो से आनेवाले ङि के स्थान मे 'हि' आदेश भी होता है।

पुॅल्लिङ्ग मे सर्व शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	सव्वो	सव्वे
द्वितीया	सव्व	सव्वे
तृतीया	सव्वेण	सव्वेहि
पञ्चमी	सव्वदो, सव्वत्तो, इत्यादि	सव्वेहिंतो, इत्यादि
षष्ठी	सव्वस्स	सव्वेसि, सव्वाण

	एकवचन	बहुवचन
सप्तमी	सव्वस्सि, सव्वम्मि, सव्वत्थ, सव्वहि	सव्वेसु, सव्वेसु
संबोधन	हे सव्व, सव्वो	सव्वे

स्त्रीलिङ्ग मे सर्व शब्द के रूप आदन्त स्त्रीलिङ्ग शब्दो के समान तथा नपुसक मे सर्व शब्द के रूप अदन्त नपुसक लिङ्गवाले शब्दो के समान चलते है।

विश्व आदि सर्वादिगण के शब्दो के रूप इसी सर्व शब्द के रूपो के समान चलते है।

विशेष—अपभ्रंश मे सर्व के स्थान मे **साह** आदेश होता है। अदन्त सर्वादि से पर मे आनेवाले ङसि का 'हा' आदेश होता है। ङि के स्थान मे केवल हि आदेश ही होता है।

पुँलिङ्ग मे **यद्** शब्द के रूप —

प्रथमा	जो	जे
द्वितीया	ज	जे
तृतीया	जेण, जिण	जेहि
पञ्चमी	जत्तो, जदो, जम्हा, जाओ	जाहितो, जासुतो, इत्यादि
षष्ठी	जस्स, जास[1]	जाण, जेहि[2]
सप्तमी	जस्सि, जम्मि, जहि[3], जत्थ	जेसु

१ अपभ्रंश में पुँल्लिङ्ग में 'जासु' और स्त्रीलिङ्ग में 'जहे' होता है।

२ शौरसेनी मे केवल जाण और टक्कभाषा में 'जाह' 'जाण' ये दो रूप होते हैं।

३ जब सप्तमी के एकवचन से समय का बोध कराना हो तब यद् शब्द का 'जाहे' और 'जाला' ये रूप हो जाते हैं।

(४६) यद् शब्द से स्त्रीलिङ्ग में आमवन्ति विभक्तिया के पर में रहने पर डा विकल्प से होता है। जैसे —जी, जीया इत्यादि।

पुल्लिङ्ग मे तद् शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	सो	ते हे
द्वितीया	त, ण	ते, डे
तृतीया	तेण, तिणा[२], णेण	तेहि, णेहि
पञ्चमी	तत्तो, तदो, ता तम्हा, ताओ	ताहितो इत्यादि
षष्ठी	तास, से, तस्स[३]	ताण, तेसि मि, दाण
सप्तमी	तस्सि, तम्मि, तत्थ, तहि	तेसु इत्यादि

(४७) तद् शब्द का स्त्रीलिङ्ग मे प्रथमा के एकवचन मे 'सा' यह रूप होता है और नपुसक लिङ्ग मे 'त'। आमवन्ति

---

१ हेमचन्द्र के अनुसार तद् शब्द के रूप निम्नलिखित हैं — प्रथमा-एक० स, सो, बहु० ते, णे, द्वितीया एक० त ण, बहु० ते, ता णे णा, तृतीया एक० तण, णेण तिण., बहु० तेहिं इत्यादि, पञ्चमी-एक० तम्हा, बहु० तेहिं इयादि, षष्ठी एक० तस्स, ताम, बहु० तास, तेसिं, सप्तमी एक० तस्सि, ताहे, ताला, तइआ, बहु० तेसु, णेसु, तेसु, णेसु।

२ पैशाची मे पुल्लिङ्ग में 'नेन' और स्त्रीलिङ्ग में 'नाए' रूप होते हैं।

३ शौरसेनी मे ङस् मे तस्स, से और आम् मे ताण होते हैं। अपभ्रंश मे ङस् के पर में रहने पर पुल्लिङ्ग मे तह और स्त्रीलिङ्ग में तासु होते हैं। टक्क भाषा मे आम् के पर मे रहने पर 'ताह' और 'ताण' होते हैं।

विभक्तियों में तद्‌शब्द से स्त्रीलिङ्ग में ङी का भी प्रयोग किया जाता है। जैसे —ती, तीआ इत्यादि।

पुल्लिङ्ग में **एतद्** शब्द के रूप —

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	एस, एसो	एते, एदे
द्वितीया	एत	एते, एदे
तृतीया	एदिणा, एदेण, एण	एतेहि, एदेहि, एएहि
पञ्चमी	एत्तो, एत्ताहो, एआओ, इ०	एतेहितो इत्यादि
षष्ठी	एअस्स, एदस्स, से	सि, एएसि, एदाण
सप्तमी	अयम्मि, एत्थ, इअम्मि, एअम्मि, एअस्सि	एएसु, एदेसु इत्यादि

विशेष—(क) हेमचन्द्र (३, ८२) के अनुसार पञ्चमी के एकवचन में **'एत्तो'** और **'एत्ताहे'** रूप होते हैं और पक्ष में **'एआओ' 'एआउ' 'एआहि' 'एआहिंतो'** और **'एआ'** रूप होते हैं।

(ख) हेमचन्द्र (३. ८४) के अनुसार **एतद्** शब्द से सप्तमी के एकवचन मे 'म्मि' के पर मे रहने पर **'अयम्मि' ईयम्मि** और पक्ष मे **एअम्मि** रूप होते है।

(ग) अन्य रूपो के लिए देखिए हेमचन्द्र के ३ ६१, ८१, ८५

पुल्लिङ्ग में **अदस्** शब्द के रूप —

प्रथमा	अमू	अमूणो
द्वितीया	अमु	अमूणो
तृतीया	अमुणा	अमूहि

	एकवचन	बहुवचन
पञ्चमी	अमूओ, अमूउ इत्यादि	अमूहितो इत्यादि
षष्ठी	अमुणो, अमुस्स	अमूण
सप्तमी	अमुम्मि, अयम्मि, इअम्मि	अमूसु इत्यादि

विशेष—(क) हमचन्द्र (३ ८७) के अनुसार तीनो लिङ्गो मे **अदस्** शब्द के प्रथमा एकवचन मे **'अह'** रूप भी होता है।

(ख) **शौरसेनी** मे 'अह' रूप नहीं होता। साधारणत स्त्रीलिङ्ग मे अमू और नपुसक मे अमु रूप प्रयुक्त होते है।

पुल्लिङ्ग मे **इदम्** शब्द के रूप —

प्रथमा	इमो, अअ	इमे
द्वितीया	इम, ण	इमे
तृतीया	इमिणा, इमेण, णेण	एहि, इमेहि, णेहि
पञ्चमी	इदो, इमादो, इत्तो इत्यादि	इमेहितो इत्यादि
षष्ठी	अस्स, इमस्स, से	इमाण, सि
सप्तमी	अस्सि, इमस्सि, इह, णे	एसु

विशेष—(क) **इदम्** शब्द के स्त्रीलिङ्ग मे 'सु' विभक्ति के पर मे रहने पर **'इअ'**, **'इमिआ'** और नपुसक मे सु और अम् के पर मे रहने पर **'इदं'** और **'इणं'** रूप होते है।

(ख) **शौरसेनी** मे स्त्रीलिङ्ग **इदम्** शब्द के प्रथमा एकवचन मे **'इअं'** और नपुसक मे **'इदम्'** **'इमम्'** रूप

होते है। पुलिङ्ग-नपुसक लिङ्ग मे षष्ठी के बहुवचन में केवल 'इमाणं' यह रूप होता है।

पुलिङ्ग मे किम् शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	को	के
द्वितीया	कं	के
तृतीया	किणा, केण	केहि
पञ्चमी	कीणो, कीस, कम्हा, कत्तो, कदो	केहितो इत्यादि
षष्ठी	कास, कस्स	कास, केसि, काण
सप्तमी	कहि, कस्सिं, कम्मि, कत्थ, काहे, काला, कइआ	केसु इत्यादि

विशेष—(क) अपभ्रंश मे किम् के स्थान मे 'काइ' और 'कवण' आदेश विकल्प से होते है।

(ख) स्त्रीलिङ्ग मे 'का' और नपुसक मे 'किं' रूप होते है।

(ग) शौरसेनी मे ङसि मे 'कदो' और उसी विभक्ति मे अपभ्रंश मे 'कहाँ' रूप होते है।

(घ) स्त्रीलिङ्ग मे ङस् के पर मे रहने पर 'कस्सा' कीसे, किअ, कीआ, कीई, 'कीए' होते है। शौरसेनी मे पुलिङ्ग मे 'कास' नहीं होता है। अपभ्रंश मे पुलिङ्ग किम् शब्द का ङस् में 'कासु' रूप होता है और स्त्रीलिङ्ग मे 'कहे'।

युष्मद् शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	तुम, त, तु, तुव, तुह	झे, तुज्झ, तुज्झे, तुम्ह, तुम्हे उम्हे, तुह्ये[1]
द्वितीया	त, तु, तुव, तुम, तुह तुमे, तुर[2]	वो तुज्झे, तुज्झ, तुम्हे, तुह्ये
तृतीया	दे, त, तइ तुए, तुम तुमइ, तुमर तुमे, तुमाई	तुम्हेहि, तुह्येहि, उम्हेहि उज्झेहि, तुज्झेहि[5] इत्यादि
पञ्चमी	तत्तो, तइत्तो तुवत्तो, तुमत्तो, तुज्झत्तो, तुम्हत्तो, तुहत्तो, तुह्यत्तो, तदो, तुव, दुहि, तुमहितो[6] इत्यादि	तुम्हाहितो तुज्झाहितो, तुज्झत्तो, तुम्हत्तो, तेहितो दुहितो[7] इत्यादि

१ हेमचन्द्र ३ ९१ के अनुसार भे, तुब्भे, तुज्झ, तुम्ह, तुय्हे, उय्हे रूप होते हैं।

२ हेमचन्द्र ३ ९२ में तुए रूप बतलाया गया है।

३ हेमचन्द्र ३ ९३ मे वो, तुज्झ, तुब्भे, तुम्हे, उम्हे, भे, रूप वर्णित हैं।

४ हेमचन्द्र ३ ९४ के अनुसार—भे, दि, दे, ते, तइ, तए तुम, तुमइ, तुमए, तुमे और तुमाइ रूप होते हैं।

५ हेमचन्द्र ३ ९५ के अनुसार—भे, तुब्भेहि, तुज्झेहि, उज्झेहि, उम्हेहिं, तुय्हेहि, उय्हेहिं ये रूप होते हैं।

६ हेमचन्द्र ३ ९६ और ९७ के अनुसार—तइत्तो, तुवत्तो, तुमत्तो, तुहत्तो, तुब्भत्तो तुम्हत्तो, तुज्झत्तो, तत्तो, तुय्ह तुब्भनहितो, तुम्ह, तुज्झ इत्यादि रूप होते हैं।

७ हेमचन्द्र ३ ९८ के अनुसार—तुब्भत्तो, तुय्हत्तो, उय्हत्तो, उम्हत्तो तुम्हत्तो, तुज्झत्तो तथा दोदुहिहिनो सुतो ये रूप होते हैं।

	एकवचन	बहुवचन
षष्ठी	तुह, तुज्झ, तुम्म, तुइ, तु, तुम्ह, तुह, तुह, तुव, तुम, तमे, तुमाइ, दे, तुह्य[1]	वो, भे, तुज्झ, तुह्याण तुम्हाण, तुमाण, तुहाण उम्हाण, तुवाण[2] इत्यादि
सप्तमी	तइ, तए, तुमए, तुमे, तुमाई, तइ, तुम्मि, तुमम्मि, तुवम्मि, तुहम्मि, तुज्झम्मि[3] इत्यादि	तुसु, तुम्हेसु, तुह्येसु, तुहसु, तुमसु, तुहेसु[4] इत्यादि

शौरसेनी मे युष्मद् शब्द के रूप —

प्रथमा	तुम	तुम्हे
द्वितीया	तुम	तुम्हे

१ हेमचन्द्र ३ ९९ के अनुसार—तइ, तु, ते, तुम्ह, तुह, तुह, तुव, तुम, तुमे, तुमो, तुमाइ, दि, दे, इ, ए, तुब्भ, उब्भ, उय्ह, तुम्ह, तुज्झ, उम्ह, उज्झ रूप होते हैं।

२ हेमचन्द्र ३ १०० के अनुसार—तु, वो, भे, तुब्भ तुब्भ, तुब्भाण, तुवाण, तुमाण, तुहाण, उम्हाण, तुब्भाण, तुवाण, तुमाण, तुहाण, उम्हाण, तुम्ह, तुज्झ, तुम्ह, तुज्झ, तुम्हाण तुम्हाण, तुज्झाण, तुज्झाण रूप होते हैं।

३ हेमचन्द्र ३ १०१ के अनुसार—तुमे, तुमए, तुमाइ, तइ, तए, तुम्मि, तुवम्मि, तुमम्मि, तुहम्मि, तुब्भम्मि, तुम्हम्मि, तुज्झम्मि रूप होते हैं।

४ हेमचन्द्र ३ १०२ के अनुसार—तुसु, तुवेसु, तुमेसु, तुहेसु, तुब्भेसु, तुम्हेसु, तुज्झेसु, तुवसु, तुमसु, तुहसु, तुब्भसु, तुम्हसु, तुज्झसु, तुब्भासु, तुम्हासु, तुज्झासु रूप होते हैं।

	एकवचन	बहुवचन
तृतीया	तए	तुम्हेहि
पञ्चमी	तुम्हादो	तुम्हाहिंतो
षष्ठी	ते, दे, तह, तुम्ह	तुम्हाण
सप्तमी	तइ	तुम्हेसु

अपभ्रंश मे युष्मद् शब्द के रूप —

प्रथमा	तुह	तुम्हे, तुम्हाइ
द्वितीया	तइ, पइ	तुम्हेहि
तृतीया	"	"
पञ्चमी	तउहोंत, तध्रुहोत, तुह्युहोंत	तुम्ह
षष्ठी	"	तुम्हह
सप्तमी	"	तुम्हासु

अस्मद् शब्द के रूप —

प्रथमा	अह, अहम्मि, अम्मि अम्हि, ह, अहअ, म्मि[1]	भे, वअ, अम्ह, अम्हे अम्हो, मो[2]
द्वितीया	णेण, मि, अम्मि, अम्ह म, मम, मिम, अह[3]	अम्हे, अम्हा, णो, णे, अम्ह[4]

---

१ हेमचन्द्र ३ १०५ के अनुसार—म्मि, अम्मि, अम्हि, ह, अह, अहय रूप होते हैं।

२ हेमचन्द्र ३ १०६ के अनुसार—अम्ह, अम्हे, अम्हो, मो, वय और भे रूप होते हैं।

३ हेमचन्द्र ३ १०७ के अनुसार—णे, ण मि, अम्मि, अम्ह मम्ह, म, मम, मिम और अह रूप होते हैं।

४ हेमचन्द्र ३ १०८ के अनुसार—अम्हे, अम्हो, अम्ह और णे रूप होते हैं।

	एकवचन	बहुवचन
तृतीया	मिमे, मम, ममए, मए ममाइ, मइ, इणो, मओ[1]	अम्हेहि, अम्हाहि अम्ह, अम्हो, णे[2]
पञ्चमी	मइत्तो, ममत्तो मत्तो महत्तो, मह्यत्तो, मइदो ममदुहि[3] इत्यादि ।	ममत्तो, अम्हत्तो, ममाहितो ममासुतो, ममेसुतो, अम्हे हितो[4] इत्यादि ।
षष्ठी	मे मम, मइ, मह मह, मह्य, नह्य, अम्ह ।[5]	णे, णो, मह्य, अम्ह, अम्ह, अम्हे, अम्हो, मम, अम्हाण महाण, मह्याण ।[6]

---

१ हेमचन्द्र ३ १०९ के अनुसार—मि, मे, मम, ममए, ममाइ मइ मए रूप होते हैं ।

२ हेमचन्द्र ३ ११० के अनुसार—अम्हेहि, अम्हाहि, अम्ह, अम्हे, णे रूप होते हैं ।

३ हेमचन्द्र ३ १११ के अनुसार—मइत्तो, ममत्तो, महत्तो मज्झत्तो मत्तो रूप होते है । इसी प्रकार मइदो, मइदु, इत्यादि रूप बनते हैं । दो, दु, हि, हितो और लुक् पक्ष में भी रूपों को ऊह कर लेना चाहिए ।

हेमचन्द्र ३ ११२ के अनुसार—ममत्तो, अम्हत्तो, ममाहितो, अम्हाहितो ममासुतो अम्हासुतो, ममेसुतो, अम्हेसुतो रूप होते हैं ।

५ हेमचन्द्र ३ ११३ के अनुसार मे, मइ, मम, मह, मह, मज्झ, मज्झ, अम्ह, अम्ह रूप होते हैं ।

हेमचन्द्र ३ ११४ के अनुसार णे, णो, मज्झ, अम्ह, अम्ह, अम्हे अम्हो, अम्हाण, ममाण, महाण, मज्झाण, अम्हाण, ममाण, महाण, मज्झाण रूप होते हैं ।

	एकवचन	बहुवचन
सप्तमी	मी, मइ, ममाइ, मए मे, अम्हम्मि, ममम्मि महम्मि[1]	अम्हेसु, ममेसु, महेसु मएसु अम्हसु, ममसु महसु[2] इत्यादि

शौरसेनी मे अस्मद् शब्द के रूप —

प्रथमा	हीं, अहं	अम्हे, वयं
द्वितीया	मं	अम्हे
तृतीया	मए	अम्हेहि
पञ्चमी	मत्तो, ममादो	अम्हेहिंतो इत्यादि
षष्ठी	मे, मम, मह	अम्ह, अम्हाण
सप्तमी	मइ, मए	अम्हेसु

(४८) मागधी मे संस्कृत के अहं और वयं के स्थान मे क्रमश हगे और हके आदेश होते है।

अपभ्रंश मे अस्मद् शब्द के रूप —

प्रथमा	हउं	अम्हे, अम्हइं
द्वितीया	मइं	अम्हे, अम्हइं
तृतीया	मइं	अम्हेहिं
पञ्चमी	महु, मज्झु	अम्हेहिंतो
षष्ठी	महु, मज्झु	अम्हहं
सप्तमी	मयि इत्यादि	अम्हासु

---

१ हेमचन्द्र ३ ११५ के अनुसार—मि, मइ, ममाइ, मए मे, अम्हम्मि, ममम्मि, महम्मि, मज्झम्मि रूप होते है।

२ हेमचन्द्र ३ ११७ के अनुसार—अम्मेसु, ममेसु, महेसु, मज्झेसु, अम्हसु, ममसु, महसु, मज्झसु अम्हासु, रूप होते हैं।

द्वि, त्रि और चतुर् शब्दों के रूप —

	द्विशब्द	त्रिशब्द	चतुर्शब्द
प्रथमा	दो, दुवे, दोण्णि, वेण्णि, दुण्णि, विण्णि	तिण्णि	चत्तारो, चउरो, चत्तारि
द्वितीया	,,	,,	,,
तृतीया	दोहिं, दोहि, विहि	तीहि	चऊहि
पञ्चमी	दोहितो, वेहितो इ०	तीहितो	चऊहितो
षष्ठी	दोण्ह, दोण्ण, वेण्ण	तिण्ण	चउण्ह
सप्तमी	दोसु, वेसु	तीसु	चउसु

(४६) अन्य सख्यावाचक शब्दो के रूप अदन्त शब्दो के समान चलते है।

(५०) स्त्रीलिङ्ग मे पञ्चन् शब्द से आप् प्रत्यय होता है। जैसे —पञ्चा, पञ्चाहि इत्यादि।

(५१) तादर्थ्य (उसके लिए) अर्थ मे षष्ठी विभक्ति विकल्प से आती है।

(५२) प्राकृत मे विभक्तियो के व्यवहार का कोई विशेष नियम नही है। कहीं द्वितीया और तृतीया के स्थान मे सप्तमी कही पञ्चमी के स्थान मे तृतीया तथा सप्तमी और प्रथमा के बदले द्वितीया विभक्तियाँ व्यवहृत होती है।

पञ्चम अध्याय

[अव्यय प्रकरण]

(१) वाक्योपन्यास अर्थ मे 'त' अव्यय का प्रयोग किया जाता है। जैसे —त निव पुच्छिअ-दोआरिएण (राजा से पूछे गये दौवारिक ने इस प्रकार वाक्य का उपन्यास किया।) कुमापा ४ १

(२) अभ्युपगम (स्वीकार) अर्थ मे आम अव्यय का प्रयोग किया जाता है। जैसे —आम गिम्ह सिरी (हॉ, यह सही है कि इस उद्यान मे इन दिनो ग्रीष्म ऋतु की शोभा फैली है।) कुमा पा ४ १

(३) विपरीतता अर्थ मे 'णवि' अव्यय का प्रयोग किया जाता है। जैसे —उण्हेह सीअला णवि (गरम के विपरीत ठढी अथवा गरम होती हुई भी ठढी) कुमा पा ४ १

(४) कृतकरण अर्थात् फिर से उसी क्रिया को करने अर्थ मे 'पुणरुत्त' अव्यय का प्रयोग होता है। जैसे —पेच्छ पुणरुत्तम् (एक बार देख चुकने पर भी फिर से देखो ।) कुमा पा ४ १

(५) विषाद, विकल्प, पश्चात्ताप, निश्चय और सत्य अर्थों मे हन्दि' अव्यय का प्रयोग किया जाता है। **विषाद अर्थ में जैसे :**—हन्दि णिदेसो (दु ख है कि हमारे लिए यह निदेश है ?), **विकल्प अर्थ मे जैसे :**—जीवइ हन्दि पिआ (पता नही मेरी प्रियतमा जीती है अथवा नही), **पश्चात्ताप अर्थ मे जैसे :**—हन्दि कि पिआ मुक्का ? (क्या हमने विरह

दुःख का बिना विचार किये ही प्रियतमा को छोड दिया ?), **निश्चय अर्थ मे जैसे :**—हन्दि मरण (मरना निश्चित है), **सत्य अर्थ मे जैसे :**—हन्दि जमो गिम्हो (ग्रीष्म यमराज है, यह बात सच है ।) कुमा, पा ४ २

(६) 'ग्रहण करो', 'लो' इस अर्थ मे 'हन्द' और हन्दि अव्यय का भी प्रयोग होता है । जैसे —हन्द महु हन्दि परिमल मिम (पुष्परस लो, यह गन्ध ग्रहण करो ।) कुमा पा ४ ३

(७) इव के अर्थ मे मिव, पिव, विव, व्व व, विअ, इन अव्ययो का प्रयोग प्राकृत मे विकल्प से होता है ।

मिव—जणणि **मिव** (माता के समान)

पिव—सुअ **पिव** (पुत्री के समान)

विव—सोअर **विव** (सोदर बहन के समान)

व्व—साअरो **व्व** (सागर के समान)

व—सहि **व** (सखी के समान)

विअ—नत्ति **विअ** (पौत्री के समान)

पक्ष मे इव जैसे —

इव—मउडो इव

(८) लक्षण (लक्ष्य करना) अर्थ मे जेण और तेण अव्ययों का प्रयोग होता है । जैसे —**जेण** अहुल्ला लवली (बिना खिली लवली को लक्ष्य करके), फुल्ल च धूलिकम्ब **तेण** फुडा चेअ गिम्हसिरी (खिले हुए धूलि कदम्ब को लक्ष्य करके ग्रीष्म की शोभा स्फुट ही मालूम पडती है ।) कुमा० पा० ४ ५

(९) अवधारण (अन्ययोग व्यवच्छेद) अर्थ मे णइ, चेअ, चिअ और च्च अव्ययो का प्रयोग होता है । जैसे —

णइ—गोलीणा **णइ** वसन्त-उउ-लच्छी (वसन्त ऋतु की शोभा बीत ही गइ ।)

चेअ—स्फुटा **चेअ** गिम्ह-सिरी (ग्रीष्म की शोभा स्फुट ही मालूम पडती है ।)

च्चिअ—ते **च्चिअ** धन्ना (वे ही धन्य हे ।)

च्च—स **च्च** सीलेण (स्वभाव से अच्छा-सत्-ही)

(१०) दो मे एक के निर्द्धारण तथा निश्चय अर्थों मे 'बले' अव्यय का प्रयोग होता है । **निर्द्धारण मे जैसे**—सयाण नोमालिआ **बले** रम्मा (सभी लताओं मे नवमल्लिका अथवा नवमालिका मन को आनन्द देनेवाली है ।), **निश्चय मे जैसे** :—**बले** ते मयणवाणा (निश्चय ही वे मदन (कामदेव), के बाण ह ।)

(११) 'किल' के अर्थ मे किर, इर, हिर अव्ययो का विकल्प से प्रयोग होता ह । पक्ष मे किल ही प्रयुक्त होता हे । जैसे —

किर—जा **किर** मल्ली (सभावना करता हूँ कि जो मल्ली है)

इर—जा **इर** जवा (सभावना करता हूँ कि जो जपा है)

हिर—सुत्ते जणम्मि जो **हिर** सद्दो चीरीण (लोगो के सो जाने पर जो झींगुरो का शब्द)

पक्ष मे **किल**—एव **किल** तेन सिविणए भणिआ ।

विशेष—किल शब्द के अर्थ प्रसिद्ध, सभावना आदि है ।

(१२) केवल अर्थ मे 'णवर' अव्यय का प्रयोग करना चाहिए। जैसे —सहइ चीरीण सुव्वए **णवर** (केवल झींगुरो का शब्द सुनाई पडता है।

(१३) आनन्तर्य अर्थ मे 'णवरि' अव्यय का प्रयोग होता है। जैसे —गाअइ किल तस्स मिसा **णवरि** वसन्तम्स गिम्हसिरी। (झींगुरो की ध्वनि के बहाने वसन्त के बाद आनेवाली ग्रीष्म शोभा हर्ष से मानो गान कर रही है) कुमा० पा० ४ ७

(१४) निवारण अर्थ मे 'अलाहि' अव्यय का प्रयोग करना उत्तम है। जैसे —पहिआ, **अलाहि** गन्तु (पथिको, जाना व्यर्थ है अर्थात मत जाओ।)

(१५) नञ् के अर्थ मे 'अण' और 'णाइ' अव्ययो का प्रयोग किया जाता है। जैसे —**अण** दइआण (कान्तारहित जनो का)। कुसलाइँ इह **णाइं** (यहाँ कुशल नही है)।

(१६) मा के अर्थ मे 'माइ' इस अव्यय का प्रयोग होता है। जैसे —**माइं** इह एध (यहाँ मत आओ।)

(१७) 'हद्धी' यह अव्यय निर्वेद अर्थ मे प्रयुक्त किया जाता है। जैसे —**हद्धी,** इअ व्व चीरीहि उल्लविअ

(१८) भय, वारण और विषाद अर्थो मे वेव्वे का प्रयोग करना चाहिए। जैसे —समुहोट्ठिअम्मि ममरे **वेव्वे** त्ति भणेइ मल्लिउच्चिणिरी। वारणखेअभएहि भणिउ **वेव्वे** वयसे त्ति (सम्मुखोत्थिते भ्रमरे वेव्वे इति भणति मल्लिकामुच्चेत्री। वारण खेदभयै भणित्वा वेव्वे 'वयस्ये' इति।)

(१९) वेव्व और वेव्वे का भी आमन्त्रण अर्थ मे प्रयोग किया जाता है। जैसे —वेव्व सहि चिट्ठसु (हमारा आमन्त्रण है ! सखि, रुको)

विशेष—आमन्त्रण अर्थ मे वेव्वे' का प्रयोग नियम १८ के मणिउ वेव्वे वयसेत्ति मे देखा जाता है।

(२०) सखी द्वारा आमन्त्रण अर्थ मे 'हला', मामि', और 'हले' अव्ययो का प्रयोग विकल्प से होता है। पक्ष मे 'सहि' यह प्रयुक्त होता है। जैसे —वेव्व सहि चिट्ठसु हला निसीढ मामि रम जासि कत्थ हले ? (हमारा आमन्त्रण है, सखि, रुको ! सखि बैठो ! सखि, क्रीडा करो ! जाती कहाँ हो सखि ?) कुमा पा ४ १०

(२१) सम्मुखीकरण अर्थ मे और सखी के आमन्त्रण अर्थ मे 'दे' इस अव्यय का प्रयोग करना चाहिए। **सामान्य संबोधन मे जैसे :—दे** पसिअ ताव सुदरि, **सख्यामन्त्रण मे जैसे :—दे** पसिअ किमसि रुट्ठा ? (हे सखि, प्रसन्न होओ, रूठी किस लिए हो ?)

(२२) दान, प्रश्न और निवारण अर्थों मे 'हु' अव्यय का प्रयोग किया जाता है। **दान मे जैसे :—हुं,** गिण्हसु कणय भायणय (मैने दे डाला, अब तुम यह कनक पात्र ले लो ?), **प्रश्न मे जैसे :—हु,** तुह पिओ न आओ ? (मै पूछती हूँ अभी तक तेरा प्रियतम नहीं आया ?), **निवारण में जैसे :—हुं,** कि तेणज्ज (अरे हटाओ भी, उससे अब हमारा क्या मतलब ?)

(२३) निश्चय, वितर्क, संभावना और विस्मय अर्थों में हु और खु का प्रयोग किया जाता है। **निश्चय में जैसे :**—सो हु अन्नरओ (यह निश्चित है कि वह दूसरी स्त्री में रम गया है।), तुमय खु माणइत्ता (यह निश्चित है कि तुम मानवती हो।), **वितर्क और संभावना अर्थों में जैसे :**— तस्स हु जुग्गा मि सा खु न तं (मैं ऐसा अंदाज करता हूं और यही संभव भी है कि वह दूसरी स्त्री उसके योग्य है और तुम उसके—प्रियतम के योग्य नहीं हो।) **विस्मय अर्थ में जैसे :**—एसो खु तुज्झ रमणो (आश्चर्य है कि यह तुम्हारा रमण है।) कुमा पा ४ १७

(२४) गर्हा, आक्षेप, विस्मय और सूचन अर्थों में ऊ का प्रयोग किया जाता है। **गर्हा में जैसे :**—तुज्झ ऊ रमणो (तुम्हारा निन्दित रमण), **आक्षेप में जैसे :**—ऊ किं मए भणिअ (अरे मैंने क्या कह डाला ?), **विस्मय अर्थ में जैसे :**—ऊ अच्छरा मह सही (अहो, मेरी सखी अप्सरा है), **सूचन अर्थ में जैसे :**—ऊ इअ हसेइ लोओ (तुम्हारे प्रियतम को दोष दे देकर सखियाँ हँसती है।) कुमा पा ४ १३

(२५) कुत्सा अर्थ में 'थू' अव्यय का प्रयोग किया जाता है। जैसे —थू र निकिट्ठ कलहसील (अरे अधम, झगडालू, तुझे थू है !)

(२६) 'रे' और 'अरे' क्रमश संभाषण और रतिकलह अर्थों में प्रयुक्त होते है। **संभाषण अर्थ में जैसे :**—रे हिअय

मडह–सरिआ, **रतिकलह मे अरे** जैसे —**अरे** मए सम मा करेसु उवहास।

२७) क्षेप, सभाषण और रतिकलह अर्थों मे 'हरे' इस अव्यय का प्रयोग करना चाहिए। **क्षेप मे** जैसे —**हरे** णिलज्ज, **संभाषण में** जैसे —**हरे** पुरिसा, **रतिकलह मे** जैसे —**हरे** वहुवल्लह।

(२८) सूचना और पश्चात्ताप अर्थों मे 'ओ' अव्यय का प्रयोग करना चाहिए। **सूचना अर्थ मे** जैसे —**ओ** सढो सि (मैं यह सूचित कर देना चाहता हूँ कि तुम शठ हो।) पश्चात्ताप मे जैसे —ओ किमसि दिट्ठो? (क्या तुम देख लिए गये?) कुमा पा ४ १३

(२९) सूचना, दु ख, सभाषण, अपराध, विस्मय, आनन्द, आदर, भय, खेद, विषाद, और पश्चात्ताप अर्थों मे 'अव्वो' इस अव्यय का प्रयोग करना चाहिए।

सूचना में जैसे —**अव्वो** नओ तुह पियो (यह सूचित करता हूँ कि तुम्हारा प्रियतम नत हो गया।), **दुःख मे** जैसे —**अव्वो** तम्मेसि (खेद है कि तुम उदास हो।), **सभाषण मे** जैसे —कि एसो **अव्वो** अन्नासत्तो (क्या यह दूसरी मे आसक्त है?), **अपराध एवं विस्मय में** जैसे —**अव्वो** तुज्झेरिसो माणो (प्रणययुक्त प्रणयी मे तुम्हारा ऐसा मान?) इससे अपराध और आश्चर्य दोनों प्रकट होते है। **आनन्द मे** जैसे —**अव्वो** पिअस्स समओ (यह आनन्द की बात है कि प्रियतम के आने का यह समय है।),

आदर मे जैसे —**अव्वो** सो एइ (मेरा प्रियतम यह आ रहा है ?), **भय मे** जैसे —रूसणो **अव्वो** (भय है कि वह थोडे अपराध पर भी रूठ जानेवाला है ।), **खेद और विषाद मे** जैसे —**अव्वो** कट्ठ (मैं खिन्न और विषण्ण हूँ ।), **पाश्चात्ताप मे** जैसे —**अव्वो** कि एसो सहि मए वरिओ (सखि, मैं तो पछता रही हूँ कि मैंने इसे बरा क्यो ?)

(३० सभावन अर्थ मे 'अइ' अव्यय का प्रयोग करना चाहिये । जैसे —अइ एसि रइ-घराओ (मेरी ऐसी सभावना है कि तुम रतिगृह से आ रही हो ।

(३१) निश्चय, विकल्प, अनुकम्प्य और सभावन अर्थों मे 'वणे' अव्यय का प्रयोग करना चाहिये । **निश्चय मे** जैसे —**वणे** देमि (निश्चय ही देता हूँ), **विकल्प मे** जैसे —होइ **वणे** न होइ (हो या न हो), **अनुकम्प्य मे** जैसे —दासो **वणे** न मुचइ (अनुकम्पा योग्य दास छोडा नही जाता), **संभावन मे** जैसे —नत्थि **वणे** ज न देइ विहिपरिणामो ।

(३२) विमर्श अर्थ मे (कुछ के मत से सस्कृत मन्ये अर्थ मे) मणे अव्यय का प्रयोग किया जाता है । जैसे —**मणे सूरो** (मेरी ऐसी मान्यता है कि यह सूर्य है ।)

(३३) आश्चर्य अर्थ मे अम्मो अव्यय का प्रयोग करना चाहिए । जैसे —स अम्मो पत्तो खु अप्पणो (वह प्रियतम अपने आप प्राप्त हो गया । आश्चर्य है ?)

(३४) स्वयम् के अर्थ मे अप्पणो का प्रयोग विकल्प से

करना चाहिए। देखिए ऊपर के ३३ वें नियम का उदाहरण। पक्ष मे 'सय' होता है।

(३५) प्रत्येकम् के अर्थ मे पाडिक्क, पाडिएक्क और पक्ष मे पत्तेअ का प्रयोग करना चाहिए। जैसे—**पाडिक्क** नइआओ, वाण वयसीओ **पाडिएक्क** च। **पत्तेअ** मित्ताइ (प्रत्येक नयिनाए, उनकी प्रत्येक सखियाँ और प्रत्येक मित्र)

(३६) पश्य के अर्थ मे 'उअ' का प्रयोग विकल्प से किया जाता है। जैसे —**उअ** एसो एइ (देखो, यह आ रहा है।)

(३७) इतरथा के अर्थ मे इहरा का प्रयोग विकल्प से किया जाता है। जैसे —**कहमिहरा** पुलइआ सि दट्ठुमिम (अन्यथा इसे देखकर तुम पुलकित क्यो हो ?)

(३८) झगिति और साम्प्रतम् के अर्थ मे एक्कसरिअ का प्रयोग होता है। जैसे —एक्कसरिअ झगिति साम्प्रतम् वा।

(३९) मुधा के अर्थ मे मोरउल्ला का प्रयोग किया जाता है। जैसे —मा तम्म मोरउल्ला ? (व्यर्थ उदास मत होओ ?)

(४०) अर्द्ध और ईषत् मे 'दर' इस अव्यय का प्रयोग किया जाता है। जैसे —दरविअसिअ (अर्ध विकसित अथवा ईषद्विकसित)

(४१) प्रश्न अर्थ मे किणो अव्यय का प्रयोग करना चाहिए। जैसे —किणो धुवसि ? (कॉपते हो क्या ?)

(४२) पादपूर्ति के लिए इ, जे, र का प्रयोग करना चाहिए। जैसे —वारविलया इ एआ, गिम्ह सुह माणिउ पयट्टा जे, पिअन्ति पिक्क दक्ख रस।

विशेष—अहो, हहो, हेहो, हा, नाम, अहह, ही, सि, अयि, अहाह, अरि, रि, हो, इत्यादि अव्ययो का प्रयोग प्राकृत मे सस्कृत के समान करना चाहिए।

(४३) अपि के अर्थ मे पि और वि का प्रयोग करना चाहिए जैसे —इअ जपि त पि लविराओ।



षष्ठ अध्याय

[तिङन्त विचार]

(१) प्राकृत मे क्यङ्, क्यष् आदि प्रत्ययों के विधान के कोई विशेष नियम नहीं है। केवल हेमचन्द्र के व्याकरण मे एक सूत्र (३ १३८) है, जिससे य के लुक् के विषय मे ज्ञात होता है। जैसे —गरुआइ, गरुआअइ, दमदमाइ, दमदमा अइ, लोहिआइ, लोहिआअइ।

(२) प्राकृत मे गणभेद (धातुओ के वर्गीकरण) की व्यवस्था नही की जाती है।

(३) प्राकृत मे तिप् आदि तिङ्[1] कहलानेवाले प्रत्ययो के वर्तमान काल मे वक्ष्यमाण रूप होते हैं। तथा अदन्त धातुओं को छोडकर शेष धातुओं में 'आत्मनेपदी' और 'परस्मैपदी' का भेद नही माना जाता[2]।

वर्तमान काल के प्रत्यय

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	इ	न्ति, न्ते, इरे
मध्यम पु०	सि	इत्था, ह
उत्तम पु०	मि	मो, मु, मा

१ पाणिनि (३ ४ ३८) के अनुसार तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इ, वहिङ्, महिङ्, इनमें ति स ङ् तक तिङ् कहे जाते हैं।

२ शौरसेनी में सभी धातु परस्मैपदी होते है।

(४) अकारान्त आत्मनेपदी धातुओ के प्रथम मध्यम पुरुषो के एकवचन के स्थान मे क्रमश 'ए' और 'से' आदेश विकल्प से होते है। जैसे —तुवरए (त्वरते), तुवरसे (त्वरसे)

(५) अदन्त धातु से 'मि' के पर मे रहने पर पूर्व के 'अ' का आत्व विकल्प से होता है। जैसे —हसामि, हसमि इत्यादि।

(६) अकारान्त धातु से 'मो' 'मु' और 'म' पर मे रहे तो पूर्व के अकार के स्थान मे 'इ' और 'आ' होते है। कही कहीं ए भी होता है। जैसे —हसिमो, हसामो, हसेमो, हसिमु, हसेमु इत्यादि।

वर्तमान मे अकारान्त **भण धातु** के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	भणइ, भणए	भणन्ति, भणन्ते भणिरे
मध्यम पु०	भणसि, भणसे	भणह, भणित्था
उत्तम पु०	भणामि, भणमि	भणामो, भणिमो, भणेमो इत्यादि

विशेष—यो ही हस और पठ आदि सभी अकारान्त धातुओ के रूपो को जानना चाहिए। केवल अस धातु के रूप विशेष नियमानुसार सिद्ध होते है।

वर्तमान मे **अस धातु** के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	अच्छइ, अत्थि	अच्छति, अत्थि
मध्यम पु०	सि, अच्छसि, अत्थि	अत्थि, अच्छित्था, अच्छह
उत्तम पु०	म्हि, अत्थि, अच्छामि	म्हो, म्हा, इत्यादि

(७) स्वरान्त धातु से भूत काल मे सभी पुरुषों और वचनो मे विहित प्रत्यय के स्थान मे 'ही' 'सि' और 'हीअ'[1] आदेश होते है। जैसे —कासी, काही, काहीअ, ठासी, ठाही, ठाहीअ (अकार्षीत्, अकरोत्, चकार, तथा अस्थात्, अतिष्ठत्, तस्थौ)

विशेष—प्राकृतप्रकाश मे ही और सी का विधान नहीं देखा जाता। उसके अनुसार एकाच धातु से केवल 'हीअ' आदेश होता है। देखिए—वर० ७ २४

(८) व्यञ्जनान्त धातु से भूतकाल मे विहित सभी प्रत्ययो के स्थान मे 'इअ' आदेश होता है। जैसे —गण्हीअ (अग्रहीत्, अगृह्णात्, जग्राह)

विशेष—(क) केवल अस धातु के साथ भूतार्थक कुल पुरुष और वचन के प्रत्ययो के स्थान मे आसि' और 'अहेसि' आदेश होते है। जैसे —सो, तुमे अह वा आसि। एव अहेसि। देखिए—तेनास्तेरास्यहासी। हेम० ३ ६४

(ख) प्राकृतप्रकाश के अनुसार, अस धातु का, केवल भूतार्थक एकवचन के साथ एकमात्र 'आसि' आदेश होता है। देखिए वर ७ २५

भविष्यत् काल मे तिवादि तिङ् प्रत्ययो के स्वरूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	हिइ	हिन्ति, हिन्ते, हिरे
मध्यम पु०	हिसि	हित्थ, हिह
उत्तम पु०	हिमि, हामि, स्सामि, स्सम्	हिस्सा, हिहा

१ देखिए—सी–ही–हीअ भूतार्थस्य। हेम० ३ १६२

भविष्यत् काल मे **भू धातु** के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	होहिइ[1]	होहिन्ति, होहिन्ते, होहिरे
मध्यम पु०	होहिसि[2]	होहित्थ, होहिह
उत्तम पु०	होस्सामि, होहामि होस्सामो, होहामो होस्सामु, होहामु, होस्साम, होहाम, होहिमु, होहिम[3]	होहामो, होस्सामो इत्यादि

भविष्यत् काल मे **कृ धातु** के रूप —

प्रथम पु०	काहिइ	काहिति
मध्यम पु०	काहिसि	काहित्था
उत्तम पु०	काह, काहिमि	काइमो

भविष्यत् काल मे **हस धातु** के रूप —

प्रथम पु०	हसिहि	हसिहिन्ति
मध्यम पु०	हसिहिसि	हसिहित्था
उत्तम पु०	हसिस्स	हसिस्सामो, हसिहामो

---

१ प्राकृतप्रकाश के अनुसार प्रथम पुरुष के एकवचन में होहिइ, हवहिइ, होज्ज, होज्जा होज्जहिइ, होज्जाहिइ, होसइ होही और प्रथम पुरुष के बहुवचन में होहिन्त, हुविहिन्ति रूप होते हैं।

२ प्राकृतप्रकाश के अनुसार मध्यम पुरुष के एकवचन मे—होहिहिसि, हुविहिहि, हुविहिसि, होहिहि तथा बहुवचन मे होहित्था, होहिहु, हुवित्था, हविहिह रूप होते हैं।

३ प्राकृतप्रकाश के अनुसार उत्तम पुरुष के एकवचन मे होस्सामि, होस्मामो, होहामि, होहिमि, होस्स, होहिमो और बहुवचन मे होहिस्सा, होहित्था, होहिओ, होहिमु, होहामो, होहिम, होस्सामो, होस्सामु, होस्साम रूप होते है।

इसी प्रकार से भण, पठ आदि के रूप भी चलते हैं—

(६) कृ, दा, स + गम, रुद, विद, दृश, वच, भिद बुध, श्रु, गम, मुच और छिद धातु भविष्यत् काल मे, उत्तम पुरुष के एकवचन मे, नीचे लिखे विशिष्ट रूपो को प्राप्त करते हैं। इतर (प्रथम और मध्यम) पुरुषो मे श्रु धातु के रूपो के समान रूप प्राप्त करते हैं।

धातुओं के नाम	उत्तम पुरुष के एकवचन के रूप
कृ	काह, काहिमि
दा	दाह, दाहिमि
स + गम	सगच्छ
रुद	रोच्छ
विद	वेच्छ
दृश	देच्छ
वच	वेच्छ
भिद	भेच्छ
बुध	भोच्छ
श्रु	सोच्छ, सोच्छिस्स, सोच्छिमि इत्यादि
गम	गच्छ
मुच	मोच्छ
छिद	छेच्छ

भविष्यत् काल के प्रथम और मध्यम पुरुषो मे श्रु धातु के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	सोच्छिइ, सोच्छिहिइ	सोच्छिन्ति, सोच्छिहिन्ति

	एकवचन	बहुवचन
मध्यम पु०	सोच्छिसि, सोच्छिहिसि	सोच्छित्था इत्यादि
उत्तम पु०	सोच्छं	सोच्छिमो, सोच्छिहिमो इत्यादि

विध्याद्यर्थक तिङ् —

प्रथम पु०	उ	न्तु
मध्यम पु०	सु, हि	ह
उत्तम पु०	मु	मो

हस धातु के विध्याद्यर्थ मे रूप —

प्रथम पु०	हसउ	हसन्तु, हसेन्तु
मध्यम पु०	हससु हसहि, हस, हसेज्जसु, हसेज्जहि, हसेज्जे	हसह
उत्तम पु०	हसमु	हसामो

इसी प्रकार पठ आदि धातुओ के रूप जाने जा सकते है। किन्ही आचार्यो के मत से विध्यादि मे वर्तमान के तुल्य ही रूप होते हैं। जैसे —जअइ[1] इत्यादि।

(१०) वर्तमान, भविष्यत् और विध्यादि मे उत्पन्न प्रत्यय के स्थान मे ज्ज और ज्जा ये दोनो आदेश विकल्प से होते है। पक्ष मे यथाप्राप्त होते है। जेसे —हसेज्ज, हसेज्जा (हसति, हसिष्यति, हसतु, हसेत् इत्यादि)

विशेष—(क) हेमचन्द्र के मत से स्वरान्त धातुओ के विषय मे ही उक्त नियम लागू होता है।

(ख) शौरसेनी मे उक्त नियम लागू नहीं होता।

---

१ शौरसेनी में जि धातु के विध्यादि में 'जेदु' इत्यादि रूप होते हैं।

(११) धातु से वर्तमान, भविष्यत् और विध्यादि अर्थवाले तिङ् यदि पर हो तो धातु और प्रत्यय के मध्य मे भी ज्ज और ज्जा विकल्प से होते है। होज्जइ, होज्जाइ (भवति भविष्यति, भवतु, भूयात् इत्यादि)

(१२) शतृ और शानच् इन दोनो मे एक-एक के स्थान मे न्त और माण ये दो आदेश होते है। जैसे —पढन्तो, पढमाणो, हसन्तो, हसमाणो (पठन् , हसन्)

(१३) स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान शतृ और शानच् के स्थान मे ई, न्ती और माणा आदेश होते है । जैसे —**उवहसमाणि** सरोरुह **विहसन्ति हसइं** व कुमुइणि (उपहसन्ती, विहसन्तीम्, हसन्तीमिव) कुमा पा ५ १०६

(१४) वर्तमान, विध्यादि और शतृ प्रत्ययों के पर मे रहने पर अकार के स्थान मे एकार विकल्प से होता है। जैसे —हसेइ, हसइ, हसेउ, हसउ, हसेतो, हसतो (हसति, हसेत्, हसन्) कहीं पर नही भी होता है। जैसे —जअइ। कही आत्व भी होता है। जैसे —सुणाउ।

विशेष—शौरसेनी मे धातु और तिङ् के मध्य मे अधिकतर ए और आ होते है।

(१५) भाव और कर्म मे विहित यक् के स्थान मे 'इअ' और 'इज्ज' आदेश होते है । जैसे —हसिअइ, हसिज्जइ (हस्यते)

विशेष—दृश और वच के भाव और कर्म मे क्रमश दीश और वुच्च रूप होते है। दीसइ (दृश्यते), वुच्चइ (उच्यते)

(१६ क्त्वा, तुम, तव्य और भविष्यत् काल मे विहित प्रत्यय के पर मे रहने पर धातु के अन्त्य अ के स्थान मे 'ए'

और 'इ' होते है। जैसे —हसेऊण, हसीऊण (हसित्वा), हसेउ, हसिउ (हसितुम्), हसेअव्व, हसिअव्व (हसितव्यम्), हसेहिइ, हसिहिइ (हसिष्यति)

विशेष—उक्त नियम अदन्त धातुओ को छोड अन्य धातुओ मे लागू नही होता। जैसे —काऊण (कृत्वा)

(१७) क्त प्रत्यय के पर मे रहने पर धातु के अन्त्य 'अ' का 'इ' होता है। जैसे —हसिअ, पठिअ (हसितम्, पठितम्)

(१८) ण्यन्त धातु के णि के स्थान मे अत्, एत्, आव् और आवे ये चार आदेश होते है।

(१९) भाव और कर्म अर्थ मे विहित क्त प्रत्यय के पर रहने पर णि का लुक और (पर्यायेण लुगभाव होने पर) 'अवि' आदेश होते है। णिच् के पर मे रहने पर भ्रम धातु के स्थान मे विकल्प से 'भमाड' आदेश होता है। जैसे —कारिअ, कराविअ (कारितम्), सोसिअ, सोसविअ (शोषितम्), तोसिअ, तोसविअ (तोषितम्), कारीअइ, कराविअइ, कारिज्जइ, कराविज्जइ (कार्यते), भमाडइ, भमाडेइ, भामेइ, भमावइ (भ्रामयति)

धात्वादेशसंबंधी नियम—

(२०) व्यञ्जनान्त धातु के अन्त्य व्यञ्जन के आगे अ आकर मिलता है। जैसे —हसइ (हसति) इत्यादि।

(२१) अकारान्त धातुओ को छोडकर अन्य स्वरान्त धातु के अन्त मे अकार का आगम विकल्प से होता है। जैसे —पाइ, पाअइ इत्यादि।

(२२) चि, जि, हु, श्रु, स्तु, लू, पू और धू धातुओं के

अन्त मे णकार का आगम होता है और इनके दीर्घ स्वर का ह्रस्व होता है। जैसे —चिणइ, जिणइ, हुणइ, लुणइ इत्यादि।

(२३) भाव और कर्म अर्थ मे वर्तमान च्यादि धातुओ के अन्त मे द्विरुक्त व (व्व) का आगम विकल्प से होता है। जैसे —चिव्वइ, चिणिज्जइ (चीयते) इत्यादि।

(२४) भाव और कर्म अर्थ मे वर्तमान चिञ, हन और खन धातुओ के अन्त मे द्विरुक्त म (म्म) का आगम विकल्प से होता है एव यक का लोप होता है। हन धातु के विषय मे कर्ता अर्थ मे भी द्विरुक्त म (म्म) होता है। जैसे —चिम्मइ हम्मइ (चीयते, हन्यते)

विशेष—शौरसेनी मे यह नियम प्रवृत्त नही होता है।

(२५) भाव और कर्म अर्थ मे वर्तमान दुह, लिह, वह और रुध धातुओ के अन्त्य मे द्विरुक्त म (म्म अथवा किसी किसी के मत से व्भ) विकल्प से होते हैं, यक का लोप भी होता है। जैसे —दुब्भइ, दुहिज्जइ (दुह्यते) इत्यादि।

(२६) भाव और कर्म मे वर्तमान गमादि धातुओ के अन्त्य वर्ण का द्वित्व विकल्प से होता और यक का लोप भी होता है। जैसे —गम्मइ, गमिज्जइ, हस्सइ, हसिज्जइ (गम्यते, हस्यते)

विशेष—नीचे लिखे धातु नीचे लिखे अनुसार विशेष नियमों का अनुसरण करते है —

सं० धातु	भावकर्म मे प्रा०	भावकर्ममें सं०
दह	डह्यइ, डहिज्जइ	दह्यते
वध	वह्यइ, वधिज्जइ	वध्यते
स + रुध	सरुब्भइ, सरुधिज्जइ	सरुध्यते
अनु + रुध	अणरुब्भइ, अणुरुधिज्जइ	अनुरुध्यते

उ + रुध	उवरुह्यइ, उवरुधिज्जइ	उपरुध्यते
हृ	हीरइ, हरिज्जइ	ह्रियते
कृ	कीरइ, करिज्जइ	क्रियते
तॄ	तीरइ, तरिज्जइ	तीर्यते
ज	जीरइ, जरिज्जइ	जीर्यते
अर्ज	विढप्पइ, विढविज्जइ, अजिज्जइ	अर्ज्यते
ज्ञा	णच्चइ, णज्जइ, जाणिज्जइ, णाइज्जइ	ज्ञायते
वि+आ+हृ	वाहिप्पइ, वाहरिज्जइ	व्याह्रियते
आ + रभ	आढप्पइ, आढवीअइ	आरभ्यते
स्निह	सिप्पइ	स्निह्यते
सिच	सिप्पइ	सिच्यते
ग्रह	घेप्पइ, गण्हिज्जइ	गृह्यते
स्पृश	छिप्पइ	स्पृश्यते

(२७) धातु के अन्त्य उवर्ण के स्थान मे अव आदेश होता है। जैसे —ह्नु धातु का 'एह्व' इत्यादि।

(२८) धातु के अन्त्य ऋवर्ण के स्थान मे 'अर' आदेश होता है। जैसे —कृ का कर इत्यादि।

विशेष—वृषादि के ऋकार का 'अरि' आदेश होता है। जैसे —वृष का वरिस कृष का करिस इत्यादि।

(२९) धातु के इवर्ण और उवर्ण का गुण होता है। जैसे —नेइ (नयति), मोत्तुण (मुक्त्वा)

(३०) रुष आदि धातुओं के स्वर का दीर्घ होता है। जैसे —रूसइ, पूसइ, सीसइ, तूसइ, दूसइ, (रुष्यति, पुष्णाति शिनष्टि, तुष्यति, दुष्यति)

(३१) धातुओ मे स्वरो के स्थान मे अन्य स्वर बाहुल्येन होते है। जैसे —हवइ,[1] हिवइ (भवति), चिणइ,[2] चुणइ (चिनोति), सद्दहण, सद्दहाण (श्रद्धानम्), धावइ, धुवइ (धावति), रुवइ, रोवइ (रोदिति)

विशेष—बाहुल्येन कहने से—देइ, लेइ, विहेइ नासइ आदि प्रयोगो मे नित्य ही धातु के एकस्वर के स्थान मे दूसरा स्वर हुआ।

(३२) कुछ सस्कृत धातुओं के प्राकृत रूपान्तर नीचे लिखे अनुसार होते हैं —

सस्कृत धातु	प्राकृत रूपान्तर
कथ	वज्जर, पज्जर, उप्पाल, पिसुण, सघ, बोल्ल, चव, जम्प, सीस, साह तथा दु ख अर्थ मे णिव्वर।
जुगुप्स	झुण, दुगुच्छ, दुगुच्छ
बुभुक्ष	णीख पक्ष मे बुहुक्ख
ध्या	झा
गै	गा
ज्ञा	जाण, मुण
उद् + ध्मा	धुमा
श्रद् + धा	दह (सद्दहइ)
पा (पीने मे)	पिज्ज, डल्ल, पट्ट, घोट्ट
उद् + वा	ओरुम्वा, वसुआ
नि + द्रा	ओहीर, उङ्घ

१ देखिए—भुवेर्होहुवहवा । हेम ४ ६०

२ देखिए—इसी पुस्तक का ६ २२

स + भावि	आसघ
उद् + नामि	उत्थघ (उत्थघ), उल्लाल, गुलुगुच्छ, उप्पेल (किसी किसी के मत से उस्याव भी)
प्र + स्थापि	पट्ठव, पेण्डव, पट्ठाव
वि + ज्ञपि	वोक्क, आवुक्क (हेमचन्द्र के अनुसार अवुक्क), विण्णव
अपि	अल्लिव, चच्चुप्प, पणाम, अप्प.
यापि	जव, जाव
प्लावि	उम्वाल, पव्वाल, पाव
विकोशि(नामधातुण्यन्त)	पक्खोड (कसी ? के मत से परकोड)
रोमन्थि	उग्गाल (हेम० ओग्गाल) वग्गोल, रोमथ
कामि	णिहुव, काम
प्र + काशि	पुव्व, पआ (या) स
कम्पि	विच्छोल, कम्प
आ + रोहि (पि)	वल, रोव
दोलि	रङ्खोल, दोल (मतान्तर से ढोल भी)
रञ्जि	राव, रञ्ज
घट + णिच्	परिवाड, घड
वेष्टि	परिआल, वेढ
क्री	किण
वि + क्री	क्के, क्किण, (विक्केइ, विक्कणइ)
भी	भा, बीह
आ + ली	अल्ली (अलियइ, अल्लीणो)
नि + ली	णिलीअ, णिलुक्क, णिरिग्घ, लुक्क, लिक्क, ल्हिक्क, निलिज्ज
वि + ली	विरा, विलिज्ज

रु	रुञ्ज, रुण्ट, रव
श्रु	हण, सुण
धु	धूव, धुण
भू	हो, हुव, हव, हु,[1] णिव्वड,[2] हू,[3] हुप्प[4]
कृ	कुण, कर णिआर,[5] णिट्ठुह[6] सदाण,[7] वावम्फ,[8] णिच्चोल या णिव्वोल,[9] पयल्ल,[10] पइल्ल, णीलुच्छ[11] कम्म,[12] गुलल

---

१ विद्वर्जित प्रत्यय के आने पर भू के स्थान में हु आदेश विकल्प से होता है। हेम ४ ६१

२ पृथक् होना और स्पष्ट होना अर्थ में णिव्वड आदेश होता है। हेम ४ ६२

३ क्त प्रत्यय के पर में रहने पर हू आदेश होता है। हेम ४ ६४

४ प्रभु होना अर्थ में प्र उपसर्ग पूर्व में रहने पर भू के स्थान में हुप्प विकल्प से होता है। हेम ४ ६३

५ काणेक्षित अर्थ में। देखो—'काणेक्षिते णिआर।' हेम ४ ६६

६ निष्टम्भ और अवष्टम्भ अर्थो में क्रमश णिट्ठुह और सदाण आदेश होते हैं। देखो—'निष्टम्भावष्टम्भे ' हेम ४ ६७

७ श्रम अर्थ में। देखो—'श्रमे वावम्फ।' हेम ४ ६८

८ क्रोध से ओठ मलिन करने अर्थ में। देखो—'मन्युनौष्ठमालिन्ये हेम ४ ६९

९ शिथिल होना या लम्बा पडना अर्थ में। देखो-'शैथिल्यलम्बने हेम ४ ७०

१० निप्पात और आच्छोटन में। हेम ४ ७१

११ क्षौरकर्म में। हेम ४ ७२

१२ चाटुकरण में। हेम ४ ७३

स्मृ	कर, कूर (हेमचन्द्र के मत से झर और झूर), भर, भल, लढ, विम्हर, सुमर, पयर, पम्हुह, सर
वि + स्मृ	पम्हुस, विम्हर, वीसर
वि + आ + हृ	कोक्क, पोक्क, वाहर
मुच	छड्ड, अवहेड, मेल्ल, (हेमचन्द्र के मत से उस्सिक्क भी) रे अव, णिल्लुञ्छ, धसाड, णिव्वल[1]
वञ्च	वेहव, वेलव, जूरव, उमच्छ
रच	रणह (हेम० के मत से उग्गह) अवह, विडविड्ड, उवहत्थ[2] सारव, समार और केलाय
सिच	सिञ्च सिम्प । पक्ष मे सेअ
प्रच्छ	पुच्छ
गर्ज	बुक्क, ढिक[3]
राज	रग्घ, छज्ज, सह, रीर, रेह, राय
प्र + सृ	पयल्ल, उवेल्ल महमह[4]
नि + सृ	नीहर (हेम० के अनुसार णीहर), नील, धाड, वरहाड । पक्ष मे नीसर
जागृ	जग्ग । पक्ष मे जागर
वि + आ + पृ	आजड्ड । पक्ष मे वावर

---

१ दुःखमोचन अर्थ में । देखो—'दुःखे णिव्वल ।' हेम० ४ ९२

२ उवहत्थ से केलाय तक जितने आदेश हैं सम् और आङ् पूर्वक रच के स्थान में विकल्प से होते हैं । देखो हेम० ४ ९५

३ वृषभ के गर्जन अर्थ में । देखो—'वृषे ढिक्क ।' हेम० ४ ९९

४ गन्ध प्रसार में ।

स + वृ०	साहर, साहट्ट। पक्ष मे सवर
आ + दृ	सन्नाम। पक्ष मे आदर
प्र + हृ	सार। पक्ष मे पहर
अव + तॄ	ओह, ओरस। पक्ष मे ओअर
शक	चय, तर, तीर, पार। पक्ष मे सक्क
त्यज	चय
तॄ	तर
पारि (पॄ + णिच्)	पार
फक्क	थक्क। किसी के मत से छक्क
श्लाघ	सलह
खच	वेअड। पक्ष मे खच
पच	सोल्ल, पउल अथवा पउल्ल। पक्ष मे पअ
मस्ज	आउड्ड, णिउड्ड, वुड्ड, खुप्प
पुञ्ज	आरोल, वमाल। पक्ष मे पुज
लज्ज	जीह। पक्ष मे लज्ज
उद् + विज	उव्विव
तिज	ओसुक्क
मृज	उग्घुस, लुञ्छ, पुञ्छ, पुस, फुस, पुस, लुह, हुल, रोसाण
भञ्ज	वेमय, मुसुमूर, मूर, सूर, सूड, विर, पविरञ्ज, करञ्ज नीरञ्ज
व्रज	वञ्च
अनु + व्रज	पडिअग्ग, अणुवञ्च
अर्ज्ज	विढव, अज्ज
युज	जुञ्ज, जुज्ज, जुप्प
भुज	भुञ्ज, जिम, जेम कम्म, अण्ह, समाण, चड्ड
उप + भुज	कम्मव

घट	गढ। पक्ष मे घड
स + घट	सगल। पक्ष मे सघड
स्फुट	फुट्ट, फुड, मुर[1]
मण्ड	चिञ्च, चिञ्चिअ, चिञ्चिल्ल, रीड, टिविडिक्क
तुड	तोड, तुट्ट, खुट्ट, खुड, उखुड उल्लुक्क, णिलुक्क, लुक्क, उल्लूर
घूर्ण	घुल, घोल, घुल्ल, पहल्ल
नृत	नच्च
क्वथ	अट्ट, कढ
ग्रन्थ	गण्ठ
मन्थ	विरोल, घुमल
ह्लद और ह्लाद	अवअच्छ
नि + सद	णुमज्ज
छिद	दुहाव, णिच्छल्ल, णिज्झोड, णिव्वर, णिल्लूर, लूर छिन्द
आ + छिद	ओअन्द, उद्दाल
विद	विज्ज
मृद	मल, मढ, परिहट्ट, खड्ड, चड्ड, मड्ड, पन्नाड अथवा परणाड
स्पन्द	चुलुचुलु, फन्द
निर् + पद	निव्वल, निप्पज्ज
वि, स + वद	विअट्ट, विलोट्ट, फस और पक्ष मे विसवय
शद	झड, पक्खोड
आ + क्रन्द	णीहर। पक्ष मे अक्कन्द
खिद	जूर, विसूर। पक्ष मे खिज्ज

१ हास से विकसने अर्थ में।

रुध	उत्थङ्घ या उत्तङ्घ । पक्ष मे रुन्ध
नि + सिध	हक्क । पक्ष मे निसेह
क्रुध	जूर । पक्ष मे कुज्झ
जन	जा, जम्म
तन	तड, तड्ड, तड्डव, विरल्ल और तण
तृप	थिप्प
उप + सृप	अल्लिअ । पक्ष मे उवसप्प
स + तप	झख । पक्ष मे सतप्प
वि + आप	ओअग्ग । पक्ष मे वाव
स + आप	समाण । पक्ष मे समाव
क्षिप	गलत्थ, अड्डक्ख, सोल्ल पेल्ल, णोल्ल, छुह, हुल, परी, धत्त । पक्ष मे खिव
उद् + क्षिप	गुलगुञ्छ, उत्थघ, अल्लत्थ, उब्भुत्त, उस्सिक्क, हक्खुव । पक्ष मे उक्खिव
आ + क्षिप	णीरव । पक्ष मे अक्खिव
स्वप	कमवस, लिस, लोट्ट । पक्ष मे सुञ्ज
वेप	आयम्ब, आयज्झ । पक्ष मे वेव
वि + लप	झख, वडवड । पक्ष मे विलव
लिप	लिम्प
गुप	विर, णड । पक्ष मे गुप्प
कृप	अवहाव[1]
प्र + दीप	तेअव, सन्दुम, सन्धुक्क, अब्भुत्त और पक्ष मे पलीव
लुभ	सभाव । पक्ष मे लुब्भ
क्षुभ	खउर, पड्डुह । पक्ष मे खुब्भ

१ अवहावेइ = कृपा करोतीत्यर्थ । हेम० ४ १५१

आ + रभ	आरभ, आढव । पक्ष में आरभ
उप, आ + लभ	झख, पच्चार, वेलव । पक्ष मे उवालम्भ
जृम्भ	जम्भा[1]
नम	णिसुढ[2] । पक्ष मे णव
वि + श्रम	णिव्वा । पक्ष मे वीसम
आ + क्रम	ओहाव, उत्थार, छुन्द । पक्ष मे अक्कम
भ्रम	टिरिटिल्ल, ढुण्ढुल्ल, ढण्ढल्ल, चक्कम्म, भम्मड, भमड, भमाड, तलअण्ट, झण्ट, झम्प, भुम, गुम, फुम, फुस, ढुम, ढुस, परी, पर, भम
गम	अई, अइच्छ, अणुवज्ज, अवज्जस, उक्कुस, अक्कुस, पच्चड्ड, पच्छन्द, णिम्मह, णी, णीण, णीलुक्क, पदअ रभ, परिअल्ल, वोल, परिअल, णिरिणास, णिवह, अवसेह, अवहर, गच्छ, अहिपच्चुअ,[3] अब्भिड,[4] सगच्छ, उम्मत्थ,[5] अब्भागच्छ, पलोट्ट,[6] पच्चागच्छ
शम	पडिसा, परिसाम । पक्ष मे सम
रम	सखुड्ड, खेड्ड, उब्भाव, किलिकिञ्च, कोट्टुम, मोट्टाय, णीसर, वेल्ल और पक्ष मे रम

---

१ वि पूर्व में रहने पर उक्त आदेश नहीं होते हैं । देखो—'अवेर्जृम्भो जम्भा ।' हेम० ४ १५७ में अवेरिति किम् ? केलिपसरो विअम्भइ ।

२ भाराक्रान्त कर्ता में ।

३ आङ् पूर्वक गम का उक्त आदेश होता है ।

४ सम् पूर्वक गम का उक्त आदेश होता है ।

५ अभि और आङ् पूर्वक गम का उक्त आदेश होता है ।

६ प्रति और आङ् पूर्वक गम का उक्त आदेश होता है ।

पूर	अग्घाड, अग्घव, उद्धुम, अङ्गुम, अहिरेम पक्ष मे पूर
त्वर	तुअर, जअड, तूर,[1] तुर[2]
क्षर	खिर, झर, पज्झर पच्चड, णिच्चल, णिटटुअ
चल	चल्ल, चल
उच्छल	उत्थल
वि + गल	थिप्प, णिटटुह
दल	विसट्ट, दल
वल	वम्फ, वल
मील	मिल्ल, मील
भ्रश	फिड, फिट्ट, फुड फुट्ट, चुक्क, भुल्ल पक्ष मे भस
नश	णिरणास, णिवह, अवसेह, पडिसा, सेह, अवहर। पक्ष मे नस्स
अव + काश	ओआस
स + दिश	अप्पाह
दृश	निअच्छ, पेच्छ, अवयच्छ, अवयज्झ, वज्ज, सव्वव, देक्ख, ओअक्ख, अवअक्ख, पुलोअ, निअ, अवआस
स्पृश	फास, फस, फरिस, छिव, छिह, आलुङ्ख, आलिह
प्र + विश	रिअ। पक्ष मे पविस
प्र + मृष	पम्हुस

१ त्यादि और शतृप्रत्ययों के पर में रहने पर तूर होता है। जैसे —तूरई, तूरन्तो।

२ त्यादि से भिन्न में तुर होता है। जैसे तुरिओ, तुरन्तो।

प्र + मुष	पम्हुस
पिष	णिवह, णिरिणास, णिरिणज्ज, रोञ्च, चड्ड, पीस
भष	भुक्क, भस
कृष	कड्ढ, साअड्ढ, अञ्च, अणच्छ, आयञ्छ, आइञ्छ, करिस, अक्खोड[1]
गवेष	ढुण्ढुल्ल, ढण्ढोल, गमेस, घत्त, गवेस
श्लिष	सामग्ग, अवयास, परिअत। पक्ष मे सिलेस
म्रक्ष	चोप्पड, मक्ख
काङ्क्ष	आह, अहिलङ्घ, अहिलङ्ख, वच्च, वम्फ, मह, सिह, विलुम्प
प्रति + ईक्ष	सामय, विहीर, विरमाल। पक्ष मे पडिक्ख
तक्ष	तच्छ, चच्छ, रम्प, रम्फ, तक्ख
वि + कस	कोआस, वोसट्ट, विअस
हस	गुञ्ज, हस
स्रंस	ल्हस, डिम्भ, सस
त्रस	डर, बोज्ज, वज्ज
नि + अस	णिम, णुम
परि + अस	पलोट्ट, पल्लट्ट, पल्हत्थ
निर् + श्वस	झंख, नीसस
उद् + लस	ऊसल, ऊसुम्भ, णिल्लस, पुल्लआअ, गुञ्जोल्ल, आरोअ, उल्लस
भास	भिस, भास
ग्रस	घिस, गस
अव + गाह	ओवाह (उगाह), ओगाह (उगाह)

१ म्यान से तलवार खीचने अर्थ में।

आ + रुह	चड, वलग्ग, आरुह
मुह	गुम्म, गुम्मड, मुज्झ
दह	अहिऊल, आलुङ्ख, डह
ग्रह	बिण्ह, हर, पङ्ग, निरुवार, अहिपच्चुअ, घेत्[1]
पच	वोत्[2]

(३३) क्त्वा, तुम और तव्य के पर मे रहने पर रुद, भुज और मुच धातुओ के अन्त्य वर्ण का त होता है। जैसे —रोत्तूण, रोत्तु, रोत्तव्व, भोत्तूण, भोत्तु, भोत्तव्व, मोत्तूण, मोत्तु मोत्तव्व।

(३४) भूत और भविष्यत काल के प्रत्ययो एव त्त्वा, तुम और तव्य के पर मे रहने पर कृ धातु का 'का' आदेश होता है।

(३५) कुछ सस्कृत धातुओ के निम्नलिखित प्राकृत आदेश होते है —

सस्कृत	प्राकृत	संस्कृत	प्राकृत
इष	इच्छ	यम	जच्छ
अस	अच्छ	छिद्	छिद
भिद्	भिद	युध	जुह्य
बुध	बुह्य	गृध	गिह्य
क्रुध	कुह्य	सिध	सिह्य
सद्	सड	पत	पड
वृध	बढ	वेष्ट	वेड
सवेष्ट	सवेल्ल	उद् + वेष्ट	उव्वेल्ल, उव्वेढ

(३६) खाद और धाव धातुओ के अन्त्य वर्ण का लुक् होता है। जैसे —खाइ, खाअइ, धाइ, धाअइ (खादति, धावति)

१ २ केवल क्त्वा, तुम और तव्य के पर में रहने पर उक्त आदेश होता है।

(३७) सृज धातु के अन्त्य वर्ण का 'र' आदेश होता है। जैसे —सिरइ (सृजति)

(३८) शक आदि धातुओ के अन्त्य अक्षर का द्वित्व होता है। जैसे —सक्क, लग्ग, कुप्प, नस्स इत्यादि।

(३९) क्त प्रत्यय के सहित तत्तद् सोपसर्ग अथवा निरुपसर्ग धातुओ के स्थान मे नीचे लिखे अफुण्ण आदि आदेश होते है —

संस्कृत	प्राकृत
आक्रान्त	अफुण्णो
उत्कृष्टम्	उक्कोम
स्पष्टम्	फुड[1]
अतिक्रान्त	वोलीणो
विकसित	वोसट्टो (वोसट्टो)
रुग्ण	लुग्गो
नष्ट	विल्हक्को
प्रमृष्ट	पम्हट्टो
अर्जितम्	विढत्त
स्पृष्टम्	छित्त
त्यक्तम्	जढ
क्षिप्तम्	झासिअ
आस्वादितम्	चक्खिअ
स्थापितम्	निमिअ इत्यादि



१ तुलना कीजिए—अवधी के 'फुरे कहत हइँ' से।

सप्तम अध्याय

[कुछ विशिष्ट पद]

प्राकृत के विशेष विशेष पदो की सिद्धि के लिए विभिन्न प्राकृत व्याकरणो मे विशेष विशेष नियम दिये गये है। हम यहाँ उनके विशेष रूप बतला रहे है। पादटिप्पणी मे विशेष सूत्रो का भी यथासम्भव उल्लेख किया जा रहा है।

प्राकृत	संस्कृत
अगणी, अग्गी[1]	अग्नि
अङ्कोल्लो[2]	अङ्कोठ
अङ्गारो[3]	अङ्गार
अच्छेर, अच्चरिअ / अच्छरिअ, अच्छअर / अच्छरिज्ज, अच्छरीअ [4]	आश्चर्यम्
अलचपुर[5]	अचलपुरम्
अलसी[6]	अतसी

---

१ स्नेहाग्न्योर्वा। हेम० २ १०२

२ अङ्कोठे ल्ल । हेम० १ २००

३ पक्वाङ्गारललाटे वा। हेम० १ ४७ से इ के अभाव पक्ष में।

४ वल्ल्युत्करपर्यन्ताश्चर्ये वा। हेम० १ ५८ आश्चर्ये। हेम० २ ६६ अतो रिआइ–रिज्ज रीअ। हेम० २ ६७

५ अचलपुरे चलो । हेम० २ ११८

६ अतसी–सातवाहने ल । हेम० १ २११

अणिउँत्तय, अणिउतय[1]	अतिमुक्तकम्
अन्तेउर[2]	अन्त पुरम्
अन्तेआरी[3]	अ तश्चारी
अन्नन्न, अन्नुन्न[4]	अन्योन्यम्
अप्पा, अत्ता[5]	आत्मा
अम्ब[6]	आम्रम्
अज्जो[7]	आर्य
अहिमज्जू, अहिमञ्जू, अहिमन्नू[8]	अभिमन्युँ
अड्ढ, अद्ध[9]	अर्द्धम्
अण[10]	ऋणम्
अरुहो, अरहो, अरिहो[11]	अर्ह
अरुहतो, अरहतो, अरिहतो[12]	
अलाऊ, अलाउ[13]	अलावु

१ 'यमुनाचामुण्डा ' हेम० १ १७८ क्वचिन्न भवति।
अइमुतय, अइमुत्तय।
२ ३ तोऽन्तरि। हेम० १ ६०
४ 'ओतोऽद्वान्योन्य ' हेम० १ १५६
५ आत्मनि प। वर० ३ ४८
६ ताम्राम्रे म्ब। हेम० २ ५६। ह्रस्व सयोगे। हेम० १ ८४
७ द्य-य्य-र्यां ज। हेम० २ २४। ह्रस्व सयोगे। हेम० १ ८४
८ अभिमन्यौ जञ्जौ वा। हेम० २ २५
९ श्रद्धर्द्धिमूर्द्धार्धेन्ते वा। हेम० २ ४१
१० ऋतोऽत्। हेम० १ १२६ ११ उच्चार्हति। हेम० २ १११
१२ उच्चार्हति। हेम० २ १११
१३ वालाब्वरण्ये लुक्। हेम० १ ६६

अडो, अवडो[1]	अवट
अवहड[2]	अवहृतम्
अट्ठरह[3]	अष्टादश
अट्ठी[4]	अस्थि
अल्ल, अद्द[5]	आर्द्रम्
आफसो[6]	अस्पर्श
आओ, आअओ[7]	आगत
आइरिओ, आअरिओ[8]	आचार्य
आओज्ज[9]	आतोद्यम्
आढिओ[10]	आदृत
आमेलो[11]	आपीड
आढत्तो, आरद्धो[12]	आरब्ध
आणाल[13]	आलानम्

---

१ यावत्तावज्जीवितावर्तमानावटप्रावारकदेवकुलैवमेवे व । हेम० १ २२१

२ आर्ष प्रयोग है ।

३ ष्टस्यानुष्ट्रेष्टासदष्टे । हेम० २ ३४ । सप्त्यागद्गदे र । हे० १ २१९

४ ठोऽस्थिविसस्थुले । हे० २ ३२ ५ उदोद्वार्द्रे । हेम० १ ८२

६ 'स्पृश फासफस ' हे० ४ १८२

७ व्याकरणप्राकारागते कगो । हेम० १ २६८

८ आचार्ये चोऽच्च । हेम० १ ७३

९ द्य य्य-र्यां ज । हेम० २ २४ १० आदृते ढि । हेम० १ १४३

११ एत्पीयूषापीडविभीतककीदृशे दृशे । हेम० १ १०५ आपेलो, आवेडो ये दो रूप भी देखे जाते हैं । देखो—नीपापीडे मो वा । हेम० १ २३४ आमेलो, आमेडो ।

१२ 'मलिनोभयशुक्तिछुप्तारब्ध ' हेम० १ १३८,

१३ आलाने लनो । हेम० २ ११७

आली[1]	आली
आत्तमाणो, आवत्तमाणो[2]	आवर्तमान
आसीसय (आसीसा)[3]	आशी
आलिट्ठ, आलिद्ध[4]	आश्लिष्टम्
इङ्गालो[5]	अङ्गार
इङ्गुअ[6]	इङ्गुदम्
ईसि[7]	ईषत्
इआणीं	इदानीम्
इत्तिअ[8]	एतावत्
इड्ढी[9]	ऋद्धि
इक्खू[10]	इक्षु
उच्चअ[11]	उच्चैस्
उक्करो, उक्केरो[12]	उत्कर

१ ओदाल्या पङ्क्तौ । हेम० १ ८३ के अभाव में ।

२ 'तस्य धूर्तादौ । हेम० २ ३० । 'यावत्तावज्जीवितावर्तमान हेम० १ २७१

३ गोणादय । हेम० २ १७४

४ आश्लिष्टे लधौ । हेम० २ ४९

५ पक्वाङ्गारललाटे वा । हेम० १ ४७

६ शिथिलेऽङ्गुदे वा । हेम० १ ८९

७ गौणस्य ' हेम० २ १२९ के अभाव पक्ष में ईसि होता है ।

८ यत्तदेतदोतोरित्तिअ एतल्लुक् च । हेम० २ १५६

९ इत्कृपादौ । हे० १ १२८

१० प्रवासीक्षौ । हे० १ ९५ के अभाव में ।

११ उच्चैर्नीचैस्यैअ । हेम० १ १५४

१२ 'वल्ल्युत्कर ' हेम० १ ५८

उच्छवो[1]	उत्सव
उत्थारो, उच्छाहो[2]	उत्साह
ऊसुओ, उच्छुओ[3]	उत्सुक
उम्बरो, उडम्बरो[4]	उदुम्बर
उलूखल, ओक्खल[5]	उलूखलम्
उव्वीढ, उव्वूढ[6]	उद्व्यूढम्
उवरि[7]	उपरि
उब्भ, उद्ध[8]	ऊर्ध्वम्
उसहो[9]	ऋषभ, वृषभ
उज्जू[10]	ऋजु
उऊ, उदू[11]	ऋतु
उल्ल[12]	आर्द्रम्
उल्लेइ[13]	आर्द्रयति
ऊसारो[14]	आसार

---

१ सामर्थ्योत्सुकोत्सवे वा । हेम० २ २२

२ वोत्साहे थो हश्च र । हेम० २ ४८

३ सामर्थ्योत्सुकोत्सवे वा । हेम० २ २२

४ 'दुर्गादेव्युदुम्बर ' हेम० १ २७०

५ 'न वा मयूख ' हेम० १ १७१ ६ ईर्वोद्व्यूढे । हेम० १ १२०

७ वोपरौ । हेम० १ १०८ अवरि भी होता है । पकाव ।

८ वोर्द्धे । हेम० २ ५९

९ उदृत्वादौ । हेम० १ १३१ । वृषभे वा । हेम० १ १३३

१० ११ उदृत्वादौ । हेम० १ १३१ । रि का अभाव । देखो हेम० १ १४१

१२-१३ उदोद्वार्द्रे । हेम १ ८२

१४, ऊद्वासारे । हेम० १ ७६

उच्छू[1]	इक्षु
ऊसवो[2]	उत्सव
एक्कारो[3]	अयस्कार
एण्हि, एत्ताहे[4]	इदानीम्
एरिसो[5]	ईदृश
एआरह	एकादश
एक्कसि, एक्कसिअ, एक्कईआ, एगआ[6]	एकदा
एरावणो[7]	ऐरावत
ऐ[8]	अयि
ओल्लेइ[9]	आर्द्रयति
ओसढ, ओसह,[10]	औषधम्
ओली[11]	आली (लि)
कउह, ककुध[12]	ककुदम्
ककुहा[13]	ककुप्
कण्डुअण[14]	कण्डूयनम्

१ प्रवामीक्षौ । हेम० १ ९५

२ छ का अभाव । देखो–सामर्थ्योत्सुकोत्सवे वा । हेम० २ २२

३ 'स्थविरविचकिलायस्कारे ' हेम० १ ६

४ एण्हिं एत्ताहे इदानीमः । हेम० २ १३४

५ एत्पीयूष ' १ १०५

६ वलाद्दः सि सिअ इआ । हेम० २ १ २

७ ऐत एत् । हेम० १ १४८   ८ अयौ वैत् । हेम० १ १६९

९ उदोद्वार्द्रे । हेम० १ ८२   १० वौषधे । हेम० १ २२७

११ ओदाल्यां पङ्क्तौ । हेम० १ ८३   १२ ककुदे हः । हे० १ २२५

१३ ककुभो हः । हेम० १ २१ । 'कउहा' भी देखा जाता है ।

१४ उर्द्वर्हनूमत्कण्डूयवातूले । हेम० १ १२१

कइमे[1]	कतम
कइवाह, कइअव[2]	कतिपयम्
कडण, कअण[3]	कदनम्
कलम्बो, कअम्बो[4]	कदम्ब
कगट्ठिअ[5]	कदर्थितम्
कअल, केल, केली, करली[6]	कदलम् , कदली
कण्डलिआ[7]	कन्दरिका
कमधो, कअवो[8]	कबन्ध
कणवीरो[9]	करवीर
कणेरू[10]	करेणू
कण्णेरो, कण्णिआरो[11]	कर्णिकार
काउओ[12]	कामुक
काहावणो, कहावणो[13]	कार्षापण

---

१ मध्यमकतमे द्वितीयस्य । हेम० १ ४८

२ डाहवौ कतिपये । हेम० १ २५०

३ दशन दष्ट दग्ध दोला दण्ड दर दाह दम्भ दर्भ-कदन दोहदे दो वा ड । हेम० १ २१७

४ कदम्बे वा । हेम० १ २२२ ५ कदर्थिते व । हेम० २२४

६ कदलपामद्रुमे । हेम० १ २२० । वा कदले । हेम० १ १०७

७ कन्दरिकाभिन्दिपाले ण्ड । हेम० २ ३८

८ कबन्धे मयौ । हेम० १ २३९ ९ करवीरे ण । हेम० १ २५३

१० करेणूवाराणस्यो । हेम० २ ११६

११ वेत कर्णिकारे । हेम० १ १ ८ कर्णिकारे वा । हेम० २ ९५

१२ 'यमुनाचामुण्डा ' हेम० १ १७८

१३ कार्षापणे । हेम० २ ७१ ह्रस्व संयोगे । हेम० १ ८४

कालास, कालाअस[1]	कालायसम्
कम्हारो[2]	काश्मीर
कसुअ, केसुअ, किसुअ, किंसुअ[3]	किंशुकम्
करिआ[4]	क्रिया
किसल, किसलअ[5]	किसलयम्
किलिण्ण[6]	क्लिन्नम्
केरिसो[7]	कीदृश
कोहल, कोऊहल, कोउहल्ल, कुऊहल[8]	कुतूहलम्
कुब्ज[9] (पुष्प अर्थ मे)	कुब्जम्
कोहण्डी, कोहली, कोहडी[10]	कुष्माण्डी
कोप्पर[11]	कूर्परम्
किच्ची[12]	कृत्ति

---

१ 'किसलयकालायस ' हेम० १ २६९

२ आत्काश्मीरे । हेम० १ १००

३ किंशुके वा । हेम० १ ८६ । मांसादेर्वा । हेम० १ २९

४ 'हंश्रीह्लाकृत्स्न ' हेम० २ १०४

५ 'किसलयकालायस ' हे० १ २६९ । ६ लात् । हेम० २ १०६

७ दृश क्विप्टक्सक । हेम० १ १४२ । 'एत् पीयूषापीड '
हे० १ १०५

८ कुतूहले वा ह्रस्वश्च । हेम० १ ११७ । 'न वा मयूख ' हेम०
१ १७१ । हेम० २ ९९

९ कुब्जकर्परकीले क खोऽपुष्पे । हे० १ १८१ अपुष्पे पर्युदास
से ख का अभाव ।

१० 'ओत्कुष्माण्डी ' हेम० १ १२४ । 'कुष्माण्ड्या ' हेम० २ ७२

११ ओत्कुष्माण्डीतूणीरकूर्पर ' हेम० १ १२४

१२ कृत्तिचत्वरे च । हे० २ १२

किस, कस[1]	कृशम्
कसिणो, कसणो (रंग में) } कण्हो (वासुदेव में) }[2]	कृष्ण
कसिण (णो)[3]	कृत्स्नम्
किसर, केसर[4]	केसरम्
केढवो[5]	कैटभ
कुच्छेअअ, कौच्छेअअ[6]	कौक्षेयकम्
कन्दो[7]	स्कन्द
खन्दो[8]	स्कन्द
खणो (समय में)[9]	क्षण
खप्पर[10]	कर्परम्
खमा[11]	क्षमा, क्ष्मा
खंभो[12]	स्तम्भ
खित्त[13]	क्षिप्तम्

१ इत्कृपादौ । हेम० १२८ तथा ऋतोऽत् । हेम० १ १२
२ कृष्णे वर्णे वा । हेम० २ ११० ३ 'ह्रींश्रीह्री ' हेम० २ १०४
४ 'एत इद्वा वेदना ' हेम० १ १४६
५ कैटभे भो व । हेम० १ २४० ऐत एत् । हेम० १ १४८
'सटाशकटकैटभे ' १ १९६
६ कौक्षेयके वा । हेम० १६१ ७ शुष्कस्कन्दे वा । हेम० २ ५
८ ष्कस्कयोर्नाम्नि । हेम० २ ४ पक्ष में 'कन्दो' होगा ।
९ क्ष ख ' हेम० २ ३ १० 'कुब्जकर्पर ' हेम० १ १८१
११ क्षमायां कौ । हेम० २ १८
१२ स्तम्भे स्तो वा । हेम० २ ८ पक्ष में थम्भो होगा ।
१३ क्ष=ख । क्खो—हेम० २ ३

खाणू[1]	स्थाणु
खसिओ, खइओ[2]	खचित
खुडिओ, खण्डिओ[3]	खण्डितम्
खल्लीडो[4]	खल्वाट
खासिअ[5]	कासितम्
खीलओ[6]	कीलक
खुज्जो[7]	कुब्ज
खेडओ[8]	क्ष्वेटक
खेडिओ[9]	स्फेटिक
गेंदुअ[10]	कन्दुक
गग्गर[11]	गद्गदम्
गड्डो[12]	गर्त
गड्डहो, गद्दहो[13]	गर्दभ
गब्भिण[14]	गर्भितम्

१ स्थाणावहरे। हेम० २ ७ २ 'खचित ' हेम० १ १९३
३ 'चन्द्रखण्डिते ' हेम० १ ५३
४ ई स्त्यानखल्वाटे। हेम० १ १७४
५ कुब्जकर्परकीले ' हेम० १ १८१ मे देखो—आर्षेऽन्यत्रापि खासिअं।
६, ७ 'कुब्जकर्परकीले ' हेम० १ १८१
८, ९ क्ष्वेटकादौ। हेम० २ ६
१० एच्छय्यादौ। हेम० १ ५७ तथा 'मरकतमदकले ' हेम० १ १८२
११ सङ्ख्यागद्गदे र। हेम० १ २१९
१२ गर्ते ड। हेम० २ ३५ १३ गर्दभे वा। हेम० २ ३७
१४ गर्भितातिमुक्तके ण। हेम० १ २०८

गउओ[1]	गवय
गभिरीअ	गाम्भीर्यम्
गेज्झ[2]	ग्राह्यम्
गलोई[3]	गुडूची
गहवई[4]	गृहपति
गोला, गोआवरी[5]	गोदा, गोदावरी
गोणो, गउओ, गावो, गउआ, गावीओ, गावी [6]	गौ (पुल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग मे)
गारव, गउरव[7]	गौरवम्
घर[8]	गृहम्
चविलो, चविडो[9]	चपेट
चविडा, चवेडा[10]	चपेटा
चदिमा[11]	चन्द्रिका
चाउडा[12]	चामुण्डा

---

१ गवये व । हेम० १ ५४

२ एद् ग्राह्ये । हेम० १ ७८ ३ 'ओत्कुष्माण्डी ' हेम० १ १२४

४ गृहस्य घरोऽपतौ । हेम० २ १४४ में देखो—अपतौ पर्युदास ।

५ गोला, गोआवरी इति तु गोदागोदावरीभ्या सिद्धम् । देखो—गोणादय । हेम० २ १७४

६ गव्यउ आअ । हेम० १ १५८ तथा गोणादय । हेम० २ १७४

७ आच्च गौरवे । हेम० १ १६३

८ गृहस्य घरोऽपतो । हेम० २ १४४ पा० घरो ।

९, १० चपेटापाटौ वा । हेम० १ १९८ तथा 'एत इद्वा वेदना चपेटा ' हेम० १ १४६

११ चन्द्रिकाया म । हेम० १ १८५

१२ 'यमुनाचामुण्डा ' हेम० १ १७८

चइत्त[1]	चैत्यम्
चोरिअ[2]	चौर्यम्
चोग्गुणो चउग्गुणो[3]	चतुर्गुण
चोट्ठो (त्थो), चउट्ठो (त्थो)[4]	चतुर्थ
चोट्ठी (त्थी), चउट्ठी (त्थी)[5]	चतुर्थी
चोद्दह, चउद्दह[6]	चतुर्दश
चोद्दसी चउद्दसी[7]	चतुर्दशी
चोव्वार, चउव्वार[8]	चतुर्वारम्
चच्चर[9]	चत्वरम्
चिहुर[10]	चिकुर
चुच्छ[11]	तुच्छम्
चिलाओ[12]	किरात
चिन्ध, चिह्न[13]	चिह्नम्
छणो (उत्सव मे)[14]	क्षण

---

१ त्योऽचैत्ये । हेम० २ १३ के अभाव में ।

२ 'स्याद्भव्य ' हेम० २, १०७

३ न वा मयूख ' हेम० १ १७१

४, ५ 'न वा मयूख ' हेम० १ १७१ तथा स्त्यानचतुर्थार्थे वा । हेम० २ ३३

६, ७, ८ 'न वा मयूख ' हेम० १ १७१

९ कृत्तिचत्वरे च । हेम० २ १२

१० निकषस्फटिकचिकुरे ह । हेम० १ १८

११ तुच्छे तश्चछौ । हेम० १ २०४

१२ किराते च । हेम० १ १८३ तथा हरिद्रादौ ल । हेम० १ २५४.

१३ चिह्ने न्धो वा । हेम० २ ५० १४ क्षण उत्सवे । हेम० २ २०

छमा (पृथिवी मे)[1]	क्षमा, दमा
छूढ[2]	क्षिप्तम्
छीअ[3]	क्षुतम्
छुहा[4]	क्षुधा
छुत्त, छिक्क[5]	क्षुप्तम्
छालो (ली)[6]	छाग (गी)
छाहा (अनातप मे) } छाआ (कान्ति से) }[7]	छाया
छउम, छम्म[8]	छद्म
छड्डिओ[9]	छर्दिकः
छुच्छ[10]	तुच्छम्
छमी[11]	शमी
छमुहो[12]	षण्मुख
छट्ठो[13]	षष्ठ
छट्ठी[14]	षष्ठी

---

१ क्षमाया कौ । हेम० २ १८ २ 'वृक्षक्षिप्तयो ' हेम० २ १२७

३ ई क्षुते । हेम० १ ११२

४, ५ छोऽक्ष्यादौ । हेम० २ १७ तथा क्षुधो हा । हेम० १ १७

६ छागे ल । हेम० १ १९१

७ छायाया होऽकान्तौ वा । हेम० १ २४९

८ पद्मछद्ममूर्खद्वारे वा । हेम० २ ११२

९ 'समर्द ' हेम० २ ३६ १० तुच्छे तश्चछौ । हेम० १ २०४

११ 'षट्शमी ' हेम० १ २६५

१२ 'ङ्णनो ' हेम० १ २५ तथा हेम० १ २६५

१३, १४ 'षट्शमीशाव ' हेम० १ २६५

छत्तिवण्णो, छत्तवण्णो[1]	सप्तपर्ण
छिरा[2]	शिरा
छुहा[3]	सुधा
छिहा[4]	स्पृहा
जडिलो[5]	जटिल
जम्मण, जम्मो[6]	जन्म
जिब्भा, जीहा[7]	जिह्वा
जुण्ण, जिण्ण[8]	जीर्णम्
जीअ[9]	जीवितम्
जीविअ[10]	जीवितम्
जीआ[11]	ज्या
जह, जहा[12]	यथा
जउणा[13]	यमुना

---

१ सप्तवर्णे वा । हेम० १ ४९ तथा हेम० १ २६५

२, शिरायां वा । हेम० १ २६६ पक्ष में 'सिरा' ।

३ षट्शमीशावसुधासप्तपर्णेष्वादेश्छः । हेम० १ २६५

४ स्पृहायाम् । हेम० २ २३

५ जटिले जो झो वा । हेम० १ १९४

६ न्मो मः । हेम० २ ६१ तथा 'अन्त्य ' हेम० १ ११

७ ईर्जिह्वा ' हेम० १ ९२ तथा ह्वो भो वा । हेम० २ ५७

८ उज्जीर्णे । हेम० १ १०२ जुण्णसुरा । जिण्णे भोअण मत्ते

९, १० 'यावत्तावज्जीविता ' हेम० १ २७१

११ ज्यायामीत् । हेम० २ ११५

१२ 'वाव्ययोत्खाता ' हेम० १ ६७

१३ 'यमुनाचामुण्डा ' हेम० १ १७८

जा, जाव, जित्तिअ[1]	यावत्
जहुट्ठिलो, जहिट्ठिलो[2]	युधिष्ठिर
झडिलो[3]	जटिल
झओ[4]	ध्वज
झुणि[5]	ध्वनि
टगर[6]	तगरम्
टसरो[7]	त्रसर
ठभो[8]	स्तम्भ
ठीण[9]	स्त्यानम्
ठड्ढो[10]	स्तब्ध
डोलो[11]	दोल
डोहलो[12]	दोहद
डाहो[13]	दाह

---

१ 'यावत्तावज्जीवितावर्तमाना ' हेम० १ २७१ तथा हेम० १ ११

२ युधिष्ठिरे वा। हेम० १ ९६ तथा उतो मुकुलादिष्वत्। हेम० १ १०७

३ जटिले जो झो वा। हेम० १ १९४

४ त्वथ्वद्वध्वा चछजझा क्वचित्। हेम० २ १५

५ 'त्वथ्वद्वध्वा ' हेम० २ १५ तथा ध्वनिविष्वचोरुः। हेम० १ ५२

६, ७ तगरत्रसरतूवरे ट। हेम० १ २०५

८ थठावस्पन्दे। हेम० २ ९

९ ई स्त्यानखल्वाटे। हेम० १ ७४

१०, ११ स्तब्धे ठढौ। हेम० २ ३९

१२, १३ दशन दष्ट दग्ध दोला दण्ड दर दाह दम्भ दर्भ कदन दोहदे दो वा ड। हेम० १ २१७

डट्ठो[1]	दष्ट
डसन[2]	दशनम्
डरो (भय मे)[3]	दर
डभो[4]	दम्भ
डडो[5]	दण्ड
डड्ढ (डढो)[6]	दग्धम्
णिवुत्त, णिउत्त, णिअत्त[7]	निवृत्तम्
णिसीढो, णिसीहो[8]	निशीथ
णिच्चलो[9]	निश्चल
णुमण्णो, णिसण्णो[10]	निषण्ण
णडाल, णिडाल, णलाड[11]	ललाटम्
तविअ, तत्त[12]	तप्तम्
तम्ब[13]	ताम्रम्
तम्बोल[14]	ताम्बूलम्
ता, ताव, तित्तिअ[15]	तावत्

१ २ ३ ४ ५ ६ वही ७ निवृत्तवृन्दारके वा । हेम० १ १३२

८ निशीथपृथिव्योर्वा । हेम० १ २१६

९ दु खे णिच्चल । हेम० ४ ९२ की पादटिप्पणी ८ देखो

१० उमो निषण्णे । हेम० १ १७४

११ ललाट लडो । हेम० २ १२३ तथा पक्वाङ्गारललाटे वा । हेम० १ ४७

१२ शर्षिततप्तवज्रे वा । हेम० २ १०५

१३ ह्रस्व सयोगे । हेम० १ ८४ तथा ताम्राम्रे म्ब । हेम० २ ५६

१४ 'ओत्कुष्माण्डी ' हेम० १ १२४

१५ 'यावत्तावज्जीविता ' हे० १ २७१ तथा 'यत्तदेतदो ' हेम० २ १५६ एव १ ११

तित्तिरो[1]	तित्तिरि
तिरिच्छी[2]	तिर्यक्
तिक्ख, तिह्ण[3]	तीक्ष्णम्
तेह, तूह, तित्थ[4]	तीर्थम्
तोण, तूण[5]	तूणम्
तोणीर[6]	तूणीरम्
तूर[7]	तूर्यम्
तेरह[8]	त्रयोदश
तेवीसा[9]	त्रयोविंशति
तेत्तीसा[10]	त्रयस्त्रिंशत्
तीसा[11]	त्रिंशत्
तेवण्णा[12]	त्रिपञ्चाशत्
तबो[13]	स्तम्ब

१ तित्तिरौ र । हेम० १ ९० २ तिर्यचस्तिरिच्छ । हे० २ १४३

३ 'सूक्ष्मश्न ' हेम० २ ७५ तथा तीक्ष्णे ण । हेम० २ ८२

४ तीर्थे हे । हे० १ १०४ ह्रस्व सयोगे । हेम० १ ८४ तथा दुःख-दक्षिणतीर्थे वा । हेम० २ ७२

५ स्थूणातूणे वा । हेम० १ १२५

६ 'ओत्कुष्माण्डी ' हेम० १ १२४

७ 'ब्रह्मचर्यतूर्य ' हेम० २ ६३

८ एत्रयोदशादौ ' हेम० १ १६५ सख्यागद्गदे र । हेम० १ २१९ तथा हेम० १ २६२

९, १० वही ।

११ विंशत्यादेर्लुक् । हेम० १ २८ १२ गोणादय । हेम० २ १७४

१३ 'स्तस्य थो ' हेम० २ ४५ के असमस्तस्तम्बे इस पर्युदास से तबो होता है ।

तवो[१]	स्तव
थेणो, थूणो[२]	स्तेन
थम्भो[३]	स्तम्भ
थवो[४]	स्तव
थी[५]	स्त्री
थेरो[६]	स्थविर
थीण[७]	स्त्यानम्
थाणू[८]	स्थाणु
थोणा, थूणा[९]	स्थूणा
थोर, थूल (थुल्लो)[१०]	स्थूलम्
थेरिअ[११]	स्थैर्यम्
दुवरो[१२]	तूवर
दाढा[१३]	दंष्ट्रा

---

१ स्तवे वा । हेम० २ ४६ से थ के अभाव में ।

२ उ स्तेने वा । हेम० १४७ ३ 'स्तस्य थो ' हेम० २ ४५

४ स्तवे वा । हेम० २ ४६

५ स्त्रिया इत्थी । हेम० २ १३० से 'इत्थी' के अभाव में ।

६ स्थविरविचकिलायस्कारे । हेम० १ १६६

७ स्त्यानचतुर्थार्थे वा । हेम० २ ३३ से ठ के अभाव में थीण होता है । तथा ई स्त्यान खल्वाटे । हेम० १ ७४

८ स्थाणावहरे । हेम० २ ७ से हर अर्थ में ख के अभाव में थाणु होता है । ९ स्थूणातूणे वा । हेम० १ १२५

१० ल्लो, थोरो (थेरो A) सेवादौ वा । हेम० २ ९९

११ स्याद्भव्यचैत्यचौर्यसमेषु यात् । हेम० २ १०७

१२ हेमचन्द्र के अनुसार दुवरो रूप नहीं होता है ।

१३ दंष्ट्राया दाढा । हेम० २ १३९

दड्ढ[1]	दग्धम्
दडो[2]	दण्ड
दिण्ण[3]	दत्तम्
दणुवहो, दणुअ वहो[4]	दनुजवध
दभो[5]	दम्भ
दरो (अल्प मे)[6]	दर
दस, दह[7]	दश
दसण[8]	दशनम्
दहमुहो, दसमुहो[9]	दशमुख
दट्ठो[10]	दष्ट
दाहिणो, दक्खिणो[11]	दक्षिण
दाहो, दाघो[12]	दाह
दिवहो, दिवसो[13]	दिवस

---

१ 'दशनदष्टदग्ध ' हेम० १ २१७ से ड के अभाव में। २ वही।
३ इ स्वप्नादौ। हेम० १ ४६ तथा पञ्चाशत्पञ्चदशदत्ते। हेम० २ ४३ ४ लुग्भाजनदनुज ' हेम० १ २६७
५ दशनदष्टदग्ध ' हेम० १ २१७, से ड के अभाव में।
६ वही। ७ दशपाषाणे ह। हेम० १ २६२
८ दशनदष्टदग्ध ' हेम० १ २१७ से ड के अभाव में।
९ श का वैकल्पिक ह। देखो—दशपाषाणे ह। हेम० १ २६२
१० हेम० १ २१७ के अभाव में।
११ वैकल्पिक ह। दु खदक्षिणतीर्थे वा। हेम० २ ७२ तथा दीर्घ—दक्षिणे हे। हेम० १ ४५
१२ हो घोऽनुस्वारात्। क्वचिदननुस्वारादपि-दाघो। पक्षे दाहो। हेम० १ २६४।
१३ स का वैकल्पिक ह्। दिवसे स। हेम० १ १६३

दिग्घो, दीहो[1]	दीर्घ
दुह, दुक्ख[2]	दु खम्
दुअल्ल, दुऊल, दुगुल्ल[3]	दुकूलम्
दुग्गावी, दुग्गा एवी[4]	दुर्गादेवी
दूहवो, दुहओ[5]	दुर्भग
दुक्कड[6]	दुष्कृतम्
दुहिआ[7]	दुहिता
दरिओ[8]	दृप्त
दिअरो, देअरो[9]	देवर
देउल, देवउल[10]	देवकुलम
देव्व, दइव्व, दइव[11]	दैवम्
दोहलो[12]	दोहद

१ हेम० २ ७९ तथा दीर्घे वा। हेम० २९१

२ वैकल्पिक ह। दु खदक्षिणतीथ वा। हेम० २ ७२

३ ऊकार का वैकल्पिक अत्व और लकार का द्वित्व। देखो-दुकूले वा लश्च द्वि । हेम० १ ११९। आर्ष प्राकृत में दुगुल्ल होता है।

४ दुर्गादेव्युदुम्बरपादपतनपादपीठेऽन्तर्द । हेम० १ २७०

५ लुंकि दुरो वा। हेम० १ ११५ और ऊत्वे दुर्भगसुभगे व। हेम० १ १९२

६ प्रत्यादौ ड । आर्षे दुक्कड। हेम० १ २०६

७ 'दुहितृभगिन्यो ' हेम० २ १२६ इससे 'धूआ' आदेश के अभाव में।

८ अरिर्दृते। हेम० १ १४४

९ एत इद्वा वेदनाचपेटादेवरकेसरे। हेम० १ १४६

१० यावत्तावत् ' हेम० १ २७१ ११ एच दैवे। हेम० १ १५३

१२ प्रदीपिदोहदे ल । हेम० १ २२१

दोला[1]	दोला
देर, दुआर, दार, दुवार[2]	द्वारम्
दिही[3]	धृति
धूआ[4]	दुहिता
धणुह, धणू[5]	धनु
धत्ती, धाई, धारी[6]	धात्री
धिइ	धिक्
धिरत्थु[7]	धिगस्तु
धिई[8]	धृति
धिट्ठो, धट्ठो[9]	धृष्ट
धट्ठज्जणो[10]	धृष्टद्युम्न
धीर, धिज्ज[11]	धैर्यम्
नत्तिओ, नत्तुओ[12]	

१ 'दशनदष्टदग्धदोला ' हेम० १ २१७ से ड के अभाव में।

२ द्वारे वा। हेम० १ ७९ पद्मछद्ममूर्खद्वारे वा। हेम० २ ११२.

३ धृतेर्दिहि। हेम० २ १३१

४ धूआ दुहिआ। 'दुहितृभगिन्यो ' हेम० २ १२

५, धनुषो वा। हेम० १ २२

६ धात्र्याम। हे० २ ८१ ह्रस्व से पहले ही रलोप होने पर धाई और पक्ष में धारी ये रूप होते हैं।

७ गोणादय। हेम० २ १७४

८ धृतेर्दिहि। हेम० २ १३१ इससे 'दिहि' के अभाव में।

९ मसृणमृगाङ्कमृत्युश्टङ्गधृष्टे वा। हेम० १ १३० तथा हेम० २ ३८.

१० धृष्टद्युम्ने ण। हेम० २ ९४

११ ईर्धैर्ये। हेम० १ १५५ तथा धैर्ये वा। हेम० २ ६४

१२ 'इदुतौवृष्टवृष्टि ' हेम० १ १३७

नोहलिआ[1]	नवफलिका
निहसो[2]	निकष
निम्बो[3]	निम्ब
निसढो[4]	निषध
नेड्ड, नीड[5]	नीडम्
नीमो, नीवो[6]	नीप
नीमी, नीवी[7]	नीवि
नेरइओ[8]	नैरयिक
नारइओ[9]	नारकिक
नेउर, निउर, नूउर[10]	नूपुरम्
नापिओ[11]	नापित
निज्झरो[12]	निर्झर

१ ओत्पूतर ' हेम० १ १७०

२ निकषस्फटिकचिकुरे ह । हेम० १ १८६

३ निम्बनापिते लण्ह वा । हेम० १ २३० इसके अभाव में ।

४ निषधे धो ढ । हेम० १ २२६

५ नीडपीठे वा । हेम० १ १०६

६ नीपापीडे मो वा । हेम० १ २३४

७ स्वप्ननीव्योर्वा । हेम० १ २५९,

८ ९ कथ नेरइओ, नारइओ ? नैरयिक-नारकिकशब्दयोर्भविष्यति । देखो—द्वारे वा । हेम० १ ७९

१० इदेतौ नूपुरे वा । हेम० १ १२३

११ निम्बनापिते लण्ह वा । हेम० १ २३० से ण्ह के अभाव में । तथा हेम० १ १७७

१२ द्वितीयतुर्ययोरुपरि पूर्व । हेम० २ ९०

नमोक्कारो[1]	नमस्कार
नीचअ[2]	नीचै
नावा[3]	नौ
पक्क, पिक्क[4]	पक्वम्
पम्ह[5]	पद्म
पण्णरह[6]	पञ्चदश
पञ्चावण्णा, पण्णण्णा[7]	पञ्चपञ्चाशत्
पण्णास[8]	पञ्चाशत्
पडाया[9]	पताका
पट्टण[10]	पत्तनम्
पाइक्को, पाआई[11]	पदाति
पोम्म, पउम, पम्म[12]	पद्मम्
पहो[13]	पन्था

१ 'नमस्कार ' हेम० १ ६२
२ उच्चैर्नीचैस्यै अ । हेम० १ १५४
३ नाव्याव । हेम० १ १६४
४ पक्वाङ्गारललाटे वा । हेम० १ ४७
५ पक्ष्म श्म ष्म स्म ह्म म्ह । हेम० २ ७४
६ पञ्चाशत्पञ्चदशदत्ते । हेम० २ ४३
७ गोणादय । हेम० २ १७८ ८ पञ्चाशत्पञ्चदशदत्ते । २ ४३
९ प्रत्यादौ ड । हेम० १ २०६
१० 'वृत्तप्रवृत्त ' हेम० २ २९
११ 'मलिनोभय शुक्ति ' हेम० २ १३८
१२ ओत्पद्मे । हेम० १ ६१ 'पद्म छद्म ' हेम० २ ११२
१३ 'पथि पृथिवी ' हेम० १ ८८

परोप्पर[1]	परस्परम्
पारक्क, पारिक्क, पारकेर, पाराकेर[2]	परकीयम्
पेरन्तो, पज्जन्तो[3]	पर्यन्त
पल्लट्ट, पल्लत्थ[4]	पर्यस्तम्
पल्लाण, पडायाण[5]	पर्याणम्
पलिअ, पलिल[6]	पलितम्
पल्लङ्को, पलिअको[7]	पल्यङ्क
पाअवडण, पावडण[8]	पादपतनम्
पावीड, पाअवीड[9]	पादपीठम्
पहिहो[10]	पान्थ (पथिक)
पारद्धी[11]	पापर्द्धि

---

१ 'नमस्कारपरस्परे ' हेम० १ ६२

२ 'परराजभ्यां ' हेम० २ १४८

३ एत पर्यन्ते । हेम० २ ६५

४ पर्यस्ते थटौ । हेम० २ ४७ तथा 'पर्यस्तपर्याण ' हेम० २ ६८

५ पर्याणे डा वा । हेम० १ २५२ 'पर्यस्तपर्याण ' हेम० २ ६८

६ पलिते वा । हेम० १ २१२

७ पल्लङ्को इति च पल्यङ्कशब्दस्य यलोपे द्वित्वे च । पलिअंको इत्यपि चौर्यसमत्वात् । देखो—पर्यस्तपर्याणसौकुमार्ये ल्ल । हेम० २ ६८

८ 'दुर्गादेव्युदुम्बरपादपतन ' हेम० १ २७०

९, 'दुर्गादेव्युदुम्बरपादपतन ' हेम० १ २७०

१० पथोणस्येकट्–पहिओ । हेम० २ १५२

११ पापर्द्धौ र । हेम० १ २३५

पारेवओ, पारावओ[1]	पारावत
पाहाणो, पासाणो[2]	पाषाण
पिहढो, पिढरो[3]	पिठर
पिउसिआ, पिउच्छा[4]	पितृष्वसा
पिसल्लो, पिसाओ[5]	पिशाच
पेढ, पीढ[6]	पीठम्
पीअ[7]	पीतम्
पीवल, पीअल[8]	पीतलम्
पेऊस[9]	पीयूषम्
पुण्णामो[10]	पुन्नाग
पुरिसो[11]	पुरुष
पोप्पल[12]	पूगफलम्
पोप्पली[13]	पूगफली

---

१ पारावते रो वा। हेम० १ ८०

२ दशपाषाणो ह । हेम० १ २६२

३ पिठरे हो वा रश्च ड । हेम० १ २०१

४ मातृपितु स्वसु सिआछौ। हेम० २ १४२

५ 'खचितपिशाचयो ' हेम १ १९३

६ नीडपीठे वा। हेम० १ १०६

७ ल इति किम् ? पीअ। देखो—पीते वो ले वा। हेम० १ २१३

८ पीते वो ले वा। हेम० १ २१३ तथा विद्युत्पत्रपीतान्धाल्लः। हेम० २ १७३

९ 'एत्पीयूष ' हेम० १ १०५

१० पुन्नागभागिन्योर्गो म । हेम० १ १९०

११ पुरुषे रो । हेम० १ १११

१२ 'ओत्पूतरबदर ' हेम० १ १७० १३ वही।

पोरो[1]	पूतर
पुरिम, पुव्व	पूर्वम्
पिध, पिह, पुध, पुह[3]	पृथक्
पुहई, पुढवी, पुहवी[4]	पृथिवी
पउरिस[5]	पौरुषम्
पवट्ठो, पउट्ठो[6]	प्रकोष्ठ
पइण्णा[7]	प्रतिज्ञा
पइट्ठा[8]	प्रतिष्ठा
पडसुआ[9]	प्रतिश्रुत्
पईव[10]	प्रतीपम्
पच्चुहो, पच्चुसो[11]	प्रत्यूष
पुढुम, पढुम, पढम, पढम[12]	प्रथमम्

१ वही। २ पूर्वस्य पुरिम । हेम० २ १३५

३ 'इदुतौवृष्टवृष्टि ' हेम० १ १३७ तथा पृथकि धो वा। हेम० १ १८८

४ पथिपृथिवी ' हेम० १ ८८ तथा उदृत्वादौ। हेम० १ १३१ एव निशीथपृथिव्योर्वा। हेम० १ २१८

५ अउ पौरादौ वा। हेम० १ १६२

६ ओतोऽद्वान्योन्यप्रकोष्ठ ' १ १५६

७ ८ प्राय कथन से ड नही हुआ। देखो—प्रत्यादौ ड । हेम० १ २०६

९ प्रत्ययादौ ड । हेम० १ २०६ 'पथिपृथिवी ' हेम० १ ८८ तथा वक्रादावन्त । हेम० १ २६

१० प्राय कथन से ड नहीं हुआ। देखो—प्रत्यादौ ड। हेम० १ २०६

११ प्रत्यूषे षश्च हो वा। हेम० २ १४

१२ प्रथमे पथोर्वा। हेम० १ ५५ तथा मेथिशिथिर ' हेम० १ २१५

पावासू[1]	प्रवासी
पअट्ट पउत्त[2]	प्रवृत्तम्
पसढिल, पसिढिल[3]	प्रशिथिलम्
पारो, पाआरो[4]	प्राकार
पाहुड[5]	प्राभृतम्
पागुरण, पाउरण, पावरण[6]	प्रावरणम्
पावारओ, पारओ[7]	प्रावारक
पलक्खो[8]	प्लक्ष
फणसो[9]	पनस
फलिहा[10]	परिखा
फलिहो[11]	परिघ
फरुसो[12]	परुष
फालिहद्दो[13]	पारिभद्र

---

१ प्रवासीक्षौ । हेम० १ ९५ अत समृद्ध्यादौ वा । हेम० १ ४४
२ उद्दत्वादौ । हेम० १ १३१ तथा 'वृत्तप्रवृत्त ' हेम० २ २९
३ शिथिलेङ्गुद वा । हेम० १ ८९
४ 'व्याकरणप्राकारागते ' हेम० १ २६८
५ उद्दत्वादौ । हेम० १ १३१ तथा प्रत्यादौ ड । हेम० १ २०६
६ प्रावरणे अङ्ग्वाऊ । हेम० १ १७५
७ 'यावत्तावज्जीविता ' हेम० १ २७१
८ प्लक्षे लात् । हेम० २ १०३ ९ 'पाटिपरुष ' हेम० १ २३२
१० वही तथा हरिद्रादौ ल । हेम० १ २५४ ११ वही ।
१२ 'पाटिपरुष ' हेम० १ २३२
१३ वही तथा हरिद्रादौ ल । हेम० १ २५४

फलिह[1]	स्फटिकम्
भइणी[2]	भगिनी
भरहो[3]	भरत
भविअ[4]	भव्यम्
भवन्तो[5]	भवान्
भस्स, भप्प[6]	भस्म
भामिणी[7]	भागिनी
भाअण, भाण[8]	भाजनम्
भारिआ[9] (पैशाची मे)	भार्या
भिण्डिवालो[10]	भिन्दिपाल
भिप्फो[11]	भीष्म
भेडो[12]	भेर
भसरो, भसलो[13]	भ्रमर
भिउडी[14]	भ्रुकुटि

१ स्फटिके ल हेम० १ १९७ तथा 'निकषस्फटिक ' हेम० १ १८६ फलिहो भी देखा जाता है।

२ 'दुहितृभगिन्यो ' हेम० २ १२६ बहिणी के अभाव में

३ 'वितस्तिवसतिभरत ' हेन० १ २१४

४ 'स्याद्भव्य ' हेम० २ १०७ ५ गोणादय । हेम० २ १७४

६ भस्मात्मनो पो वा । हेम० २ ५१

७ पुन्नागभागिन्योर्गो म । हेम० १ १९०

८ लुग्भाजनदनुज ' हेम० १ २६७

९ र्यस्नष्टा ' हेम० ४ ३१४

१० कन्दरिकाभिन्दीपाले ण्ड । हेम० २ ३८

११ भीष्मे ष्म । हेम० २ ५४ १२ किरिभेरे रो ड । हेम० १ २५१

१३ भ्रमरे सो वा । हेम० १ २४४ १४ इर्भ्रुकुटौ।हेम० १ ११०

भुलया[1]	भ्रूलता
भिब्भलो[2]	विह्वल
भयप्फइ, भयस्सई[3]	बृहस्पति
मघोणो[4]	मघवान्
मअगलो[5]	मद्कल
मज्झिमो[6]	मध्यम
मज्झह्लो, मह्यह्लो[7]	मध्याह्न
महुअ, महूअ[8]	मधूकम्
मणोहर, मणहर[9]	मनोहरम्
मन्नू (न्तू), मण्णू (न्तू)[10]	मन्यु
मोहो, मऊहो[11]	मयूख
मोरो, मऊरो, मयुरो[12]	मयूर

१ उभ्रूहनूमत्कण्डूयवातूले । हेम० १ १२१

२ वा विह्वले वौ वश्च । हेम० २ ५८ पक्ष में विब्भलो, विहलो ।

३ बृहस्पतौ बहो भय । हेम० २ १३७ तथा बृहस्पतिवनस्पत्यो सो वा २ ६९ ष्पस्पयो फ । हेम० २ ५३

४ गोणादय । हेम० २ १७४

५ मरकतमदकले ग । हेम १ १८२

६ मध्यमकतमे द्वितीयस्य । हेम० १ ४८

७ मध्याह्ने ह । हेम० २ ८४ तथा ह्रस्व सयोगे । हेम० १ ८४

८ मधूके वा । हेम० १ १२२

९ 'ओतोद्वान्योन्य ' हेम० १ १५६

१० मन्यौ न्तो वा । हेम० २ ४४

११ 'न वा मयूख ' हेम० १ १७१

१२ मोरो मउरो इति तु मोरमयूरशब्दाभ्या सिद्धम् । देखो— हेम० १ १७१

मरगअ[1]	मरकतम्
मड्डिअ[2]	मर्द्दितम्
मइल, मलिणं[3]	मलिनम्
मसिण, मसण[4]	मसृणम्
महन्तो[5]	महान्
मरहट्ठ[6]	महाराष्ट्रम्
मयन्दो[7]	माकन्द
माउसिआ, माउच्छा[8]	मातृष्वसा
महुरिअ[9]	माधुर्यम्
मञ्जरो, मज्जारो[10]	मार्जार
मेरा[11]	मिरा (मर्यादा अर्थ मे)
मुक्क, मुत्त[12]	मुक्तम्
मूसल, मुसल[13]	मुसलम्

१ 'मरकतमदकले ' हेम० १ १८२

२ 'समर्दवितर्दि ' हेम० २ ३६

३ 'मलिनोभयशुक्ति ' हेम० २ १३८

४ 'मसृणमृगाङ्क 'हेम० १ ३०

५ गोणादय । हेम० १ १७४ (मत्तूण महन्ता ठन्तस्सन्ति । कुमा० पा० ७ ५१)

६ महाराष्ट्रे । हेम० १ ६९ ७ गोणादय । हेम० २ १७४

८ मातृपितु स्वसु सिआ छौ । सेम० २ १४२

९ खघथधभाम् । हेम० १ १८७

१० मार्जारस्य मञ्जरवञ्जरौ । हेम० २ १३८

११ मिरायाम् । हेम० १ ८७

१२ 'शक्तमुक्तदष्ट ' हेम० २ २

१३ उत्सुभगमुसले वा । हेम० १ ११३

मुरुखो, मुक्खो[1]	मूर्ख
मुड्ढा, मुद्धा[2]	मूर्धा
मोल्ल[3]	मूल्यम्
मूसओ[4]	मूसिक
मिअको, मअको[5]	मयङ्क
मडअ[6]	मृतकम्
मट्टिआ[7]	मृत्तिका
मिच्चू, मच्चू[8]	मृत्यु
मिअगो, मुइगो[9]	मृदङ्ग
माउअ, मउअ, माउक्क[10]	मृदुकम्
माउत्तण, मउत्तण, माउक्क[11]	मृदुत्वम्
मुसा, मूसा, मोसा[12]	मृषा

---

१ पद्मछद्ममूर्खद्वारे वा । हेम० १ ११२

२ श्रद्धर्द्धिमूर्धोऽर्धेन्ते वा । हेम० २ ४१

३ 'ओत्कुष्माण्डी ' हेम० १ १२४

४ 'पथिपृथिवी ' हेम० १ ८८

५ 'मसृणमृगाङ्क ' हेम० १ १३०

६ प्रत्यादौ ड । हेम० १ २०६ । मडअ

७ 'वृत्तप्रवृत्तमृत्तिका ' हेम० २ २९

८ 'मसृणमृगाङ्कमृत्यु ' हेम० १ १३०

९ इ स्वप्नादौ । हेम० १ ४६ तथा 'इदुतौ वृष्टवृष्टि हेम० १ १२७

१० आ कृशामृदुकमृदुत्वे वा । हेम० १ १२७ तथा 'शक्तमुक्तदष्ट हेम० २ २

११ वही । १२ उदूदोन्मृषि । हेम० १ १३६

मुसावाआ[1]	मृषावाक्
मेढी[2]	मेथि
मस्सू[3]	श्मश्रु
मसाण[4]	श्मशानम्
रण, रत्त[5]	रक्तम्
रअण[6]	रत्नम्
राइक्क, राअकेर, रायक्क[7]	राजकीयम्
राउल, राअउल[8]	राजकुलम्
राई, रत्ती[9]	रात्रि
रुण्ण[10]	रुदितम्
रुक्खो[11]	वृक्ष
रण्ण[12]	अरण्यम्
रिच्छो, रिक्खो[13]	ऋक्ष

१ वही। २ 'मेथिशिथिर ' हेम० १ २१५
३ वक्रादावन्त । हेम० १ २६ तथा 'आदे श्मश्रु ' हेम० २ ८६
४ वर० ३ ६ तथा आदे श्मश्रुश्मशाने। हेम० २ ८६
५ क्तेन दिण्णादय । वर० ८ ६२
६ रयण। 'क्ष्माश्लाघा ' हेम० २ १०१ तथा रअण। 'क्लिष्ट-शिष्ट ' वर० ३ ६०
७ परराजभ्या क्कडिक्कौ च। हेम० २ १४८
८ 'लुग्भाजनदनुजराजकुले ' हेम० १ २६७
९ रात्रौ वा। हेम० २ ८८ तथा हेम० २ ८९
१० क्तेन दिण्णादय वर० ८ ६२
११ वर० १ ३२, ३ ३१, हेम० २ १२७
१२ वालाव्वरण्ये लुक्। हेम० १ ६६
१३ रि केवलस्य। हेम० १ १४० तथा ऋक्षे वा। हेम० २ १९०

रिज्जू[1]	ऋजु
रिऊ[2]	ऋतु
रिड्ढी, रिद्धी[3]	ऋद्धि
रिण[4]	ऋणम्
रिसहो[5]	ऋषभ
रिसी[6]	ऋषि
लहुअ[7]	लघुकम्
लुक्को, लुग्गो[8]	रुग्ण
लोण, लअण[9]	लवणम्
लाहलो[10]	लाहल
लागलो[11]	लाङ्गल
लट्ठी[12]	यष्टि
लिम्बो[13]	निम्ब

---

१ 'ऋणर्ज्वृषभ ' हेम० १ १४१ २ वही।

३ रि केवलस्य। हेम० १४०

४ 'ऋणर्ज्वृषभ ' हेम० १ १४१ ५ वही।

६ 'ऋणर्ज्वृषभ ' हेम० १ १४१

७ लघुके लहो । हेम० २ १२२

८ 'शक्तमुक्तदष्टरुग्ण ' हेम० २ २

९ न वा मयूख ' हेम० १ १७१

१ लाहललाङ्गललाङ्गूले वादेर्ण । हेम० १ २५६ इससे ण के अभाव में

११ वही।

१२ ष्टस्यानुष्ट्रेष्टासदष्टे। हेम० २ ३४ तथा यष्टया ल । हेम० १ २४७

१३ निम्बनापिते लण्ह वा। हेम १ २३०

लाऊ[1]	अलाबु
लाङ्गूलो[2]	लाङ्गूल

ब एवं व

वार[3]	द्वारम्
बारह[4]	द्वादश
बइल्लो[5]	बलीवर्द
वम्हचेर, वम्भचेर, वह्मचरिअ[6]	ब्रह्मचर्यम्
बहिणी[7]	भगिनी
वम्महो[8]	मन्मथ
वइर, वज्ज[9]	वज्रम्
वुद्र, वद्र[10]	वन्द्रम्
वोर[11]	वदरम्
वोरी[12]	वदरी

---

१ वालाव्बरण्ये लुक् । हेम० १ ६६

२ लाहललाङ्गलाङ्गूले वादेर्ण । हेम० १ २५६ इससे ण के अभाव में ।

३ उत्वाभाव । देखो—हेम० २ ११२ उत्वपक्ष में दुवार होता है

४ पशपाषाणो ह । हेम० १ २६२ तथा हेम० १ २१९

५ गोणादय । हेम० २ १७४

६ 'स्याद्भव्य ' हेम० २ १०७ हेम० २ ९३ हेम० २ ७४ हेम० २ ६३

७ दुहितृभगिन्योर्धूआ—बहिण्यौ । हेम० २ १२६

८ मन्मथे व । हेम० १ २४२

९ शर्षतप्तवज्रे वा । हेम० २ १०५

१० वन्द्रखण्डिते णा वा । हेम० १ ५३

११ 'ओत्पूतरवदर ' हेम० १ १७६ १२ वही

वणस्सई, वनप्फई[१]	वनस्पति
विलया, वणिदा[२]	वनिता
वरिअ[३]	वर्यम्
वेल्ली, वल्ली[४]	वल्ली
वसही[५]	वसति
वाहि, वाहिर[६]	वहिष्
वाउलो[७]	वातूल
वाणारसी[८]	वाराणसी
वाहो (नेत्र जल मे) }[९]	वाष्प
वाप्फो (धूम मे)	
वीसा[१०]	विशति
वेइल्ल, विअइल्ल[११]	विचकिल्ल
विच्छड्डो[१२]	विच्छर्द

१ बृहस्पतिवनस्पत्योः सो वा । हेम २ ६९ तथा ष्पस्पयो फ । हे० २ ५३

२ वनिताया विलया । हेम २ १२८

३ 'स्याद्भव्यचैत्य हेम० २ १०७

४ 'वल्ल्युत्कर ' हेम० १ ५८

५ वितस्तिवसति ' हेम० १ २१४

६ वहिषो वाहिं-वाहिरौ । हेम० २ १४०

७ उर्भ्रू हनूमत्कण्डूयवातूले । हेम० १ १२१

८ 'करेणुवाराणस्यो ' हेम० २ ११६

९ वाष्पे होऽश्रुणि । हेम० २ ७०

१० 'ईर्जिह्वा ' हेम० १ ९२ तथा हेम० १ २८

११ 'स्थविरविचकिला ' हेम० १ १६६

१२ 'समर्दवितर्दिविच्छर्द ' हेम० २ ३६

विअड्डी[1]	वितर्द्दि
विअड्ढो[2]	विदग्ध
वहेडअडो[3]	विभीतक
वीसभो[4]	विश्रम्भ
वीसु[5]	विष्वक्
वीसत्थो[6]	विश्वस्त
विसढो, विसमो[7]	विषम
विसट्ठुल[8]	विसष्ठुल
विहूणो, विहीणो[9]	विहीन
विब्भलो, विहलो[10]	विह्वल
वीरिअ[11]	वीर्यम्
वच्छो[12]	वृक्ष
वट्ट (ट्टो,[13]	वृत्तम्

१ वही । २ 'दग्धविदग्ध ' हेम० २ ४०

३ 'एत्पीयूषापीडविभीतक ' हेम० १ १०५, १ ८८, १ २०६

४ सर्वत्र लवरामवन्द्रे । हेम० २ ७९ तथा हेम० १ ४३

५ 'लुप्तयरव ' हेम० १ ४३ वा स्वरे मश्च । हेम० १ २४ तथा 'ध्वनि ' हेम० १ ५२

६ 'लुप्तयरव ' हेम० १ ४३

७ विषमे मो ढो वा । हेम० १ २४१

८ ठोऽस्थिविसस्थुले । हेम० २ ३२

९ ऊर्हीनविहीने वा । हेम० १ १०३

१० वा विह्वले वौ वश्च । हेम० २ ५८

११ 'स्याद्भव्य ' हेम० २ १०७

१२ रुक्ख आदेश का अभाव । देखो—हेम० २ १२७

१३ 'वृत्तप्रवृत्त ' हेम० २ २९

वुड्ढो[१]	वृद्ध
वुड्ढी[२]	वृद्धि
वेण्ट, वोण्ट, विण्ट[३]	वृत्तम्
वुन्दारओ[४]	वृन्दारक
विञ्छुओ, विच्छुओ, विचुओ, विछिओ[५]	वृश्चिक
वसहो[६]	वृषभ
विट्ठ, वुट्ठ[७]	वृष्टम्
विट्ठी, वुट्ठी[८]	वृष्टि
वड्डयर[९]	बृहत्तरम्
विहप्फई, वुहप्फई, वहप्फई वहस्सई, वुहस्सई [१०]	बृहस्पति
वेलू[११]	वेणु
वेडिसो[१२]	वेतस
विअणा, वेअणा[१३]	वेदना

---

१ उदृत्वादौ । हेम० १ १३१ तथा हेम २ ४०

२ वही । ३ इदेदोद्वृन्ते । हेम० १ १३९

४ विवृत्तवृन्दारके वा । वुन्दारया, वन्दारया । हेम० १ १३२

५ वृश्चिके श्चेर्ञ्चुर्वा । हेम० २ १६ तथा हेम० १ १२८

६ वृषभे वा वा । हेम० १ १३३ तथा हेम० १ १२६

७ 'इदुतौ वृष्टवृष्टि ' हेम० १ १३७ ८ वही ।

९ गोणादय । हेम० २ १७४

१ वा बृहस्पतौ । हेम० १ १३८, २ १३७, २ ६९ २ ५३

११ वेणौ णो वा । हेम० १ २०३

१२ इ स्वप्नादौ । हेम० १ ४६ इत्वे वेतसे । हेम० १ २०७

१३ 'एत इद्वा वेदना ' हेम० १ १४६

वेरुलिअ[1]	वैदूर्यम् (वैडूर्यम्)
वारण, वाअरण[2]	व्याकरणम्
वावडो[3]	व्यापृत
विउस्सग्गो[4]	व्युत्सर्ग
वोसिरण[5]	व्युत्सर्जनम्
सअड[6]	शकटम्
सक्को, सत्तो[7]	शक्त
सणिअरो[8]	शनैश्चर
समरो[9]	शवर
सुवओ	शावक
सारग[10]	शार्ङ्गम्
सिढिल, सढिल[11]	शिथिलम्
सिरोवेअणा, सिरविअणा[12]	शिरोवेदना
सीभरो, सीहरो, सीअरो[13]	शीकर

१ वैडूर्यस्य वेरुलिअ। हेम० २ १३३

२ व्याकरणप्राकारागते कगो। हेम० १ २०८

३ प्रत्यादौ ड। हेम० १ २०६

४ गोणादय। हेम० २ १७४ ५ वही।

६ कगचजतदप ' हेम० १ १७७ सयढ। 'सटाशकट

हेम० १ १९६

७ 'शक्तमुक्त ' हेम २ २

८ इत्सैन्यवशनैश्चरे। हेम० १ १४९ सणिच्छरो भी देखा जाता है।

९ शवरे वो म हेम० १ २५८ १० शाङ्ग 'हेम० २ १००

११ शिथिलेङ्गुदे वा। हेम० १ ८९ तथा हेम० १ २१५

१२ श्रोतोद्वा योन्य ' हेम० १ १५६

१३ शीकरे भहौ वा। हेम० १ १८४

सिप्पी[1]	शुक्ति
सुङ्ग, सुक्क[2]	शुक्ल, शुल्कम्
सिंग, संग[3]	शृङ्गम्
संकल[4]	शृङ्खलम्
सोंडीर[5]	शौण्डीर्यम्
सोरिअ[6]	शौर्यम्
सा, साणो[7]	श्वा
सीआण, सुसाण[8]	श्मशानम्
सामओ[9]	श्यामाक
सलाहा[10]	श्लाघा
सेलिफो, सेलिम्हो[11]	श्लेष्मा
सढा[12]	सटा

१ मलिनोभयशुक्ति ' हेम० २ १३८

२ शुक्ले ङ्गो वा । हेम० २ ११

३ 'मसृणमृगाङ्कमृत्युशृङ्ग ' हेम० १ १३०

४ शृङ्खले ख क । हेम० १ १८९

५ 'ब्रह्मचर्यतूर्यसौन्दर्यशौण्डीर्ये ' हेम० २ ६३

६ स्याद् भव्यचैत्यचौर्यसमेषु यात् । हेम० २ १०७

७ श्वन्शब्दस्य तु सा साणो इति प्रयोगौ भवत । देखो—ध्वनिविष्वचो रु । हेम० १ ५२

८ आर्षे श्मशानशब्दस्य सीआण सुसाण इत्यपि भवति । देखो—हेम० २ ८६

९ श्यामाके म । हेम० १ ७१

१० 'क्ष्माश्लाघा ' हेम० २ १०१,

११ लात् । हेम० २ १०६, सेफो, सिलिम्हो २ ५५

१२ सटाशकटकैटभे ढ । हेम० १९६

सत्तरी[1]	सप्तति
सत्तरह[2]	सप्तदश
समत्थो[3]	समर्थ
समड्डो[4]	समर्द
समत्त[5]	समस्तम्
सररुह, सरोरूह[6]	सरोरुहम्
सव्वंगिओ[7]	सर्वाङ्गीण
सक्खिणो[8]	साक्षी
सालवाहनो[9]	सातवाहन
सज्झस[10]	साध्वसम्
सामच्छ, सामत्थ[11]	सामर्थ्यम्
सुण्हा[12]	सास्ना
सीहो, सिंघो[13]	सिंह

---

१ सप्ततौ र । हेम० १ २१०

२ सख्यागद्गदे र । हेम० १ २१९ ३ हेम० २ ७९

४ 'समर्द्दीवतर्दि ' हेम० २ ३६

५ असमस्तस्तम्ब इति किम् ? समत्तो, तबो । देखो—हेम० २ ४५

६ 'ओतोद्वान्योन्य ' हेम० १ १५६

७ सर्वाङ्गादीनस्येक । हेम० २ १५१

८ गोणादय । हेम० २ १७४

९ अतसीसातवाहने ल । हेम० १ २११

१० साध्वसध्यह्या ज्झ । हेम० २ २६

११ सामर्थ्यात्सुकोत्सवे वा । हेम० २ २२

१२ उ सास्नास्तावके । हेम० १ ७५

१३ मासादेर्वा । हेम० १ २९, १ ९२, तथा १ २६४

सिहदत्तो[१]	सिंहदत्त
सिंहराओ[२]	सिंहराज
सोमालो, सुउमालो, सुकुमालो[३]	सुकुमार
सुकड (आर्ष मे)[४]	सुकृतम्
सूहवो, सुहवो[५]	सुभग
सुण्ह, सण्ह, सुहम (आर्ष मे)[६]	सूक्ष्म
सूरिओ[७]	सूर्य
सूआसो[८]	सोच्छ्वास
सिंधव[९]	सैन्धवम्
सिण्ण, सेण्ण[१०]	सैन्यम्
सणिद्ध, सिणिद्ध[११]	स्निग्धम्
सुण्हा सुसा[१२]	स्नुषा
सिआ[१३]	स्यात्

---

१ बहुलाधिकारात्क्वचिन्न भवति। देखो—हेम० १ ९२

२ वही। ३ 'न वा मयूख ' हेम १ १७१

४ प्रत्यादौ ड। हेम० १ २०६

५ 'ऊत्वे दुर्भगसुभगे ' हेम० १ १९२ तथा हेम० १ ११३

६ अदूत सूक्ष्मे वा। हेम० १ ११८ तथा २ ७५

७ 'स्याद्भव्यचैत्य ' हेम० २ १०७

८ ऊत्सोच्छ्वासे। हेम० १ १५७

९ इत्सैन्धवशनैश्चरे। हेम० १ १४९

१० सैन्ये वा। हेम० १ १५० तथा अइदैत्यादौ च। हेम० १ १५१ साइन्न भी होता है।

११ स्निग्धे वादितौ। हेम० २ १०९

१२ स्नुषाया ण्हो न वा। हेम० १ २६१

१३ स्याद् भव्य ' हेम० २ १०७

सिविणो, सिमिणो[1]	स्वप्न
हणुमन्तो[2]	हनूमान्
हीरो, हरो[3]	हर
हडडई, इरडई[4]	हरीतकी
हलिआरो, हरिआलो[5]	हरिताल
हलद्दी, हलिद्दी, हलद्दा[6]	हरिद्रा
हरिअदो[7]	हरिश्चन्द्र
हूणो, हीणो[8]	हीन
हिअ, हिअअ[9]	हृदयम्



१ इ स्वप्नादौ। हेम० १ ४८, हेम० १ २५९ तथा स्वप्ने नात् हेम० २ १०

२ उर्भूहनूमत्कण्डूयवातूले। हेम० १२१ तथा हेम० २ १५९

३ ईर्हरे वा। हेम० १ ५१

४ हरीतक्यामीतोऽत्। हेम० १ ९९

५ 'हरिताले ' हेम० २ १२१

६ हरिद्राया विकल्प इत्यन्ये। देखो 'पथिपृथिवी ' हेम० १ ८८

७ श्चो हरिश्चन्द्रे हेम० २ ८७

८ ऊर्हीनविहीने वा। हेम० १ १०३

९ इत्कृपादौ। हेम० १ १२८ तथा किसलयकालायसहृदये य। हेम० १ २६९

अष्टम अध्याय

[शौरसेनी]

(१) 'प्रकृति सस्कृतम्'[1] इस उक्ति के अनुसार शौरसेनी मे जितने भी शब्द आते है, उनकी प्रकृति सस्कृत है।

(२) शौरसेनी मे अनादि मे वर्तमान असयुक्त त का द आदेश होता है। जैसे —मारुदिणा मन्तिदो (त का द), एदाहि, एदाओ (एतस्मात्)

विशेष—(क) संयुक्त होने के कारण अज्जउत्त और सउन्तले मे त का द नही हुआ।

(ख) **आदि मे होने के कारण** 'तधा करेध जधा तस्स राइणो अणुकम्पणीआ भोमि' मे तधा और तस्स के तकारों का द नही हुआ।

(३) लक्ष्य के अनुरोध से शौरसेनी मे वर्णान्तर के अध (बाद मे) वर्तमान त का द होता है। जैसे —महन्दो, निच्चिन्दो, अन्देउर (महान्त , निश्चिन्त , अन्त पुरम्)।

विशेष—उक्त नियम सयुक्त त के विषय मे काचित्क है।

(४) शौरसेनी मे तावत् शब्द के आदि तकार का दकार विकल्प से होता है। जैसे —दाव, ताव (तावत्)।

(५) शौरसेनी मे इन्नन्त शब्द से आमन्त्रण (सम्बोधन की प्रथमा विभक्ति) के सु के पर मे रहने पर पूर्व के 'इन्' के

---

१ देखो—हेम० १ १ की वृत्ति तथा वर० १२ २

न का आकार विकल्प से होता है। जैसे —भो कञ्चुइआ (भो कञ्चुकिन्), सुहिआ (सुखिन्) अन्यत्र भो तवस्सि (भो तपस्विन्), भो मणस्सि (भो मनस्विन्)।

(६) शौरसेनी मे आमन्त्रणवाले सु के पर मे रहने पर पूर्ववाले नकारान्त शब्द के न के स्थान मे विकल्प से म होता है। जैसे —भो राय (भो राजन्), भो विअयवम्म (भो विजयवर्मन्) अन्यत्र भयव हुदवह (भगवन् हुतव्रह) होता है।

(७) शौरसेनी मे भवत् और भगवत् शब्दो से सु विभक्ति के पर मे रहने पर पूर्व के नकार का मकार होता है। जैसे — एदु भव, समणे भगव महावीरे। पज्जलितो भयव हुदासणो।

(८) शौरसेनी मे र्य के स्थान मे य्य आदेश विकल्प से होता है। जैसे —अय्यउत्त पय्याकुली कदम्हि (आर्यपुत्र पर्याकुलीकृतास्मि), सुय्यो (सूर्य) पक्ष मे अज्जो (आर्य), पज्जाउलो (पर्याकुल), कज्जपरवसो (कार्यपरवश)।

(९) शौरसेनी मे थ के स्थान मे ध विकल्प से होता है। जैसे —णाधो, णाहो, कध, कह, राजपधो, राजपहो (नाथ, कथ, राजपथ)।

(१०) शौरसेनी मे 'इह' और 'हच्'[1] आदेश के हकार के स्थान मे ध विकल्प से होता है। जैसे —इध (इह), होध (होह = भवथ), परित्तायध (परित्तायह = परित्रायध्वे)।

(११) शौरसेनी मे भू धातु के हकार का भ आदेश विकल्प से होता है। जैसे —भोदि, होदि (भवति)।

---

१ मध्यम पुरुष के बहुवचन में इत्था और ह अथवा ह्य होते हैं। दे इम पुस्तक के छठे अध्याय के वर्तमानकाल के प्रत्ययों में मध्यम पुरुष तथा हेम० ३ १४३

(१२) शौरसेनी मे पूर्व शब्द का 'पुरव' यह आदेश विकल्प से होता है। जैसे —अपुरव नाड्य, अपुरवागद (अपूर्व नाट्यम् अपूर्वागतम्), पक्ष मे अपुव्व पद, अपुव्वागद (अपूर्व पदम् , अपूर्वागतम्)।

(१३) शौरसेनी मे क्त्वा प्रत्यय के स्थान मे इय और दूण ये आदेश विकल्प से होते है। जैसे —भविय, भोदूण, हविय, होदूण, पढिय, पढिदूण, रमिय, रन्दूण। पक्ष मे—भोत्ता, होत्ता, पढित्ता, रन्ता।

विशेष—वररुचि (१२ ६) के अनुसार केवल इय होता है।

(१४) शौरसेनी मे कृ और गम धातुओ से पर मे आनेवाले क्त्वा प्रत्यय के स्थान मे अडुअ (किसी किसी पुस्तक के अनुसार अदुअ) आदेश विकल्प से होता है। और धातु के टि का लोप हो जाता है। जैसे —कडुअ, गडुअ। पक्ष मे—करिय, करिदूण, गच्छिय, गच्छिदूण।

विशेष—वररुचि (१२. १०) के अनुसार दुअ होता है।

(१५) शौरसेनी मे त्यादि के आदेश[1] इ और ए के स्थान मे दि आदेश होता है। जैसे —नेदि, देदि, भोदि, होदि।

(१६) अकार से पर मे यदि नियम १५ वाले इ और ए हो तो उनके स्थान मे दे और दि ये दोनो आदेश होते है। जैसे —अच्छदे, अच्छदि, गच्छदे, गच्छदि, रमदे, रमदि, किज्जदे, किज्जदि।

---

१ देखो—इसी पुस्तक के छठे अध्याय के वर्तमान काल के प्रथम पुरुष के एकवचन तथा इसी अध्याय का नियम ४।

(१७) शौरसेनी मे भविष्यत् अर्थ मे विहित प्रत्यय के पर मे रहने पर स्सि होता है। जैसे —भविस्सिदि करिस्सिदि, गच्छिस्सिदि।

विशेष—धातु और प्रत्ययो के बीच मे आने के कारण 'स्सि' विकरण है।

(१८) शौरसेनी मे अत् से पर मे आनेवाले ङसि के स्थान मे आदो और आदु ये आदेश होते है और शब्द के टि (अ) का लोप होता है। जैसे —दूरादो, दूरादु (दूरात्)।

(१९) शौरसेनी मे इदानीम् के स्थान मे दाणि यह आदेश होता है। जैसे —अनन्तर करणीय दाणि आणवेदु अय्यो।

विशेष—उक्त नियम साधारण प्राकृत मे भी लागू होता देखा जाता है।

(२०) शौरसेनी मे तस्मात् के स्थान मे ता आदेश होता है। जैसे —ता जाव पविसामि। ता अल एदिणा माणेण।

(२१) शौरसेनी मे इत् और एत् के पर मे रहने पर अन्त्य मकार के आगे णकार का आगम विकल्प से होता है। **इकार के पर मे जैसे** —जुत्तंणिम, जुत्तमिम, सरिसणिम, सरिसमिम, **एकार के पर मे जैसे** —किणेद, किमेद, एवणेद, एवमेद।

(२२) शौरसेनी मे एव के अर्थ मे य्येव यह निपात प्रयुक्त होता है। जैसे —मम य्येव बम्भणस्स, सो य्येव एसो।

(२३) चेटी के आह्वान अर्थ मे शौरसेनी मे हञ्जे इस निपात का प्रयोग किया जाता है। जैसे —हञ्जे चदुरिके।

(२४) विस्मय और निर्वेद अर्थो मे शौरसेनी मे हीमाणहे इस निपात का प्रयोग किया जाता है। **विस्मय में जैसे :—**

हीमाणहे जीवन्तवच्छा मे जणणी। **निर्वेद मे जैसे** —हीमाणहे पलिस्सन्ता हगे एदेण निपविधिणो दुव्ववसिदेण।

(२५) शौरसेनी मे ननु के अर्थ मे ण यह निपात प्रयुक्त होता है। जैसे —ण अफलोदया, ण अय्यमिस्सेहि पुढम य्येव आणत्त, ण भव मे अग्गदो चलदि।

विशेष—आर्ष मे ण का वाक्यालङ्कार में भी प्रयोग होता है। जैसे —नमोत्थु ण जयाण।

(२६) शौरसेनी मे हर्ष प्रकट करने के लिए अम्महे इस निपात का प्रयोग किया जाता है। जैसे —अम्महे एआए सुम्मिलाए सुपलिगढिदो भव।

(२७) शौरसेनी मे विदूषक के हर्ष द्योतन मे 'हीही' इस निपात का प्रयोग किया जाता है। जैसे —हीही भो, सपन्ना मणोरधा पियवयस्सस्स।

(२८) शौरसेनी मे व्यापृत शब्द के त का तथा कही कही पुत्र शब्द के त का भी ड होता है। जैसे —वावडो, पुडो पुत्तो (व्यापृत, पुत्र)।

(२९) शौरसेनी मे गृद्ध जैसे शब्दो के ऋकार का इकार होता है। जैसे —गिद्धो (गृध्र)।

(३०) ब्रह्मण्य, विज्ञ, यज्ञ, और कन्या शब्दो के ण्य, ज्ञ और न्य के स्थान मे ञ्ञ आदेश विकल्प से होता है। कि तु पैशाची मे यही कार्य नित्य ही होता है। जैसे —ब्रह्मञ्ञो, विञ्ञो, जञ्ञो और कञ्ञा। पक्ष मे बह्मण्णो, विण्णो, कण्णा (ब्रह्मण्य, विज्ञ, कन्या)।

(३१) शौरसेनी मे सर्वज्ञ और इङ्गितज्ञ शब्दो के अन्त्य ज्ञ के स्थान मे ण होता है। जैसे —सव्वण्णो, इङ्गिअण्णो (सर्वज्ञ, इङ्गितज्ञ)।

(३२) शौरसेनी मे नपुसक लिङ्ग मे वर्तमान शब्दो से पर मे आनेवाले जस् और शस् के स्थान मे णि आदेश और पूर्व स्वर का दीर्घ भी होता है। जैसे —वणाणि, धणाणि (वनानि, धनानि)।

(३३) शौरसेनी मे तिङ् प्रत्ययों के पर मे रहने पर भूधातु के स्थान मे भो आदेश होता है। जैसे —भोमि।

विशेष—लृट् (अर्थात् भविष्यत् काल के तिङ्) के पर मे रहने पर उक्त नियम लागू नही होता। जैसे -भविस्सिदि।

(३४) शौरसेनी मे तिङ् के पर मे रहने पर दा धातु के स्थान मे दे आदेश होता है और केवल लृट् के पर मे रहने पर दइस्स आदेश। सामान्यत तिङ् मे जैसे —देमि। लृट् के पर मे रहने पर जैसे —दइस्स।

(३५) शौरसेनी मे कृञ् धातु के स्थान मे कर आदेश होता है। जैसे —करेमि।

(३६) शौरसेनी मे तिङ् के पर मे रहने पर स्था धातु के स्थान मे चिट्ठ आदेश होता है। जैसे —चिट्ठदि।

(३७) शौरसेनी मे तिङ् के पर मे रहने पर स्मृ, दृश और अस धातुओ के स्थान मे क्रमश सुमर, पेक्ख और अच्छ आदेश होते है। जैसे —सुमरदि, पेक्खदि, अच्छन्ति (स्मरति, पश्यति, सन्ति)।

विशेष—(क) तिप् के साथ अस धातु के सकार के स्थान मे त्थि आदेश होता है। अत्थि। जैसे —पससिद णात्थि मे वाआ-विहवो।

(ख) भविष्यत् काल मे मिप्-सहित अस के स्थान मे विकल्प से स्सं आदेश होता है। पक्ष मे धातु के स्वर का दीर्घत्व भी होता है। स्सं, आस्स।

(३८) शौरसेनी मे स्त्री शब्द के स्थान मे 'इत्थी' आदेश होता है। जैसे —इत्थी (स्त्री)।

(३९) शौरसेनी मे इव के स्थान मे विअ आदेश होता है। जैसे —विअ।

(४०) जस् सहित अस्मद् के स्थान मे वअ और अम्हे ये दोनो रूप शौरसेनी मे होते है। जैसे —वअ और अम्हे (वयम्)।

(४१) शौरसेनी मे सर्वनाम शब्दो से पर मे आनेवाली (सप्तमी एकवचन की) ङि विभक्ति के स्थान मे सित्वा आदेश होता है। जैसे —सव्वसित्वा, इदरसित्वा (सर्वस्मिन् , इतरस्मिन्)।

(४२) शौरसेनी से भावकर्म और कर्ता अर्थों मे धातु से परस्मैपद के ही प्रत्यय होते है। भाव मे जैसे —कि दाणि दासीएपुत्ता ? दुभिक्खरुढरङ्क विअ उद्धक सासाअसि एसा सा सेत्ति। कर्ता मे जैसे —अज्ज वन्दामि। कर्म मे जैसे —अदो ज्जेव कामीअदि।

(४३) आश्चर्य शब्द का अच्चरिअ रूप शौरसेनी मे होता है। जैसे —अहह, अच्चरिअ अच्चरिअ।

(४४) शेष शब्दो के साधन प्राकृत अथवा महाराष्ट्री के अनुसार किये जाते है।

प्राकृतसर्वस्व के अनुसार शौरसेनी के शब्द —

शौरसेनी	संस्कृत	विशेष निर्देश्य
अउव्व	अपूर्वम्	
अग्गिम्मि	अग्नौ	
अङ्गारो	अङ्गार	इत् का अभाव
अहिमण्णू	अभिमन्यु	ञ्ञ का अभाव
अव्वह्मण्ण	अब्रह्मण्यम्	
अव्वह्मज्ज (ञ्ञ)		

अअ रुक्खो	अय वृक्ष	
अमु जणो	असौ जन	
अमु वहू	असौ वधू	
अमु वण	अदो वनम्	
अदो कारणादो	एतस्मात् (अमुष्मात्) कारणात्	
अह	अहम्	
अम्हे	वय, अस्ः	
अम्ह, अम्हाण	अस्माकम्	
इदो	इत	
इअ बाला	इय बाला	
इण धण	इद धनम्	
इद वण	इद वनम्	
इङ्गिअज्जो (ञ्ञो)	इङ्गितज्ञ	
ईदिस	ईदृशम्	एत का अभाव
उलूहलो	उलूखल	ओत् का अभाव
उवरि	उपरि	अत् का अभाव
उत्थिदो	उत्थित	ठ का अभाव
एसो जणो	एष जन	
कध	कथम्	
कत्थ, कस्सि, कहि	कस्मिन्	म्मि नहीं हुआ
कण्णआ, कज्ज (ञ्ञ) आ	कन्यका	
कबन्धो	कबन्ध	
किंसुओ	किशुक	ओत्व का अभाव
किराता	किरात	च का अभाव

कीदिस	कीदृशम्	एत् का अभाव
कुमारी	कुमारी	ह्रस्व का अभाव
कुदो	कुत	
कुम्हण्डो	कुष्माण्ड	ह् का अभाव
केसुओ	किंशुक	ओत्व का अभाव
कोदूहल	कौतूहलम्	द्वित्व का अभाव
खणो	क्षण	छ का अभाव
खीर	क्षीरम्	छ का अभाव
गद्दहो	गर्दभ	ड का अभाव
चउट्ठी	चतुर्थी	ओत् का अभाव
चउद्दही	चतुर्दशी	ओत् का अभाव
चिण्ह	चिह्नम्	न्ध का अभाव
जधा	यथा	ह्रस्व का अभाव
जण्णसेणो	यज्ञसेन	
जादिस	यादृशम्	
जुहुट्ठिरो	युधिष्ठिर	अत् का अभाव
दुज्झमाणो	दह्यमान	
णईओ	नद्य	
णूण	नूनम्	
तत्थ, तहिं, तस्सि	तस्मिन्	म्मि का अभाव
तए	त्वया, त्वयि	
तधा	तथा	ह्रस्व का अभाव
तादिस	तादृशम्	
तुण्ड	तुण्डम्	ओत्व का अभाव
तुम	त्व अथवा त्वाम्	
तुम्हे	यूयम् , युष्मान्	
तुम्हेहि	युष्माभि	

तुम्हेहिन्तो	युष्मभ्यम	
तुम्हाण	युष्माकम्	
तुम्हेसु	युष्मासु	
तुमोदा	त्वत्	
तुम्ह, ते	तव	
थूल	स्थूलम्	द्वित्व का अभाव
दस, दह	दश	
दसरहो	दशरथ	
दे	तव	
देअरो	देवर	इत् का अभाव
देव्व	दैवम्	अइ का अभाव
नइए	नद्या, नद्या, नद्या, नद्याम्	
पओट्ठो	प्रकोष्ठ	षत्व का अभाव
पासाणो	पाषाण	ष, ह का अभाव
पावो	पाप	
पिण्ड	पिण्डम्	एत्व का अभाव
पिदणा	पृतना	
पुरुसो	पुरुष	इत्व का अभाव
पोक्खर	पुष्करम्	
पोक्खरणी	पुष्करिणी	
फोडओ	स्फोटक	ख का अभाव
भिन्दिवालो, भिण्डिवालो	भिन्दिपाल	
भाणुओ, भाणओ	भानव	
मए	मया	
मस	मासम्	

मइ	मयि	
मऊरो	मयूर	ओत् का अभाव
मत्	मत्	
मह, मम	मम	
महूसो	मधूक	ओत् का अभाव
मत्तो, ममादो	मत्	
मादर	मातरम्	
मालाओ	माला	
मिओ	मृत	
मे	माम्	
मे	मम	
मोत्ती	मुक्ता	
रुक्खो	वृक्ष	ओत् का अभाव
लवण	लवणम्	ओत् का अभाव
लावण्य	लावण्यम्	ओत् का अभाव
वअर	वदरम्	ओत् का अभाव
वफ्फो	वाष्प	
वअ	वयम्	
वहुए	वध्वा, वध्वा, वध्वा, वध्वाम्	
वहूओ	वध्व	
वालाए	वालया, बालाया, बालया, बालायाम्	
वाउम्मि	वायौ	
विहप्फदी	बृहस्पति	भ आदि का अभाव
वेअणा	वेदना	इत् का अभाव
वेदसो	वेतस	इत् का अभाव

वो	व (युष्मान् , युष्माकम्)	
सह्हल	सफलम्	
सरिक्ख	सदृक्षम्	ठ का अभाव
सम्मद्दो	सम्मर्द	उ का अभाव

प्राकृत सर्वस्व के अनुसार शौरसेनी मे तिडन्त रूपों के नियम

(४५) (क) धातुओ से परस्मैपद ही होते है।

(ख) तीनो कालो मे प्राय लट् लकार ही होता है।

(ग) त्यादि के तकार का दकार होता है।

(घ) बहुवचन मे तकार का धकार होता है।

(ङ) उत्तम पुरुष मे म्ह होता है।

(च) उत्तम पुरुष मे मिप् के साथ स्सम् ही होता है।

(छ) त, ज्ज, हा, सोच्छ वोच्छ ये सब नहीं होते हैं।

प्राकृतसर्वस्व के अनुसार शौरसेनी धातु

सस्कृत	शौरसेनी	सिद्ध क्रियापद
भू	भो और हो	भोदि, होदि, क्त मे भूद
दृश	पेच्छ[1]	पेच्छदि
ब्रू	वुच्च	वुच्चदि
कथ	कध	कधेदि
घ्रा	जिग्घ	जिग्घदि
भा	भाअ	भाअदि
मृज	फुस	फुसदि
घूर्ण	घुम्म	घुम्मदि

---

१ हेमचन्द्र के अनुसार पेक्ख आदेश होता है। देखो अष्टम अध्याय का नियम ३७।

ष्टु	थुण	थुणदि
भी	भा	भादि
सृज	पस	पसदि
चर्च	चव्व	चव्वदि
ग्रह	गेण्ड	गेण्डदि
गृह्य	गेज्झ, घेप्प	गेज्झदि, घेप्पदि
शक	सक्कुण, सक्क	सक्कुणादि, सक्कदि
म्लै	मिआअ	मिआअदि
उद् + स्था	उत्थ	उत्थेदि
स्वप	सुअ	सुअदि
शीङ	सुआ	सुआदि
रुध	रोव	रोवदि
रुद	रोद	रोददि
मस्ज	वुड्ड	वुड्डदि
दुह्य	दुहीअ	दुहीअदि
उह्य	वहीअ	वहीअदि
लिह्य	लिहीअ	लिहीअदि

प्राकृतसर्वस्व के अनुसार नीचे लिखे शब्दो को भी शौरसेनी मे जानना चाहिये।

भिप्फो (भीष्म), सत्तुग्घो (शत्रुघ्न), जेत्तिक (यावत्), तेत्तिक (तावत्), एत्तिक (एतावत), भट्टा (भर्ता) धूदा, दुहिदिआ (दुहिता), इत्थी (स्त्री), भादा, भदुओ (भ्राता, भ्रातर), जामादा, जामादुओ (जामाता, जामातर)।

द्राक् अर्थ मे दउत्ति, निश्चय अर्थ मे क्खु और खु, इव के अर्थ मे व्व, एव के अर्थ मे ज्जव और जेव तथा ननु के अर्थ मे ण प्रयुक्त होते है।

नवम अध्याय

[मागधी]

(१) प्रकृति शौरसेनी (वर० ११ २) इस वररुचि सूत्र के अनुसार मागधी की प्रकृति शौरसेनी मानी गई है। साथ ही साधारण प्राकृत के शब्द भी मागधी के मूल माने जाते है।

(२) मागधी मे अदन्त पुल्लिङ्ग शब्दो का प्रथमा के एक वचन मे ओकारान्त रूप न होकर एकारान्त रूप होता है। जैसे —एशे मेशे, एशे पुलिशे (एष मेष, एष पुरुष), करेमि भन्ते (करोमि भदन्त)।

(३) मागधी मे रफ के स्थान मे लकार और दन्त्य सकार के स्थान मे तालव्य शकार होते है। **रफ का जैसे :—** नले, कले (नर कर), **स का श जैसे :—** हशे (हस), **दोनो का जैसे :—** शालशे, पुलिशे (सारस, पुरुष)।

(४) मागधी मे यदि सकार और षकार (अलग-अलग) सयुक्त हो तो उनके स्थान मे स होता है। ग्रीष्म शब्द मे उक्त आदेश नही होता। **सयुक्त सकार मे जैसे :—** पस्खलदि हस्ती (प्रस्खलति हस्ती) बुहस्पदी (बृहस्पति) मस्कली (मस्करी), विस्मये (विस्मय), **संयुक्त षकार मे जैसे :—** शुस्क दालु (शुष्कदारु), कस्ट (कष्टम्), विस्नु (विष्णुम्), उस्मा (ऊष्मा), निस्फल (निष्फलम्) धनुस्खण्ड (धनुष्खण्डम्)

विशेष—(क) उक्त नियम जहाँ लगता है, वहाँ सयोग के आगे-पीछे के वर्णों का लोप नही होता।

(ख) ग्रीष्म शब्द मे उक्त नियम के लागू नही होने से गिम्हवाशले (ग्रीष्मवासर) होता है।

(५) द्विरुक्त ट (ट्ट) और षकार से आक्रान्त (युक्त) ठकार के स्थान मे मागधी मे स्ट आदेश होता है। **ट्ट मे जैसे**:—पस्टे (पट्ट), भस्टालिका (भट्टारिका) भस्टिणी (भट्टिनी), **ष्ट मे जैसे**:—शुस्टु कदं (सुष्ठु कृतम्) कोस्टागाल (कोष्ठागारम्)।

(६) स्थ और र्थ इन दोनो के स्थान मे मागधी मे सकार से सयुक्त तकार होता है। **स्थ मे जैसे**:—उवस्तिदे (उपस्थित), शुस्तिदे (सुस्थित), **र्थ मे जैसे**:—अस्तवदी (अर्थवती), शस्तवाहे (सार्थवाह)।

(७) मागधी मे ज, द्य और य के स्थान मे य आदेश होता है। **ज का जैसे** —यणवदे (जनपद), अय्युणे (अर्ज्जुन), दुय्यणे (दुर्ज्जन), गय्यदि (गर्ज्जति), **द्य का जैसे**:—मय्य (मद्यम), अय्य किल विय्याहले आगदे (अद्य किल विद्याधर आगत ।), **य का जैसे**:—यादि (याति)।

विशेष—इसी पुस्तक के दूसरे अध्याय के चौदहवे नियम के बाधनार्थ य के स्थान मे पुन य का विधान किया जाता है।

(८) मागधी मे न्य, ण्य ज्ञ और ञ्ज इन सयुक्ताक्षरो के

स्थान मे द्विरुक्त ञ होता है। **न्य का जैसे :**—अहिमञ्ञु-कुमाले, (अभिमन्युकुमार) कञ्ञकावलग (कन्यकावरणम्) **ण्य का जैसे** —अबम्हञ्ञ (अब्रह्मण्यम्), पुञ्ञाह (पुण्याहम्) **ज्ञ का जैसे** —पञ्ञाविशाले (प्रज्ञाविशाल) शव्वञ्ञे (सर्वज्ञ) अवञ्ञा (अवज्ञा), **ञ्ज का जैसे** —अञ्ञली (अञ्जलि , वणञ्ञए (धनञ्जय), पञ्ञले (पञ्जर)।

(९) मागधी मे व्रज धातु के जकार का ञ्ञ आदेश होता है। जसे —वञ्ञदि (व्रजति)।

विशेष—उक्त नियम इसी अध्याय के सातवे नियम का अपवाद है। अन्यथा य आदेश हो जाता है।

(१०) मागधी मे अनादि मे वर्तमान छ के स्थान मे शकार से सयुक्त चकार श्च) होता है। जैसे —गश्च, गश्च (गच्छ, गच्छ), उश्चलदि (उच्छलति), पिश्चिले (पिच्छिल), तिरिश्चि पेस्कदि (तिरिच्छि पेच्छइ=तिर्यक् प्रेक्षते)।

(११) मागधी मे अनादि मे वतमान क्ष के स्थान मे जिह्वामूलीय ≍क[2] आदेश होता है। जसे —य≍के (यक्ष), ल≍कशे (रक्षसे)।

(१२) मागधी मे प्रेक्ष और आचक्ष के क्ष के स्थान मे स्क आदेश होता है जैसे —पेस्कदि (प्रेक्षते), आचस्कदि (आचक्षते)।

विशेष—पूर्व नियम (ग्यारहवे) का यह नियम अपवाद है

---

१ देखो—अगला नियम (१२)।

२ प्राकृत प्रकाश के अनुसार स्क आदेश होकर यस्के और लस्कशे रूप होते हैं। द०—वर० ११ ८

(१३) मागधी मे स्था धातु के तिष्ठ के स्थान मे चिष्ठ आदेश होता है। जैसे —चिष्ठदि (तिष्ठति)।

विशेष—किसी-किसी पुस्तक के अनुसार चिट्ठ आदेश होकर चिट्ठदि रूप भी होता है।

(१४) मागधी मे अवर्ण से पर मे आनेवाले ङस् (षष्ठी के एकवचन) के स्थान मे आह आदेश विकल्प से होता है। आह के पूर्ववर्ती टि का लोप होता है। जैसे —हगे न **ईदिशाह कम्माह** कारी (अहं न ईदृशस्य कर्मणः कारी) पक्ष मे—**भीमशेणस्स** पश्चादे हिण्डीअदि।

(१५) मागधी मे अवर्ण से पर मे विद्यमान आम् के स्थान मे आहँ आदेश विकल्प से होता है और पूर्व के टि का लोप हो जाता है। जैसे —जाहँ (येषाम्), पक्ष मे—जाण (येषाम्)।

(१६) मागधी मे अहम् और वयम् के स्थान मे हगे आदेश होता है। जैसे —हगे शक्कावदालतिस्तणिवाशी धीवले (अहं शक्रावतारतीर्थनिवासी धीवर)।

विशेष—प्राकृतप्रकाश के अनुसार अहं के स्थान पर हके और अहके भी होते है।

प्राकृत-प्रकाश के अनुसार मागधी के विशेष शब्द।

संस्कृत	मागधी	प्रा प्र अ	सूत्र
माष	माशे	११	३
विलास	विलाशे	११	३
जायते	यायदे	११	४
परिचय	पलिचये	११	५
गृहीतच्छल	गहिदच्छले	११	५

विजल	वियले	११	५
निर्झर	णिज्झिले	११	५
हृदये	हडक्के	११	६
आदर	आलले		
कार्यम्	कय्ये	११	७
दुर्जन	दुय्यणो	११	७
राक्षस	लस्कशे	११	८
वृक्ष	रुक्खे	११	८
अहम्	हके अहके, हगे	११	९
एष राजा	एशि लाआ	११	१०
एष पुरुष	एशे पुलिशे	११	१०
हसित	हशिदु, हशिदि, हशिद	११	११
पुरुषस्य	पुलिशाह, पुलिशश्श	११	१२
तिष्ठति	चिष्ठदि	११	१४
कृत	कडे	११	१५
मृत	मडे	११	१५
गत	गडे	११	१५
सोढ्वा	सहिदाणि	११	१६
कृत्वा	कारिदाणि		
शृगाल	शिआले, शिआलके	११	१६



दशम अध्याय

[पैशाची]

(१) पैशाची की प्रकृति शौरसेनी है।

(२) पैशाची मे ज्ञ के स्थान मे ञ्ञ होता है। जैसे — पञ्ञा (प्रज्ञा) सञ्ञा (सज्ञा), सव्वञ्ञो (सर्वज्ञ), ञ्ञान (ज्ञानम्), विञ्ञान (विज्ञानम्)।

(३) राजन् शब्द के रूपो मे जहाँ जहाँ ज्ञ रहता है उस ज्ञ के स्थान मे चिञ् आदेश विकल्प से होता है। जैसे — राचिञा लपित, रञ्ञा लपित (राज्ञा लपितम्), राचिञो धन रञ्ञो धन (राज्ञो धनम्)।

(४) पैशाची मे न्य और ण्य के स्थान मे ञ्ञ आदेश होता है। जैसे — कञ्ञका अभिमञ्ञु (कन्यका अभिमन्युः)। पुञ्ञकम्मो पुञ्ञाहं (पुण्यकर्म पुण्याहम्)।

(५) पैशाची मे णकार का नकार हो जाता है। जैसे — गुनगनयुत्तो (गुणगणयुक्त), गुनेन (गुणेन)।

(६) पैशाची मे तकार और दकार के स्थान मे तकार हो जाता है। जैसे — भगवती, पव्वती (भगवती, पार्वती)। मतनपरवसो (मदनपरवश), सतन (सदनम्), तामोतरो (दामोदर), होतु (होदु शौ०)।

(७) पैशाची मे लकार के स्थान मे ळकार हो जाता है। जैसे — सळिळ, कमळ (सलिल कमलम्)।

✓(८) पैशाची मे श और ष के स्थान मे स होता है। जैसे —सोभति, सोभन, ससी (शोभते, शोभन शशी)। विसमो, विसानो (विषम, विषाण)।

✓(९) पैशाची मे हृदय शब्द के यकार के स्थान मे पकार हो जाता है। जैसे —हितपक (हृदयकम्)।

✓(१०) पैशाची मे टु के स्थान तु आदेश विकल्प से होता जैसे —कुतुम्बक, कुटुम्बक (कुटुम्बकम्)।

✓(११) पैशाची मे क्त्वा प्रत्यय के स्थान मे तून आदेश होता है। जैसे —गन्तून, हसितून, पठितून (गत्वा, हसित्वा, पठित्वा)।

(१२) पैशाची मे ष्ट्वा के स्थान मे द्धून और त्थून आदेश होते है। जैसे —नद्धून नत्थून, तद्धून, तत्थून (नष्ट्वा, तष्ट्वा)

✓(१३) पैशाची मे कहीं कहीं र्य, स्न और ष्ट के स्थानो मे क्रमश रिय, सिन और सट आदेश होते हैं। जैसे - भारिया, सिनात, कसट (भार्या, स्नातम्, कष्टम्)।

विशेष—(क) प्राकृतप्रकाश (१० .) के अनुसार स्न के स्थान मे सन आदेश होता है। जैसे —सनान, सनेहो (स्नानम्, स्नेह)।

(ख) नियम १३ मे 'कहीं-कहीं' कहने से सुज्जो (सूर्य), सुनुसा और तिट्ठो (दिष्ट) मे उक्त नियम नहीं लगा

(१४) पैशाची मे भाव कर्मवाले यक् के स्थान मे इय्य आदेश होता है। जैसे —रमिय्यते, पठिय्यते (रम्यते, पठ्यते)

(१५) पैशाची मे कृ धातु से पर मे आये हुए भाव कर्मवाले यक् के स्थान मे ईर आदेश होता है और धातु के टि (ऋ) का लोप हो जाता है। जैसे —कीरते (क्रियते)।

(१६) पैशाची मे यादृश, तादृश आदि के दृ के स्थान मे

ति आदेश होता है। जैसे —यातिसो, तातिसो, भवातिसो, अञ्ञातिसो, युम्हातिसो, अम्हातिसो (यादृश , तादृश , भवादृश , अन्यादृश , युष्मादृश , अस्मादृश)।

(१७) पैशाची मे इच् और एच् (देखो छठे अध्याय मे वर्तमान काल के प्रत्यय) के स्थान मे ति आदेश होता है। जैसे —वसुआति, भोति, नेति, तेति।

(१८) पैशाची मे अकार से पर मे आनेवाले इच् और एच के स्थान मे ते और ति दोनों आदेश होते है। जैसे —लपते, लपति, अच्छते, अच्छति, गच्छते, गच्छति, रमते, रमति।

(१९) पैशाची मे इच और एच् के स्थान मे, भविष्यत् काल मे स्सि न होकर एय्य आदेश ही होता है। जैसे —हुवेय्य[1] (भविष्यति)।

(२०) पैशाची मे अकार से पर मे आनेवाले ङसि के स्थान मे आतो और आतु ये दो आदेश होते है। जैसे —तुमातो, तुमातु, ममातो ममातु।

(२१) पैशाची मे टा के साथ तद् और इदम् शब्दो के स्थान मे नेन और स्त्रीलिङ्ग मे नाए आदेश होते है। जैसे —नेन कतसिनानेन (तेन कृतस्नानेन अथवा अनेन इत्यादि), पूजितो च नाए (पूजितश्चानया)।

प्राकृत प्रकाश के अनुसार पैशाची के विशेष शब्द—

सस्कृत	पैशाची	प्रा प्र अ	सूत्र
मेघ	मेखो	१०	२
गगनम्	गकन	१०	२
राजा	राचा	१०	२

1 त तद्धून चिन्तित रञ्ञा का एसा हुवेय्य (ता दृष्ट्वा चिन्तित राज्ञा का एषा भविष्यति !

निर्झर	णिज्झरो	१०	२
वडिशम्	वटिश	१०	२
दशवदन	दसवत्तनो		
माधव	माथवो	१०	३
गोविन्द	गोविन्तो	१०	२
केशव	केसवो	१०	२
सरभस	सरफस	१०	२
शलभ	सलफो	१	२
संग्राम	संगामो	१०	२
इव	पिव	१०	४
तरुणी	तलुनी	१०	५
कष्टम्	कसट	१०	६
स्नानम्	सनान	१०	
स्नेह	सनेहो	१०	७
भार्या	भारिआ	१०	८
विज्ञात	विञ्ञातं	१०	८
सर्वज्ञ	सव्वञ्ञो	१०	९
कन्या	कञ्ञा	१०	९
कार्यम्	कञ्च	१०	११
राज्ञा	राचिना रञ्ञा	१०	१२
राज्ञ	राचिनो, रञ्ञो	१०	१२
दत्त्वा	दातून	१०	१३
गृहीत्वा	घेत्तून	१०	१३
हृदयकम्	हितअक	१०	१४



---

* यह सूत्र नही लगा।

एकादश अध्याय

[अपभ्रंश]

(१) अपभ्रंश मे किसी एक स्वर के स्थान मे कोई एक दूसरा स्वर प्राय हो जाता है। जैसे —कचित् के लिए अपभ्रंश मे कच्च और काच्च, वेणी के लिए वेण और वीण, बाहु के लिए बाह और बाहा, पृष्ठ के लिए पट्ठि पिट्ठि और पुट्ठि, तृण के लिए तणु, तिणु और तृणु, सुकृतम् के लिए सुकिदु, सुकिउ और कृदु, क्लिन्न के लिए किन्नउ, किलिन्नउ, लेखा के लिए लिह लीह और लेह तथा गौरी के लिए गउरी और गोरी ये रूप विभिन्न स्वरो के आने से होते है।

(२) अपभ्रंश मे स्वादि विभक्तियो के आने पर प्राय कभी तो प्रातिपदिक के अन्त्य स्वर का दीर्घ और कभी ह्रस्व हो जाता है। सु विभक्ति मे जैसे :—ढोल्ला, सामला (विट श्यामल, ह्रस्व स्वर का दीर्घ), धण, सुवण्णरेह (धण संस्कृत का धन्या है। कुछ लोग प्रिया शब्द के स्थान मे धण आदेश मानते है। सुवर्णरेखा। इनमे दीर्घ स्वर का

१-१ ढोल्ला सामला धण चम्पावण्णी।
णाइ सुवण्णरेह कसवट्टइ दिण्णी॥
(विट श्यामल धन्या चम्पकवर्णा।
इव सुवर्णरेखा कषपट्टके दत्ता॥)

ह्रस्व हुआ है।) **स्त्रीलिङ्ग** मे जैसे[1]—**विट्टीए** (पुत्रि । यहाँ ह्रस्व का दीर्घ हुआ है), **पइट्ठि** (प्रविष्टा । यहाँ दीर्घ का ह्रस्व हुआ है।), **निसिश्रा खग्ग** (निशिता खड्गा । यहाँ दीर्घ का ह्रस्व हुआ है।), **घोडा** (अश्वा । यहाँ ह्रस्व स्वर का दीर्घ हो गया है।)

(३) अपभ्रंश मे सु (प्रथमा के एकवचन) और अम् विभक्तियो के आने पर शब्द के अन्तिम अ के स्थान मे उ हो जाता है। जैसे —दहमुहु[3], तोसिअ-सकरु चउमुहु छमुहु (दशमुख , तोषित शकर चतुर्मुख षण्मुखम्)।

(४) अपभ्रंश मे पुल्लिङ्ग मे वर्तमान शब्द (प्रातिपदिक के अन्त्य अ के स्थान मे अ। विकल्प से होता है, जब कि उन

---

१ विट्टीए मइ भणिय तुहुँ मा करु वङ्की दिट्ठि ।
पुत्ति सकण्णी भल्लि जिव मारइ हिअइ पइट्ठि ॥
(पुत्रि मया भणिता त्व मा कुरु वक्रां दृष्टिम् ।
पुत्रि सकर्णा भल्लिर्यथा मारयति हृदय प्रविष्टा ॥)

२ एइ ति घोडा एह थलि एइ ति निसिआ खग्ग ।
एत्थु मुणीसिम जाणिअइ जो न वि वालइ वग्ग ॥
(एते ते अश्वा एषा स्थली एते ते निशिता खड्गा ।
अत्र मनुष्यत्व ज्ञायते य नापि वालयति वल्गाम् ॥)

३ दहमुहु भुवण-भयकरु तोसिअ सकरु णिग्गउ रहवरि चडिअउ ।
चउमुहु छमुहु झाइवि एक्कहिं लाइवि णावइ दइवें घडिअउ ॥
(दशमुख भुवनभयकर तोषितशङ्कर निर्गत रथवरे आरूढ
चतुर्मुख षण्मुख ध्यात्वा एकस्मिन् लगित्वा इव दैवेन घटित)।

अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दो से पर मे सु विभक्ति आई हुई हो। जसे —जो[1], सो (य, स)।

विशेष—पुल्लिङ्ग मे कहने से 'अङ्गहि अङ्गु न मिलउ हलि' (अङ्गै अङ्ग न मिलित सखि) मे नपुसक अङ्गु और मिलिउ मे ओ नही हुआ।

(५) अपभ्रश मे टा विभक्ति के आने पर शब्द के अन्तिम अ के स्थान मे ए हो जाता है। जैसे —पवसन्तेण[2] (प्रवसता), नहेण (नखेन)।

(६) अपभ्रश मे शब्द के अन्त्य अकार और ङि (सप्तमी एकवचन) के स्थान मे इकार और एकार होते है। जैसे —तलि घल्लइ[3], तले घल्लइ (तले क्षिपत्ति)।

(७) अपभ्रश म शब्द के अन्त्य अ के स्थान मे, भिस् (तृतीया के बहुवचन) के पर मे रहने पर, एकार आदेश विकल्प

---

१ अगलिअ नेह-निवट्टाह जोअण-लक्खु वि जाउ।
वरिस सएण वि जो मिलइ सहि सोक्खह सो ठाउ॥
(अगलितस्नेहनिर्वृत्ताना योजनलक्षमपि जायताम्।
वर्पशतेनापि य मिलति सखि सौख्याना स स्थानम्॥)

२ जेमहु दिण्णा दिअहडा दइए पवसन्तेण।
ताण गणन्तिएँ अङ्गुलिउ जज्जरिआउ नहेण॥
(ये मम दत्ता दिवसा दयितेन प्रवसता।
तान् गणयन्त्या अङ्गुल्य जर्ज्जरिता नखेन॥)

३ सायरु उप्परि तणु धरइ तलि घल्लइ रयणाइ।
सामि सुभिच्चु वि परिहरइ समाणेइ खलाइ॥
(सागर उपरि तृणानि धरति तले क्षिपति रत्नानि।
स्वामी सुभृत्यमपि परिहरति समानयति खलान्॥)

से होता है। जैसे —लक्खेहि[1] (लक्षैः), पक्ष मे गुणहिँ (गुणैः)।

(८) अपभ्रंश मे अकारान्त शब्द से पर मे आने वाले ङसि विभक्ति के स्थान मे हे और हु आदेश होते हैं। जैसे — वच्छहे[2] गृण्हइ, वच्छहु गृण्हइ (वृक्षात् गृह्णाति)।

(९) अपभ्रंश मे अदन्त शब्द से पर मे आने वाले भ्यस् (पञ्चमी बहुवचन) के स्थान मे हु आदेश होता है। जैसे — गिरि सिङ्गहु[3], (गिरिशृङ्गेभ्यः)।

(१०) अपभ्रंश मे अदन्त शब्द से पर मे आने वाले ङस् (षष्ठी एकवचन) के स्थान मे सु, हो और स्सु ये तीन आदेश होते है। जैसे —तसु[4] (तस्य), दुल्लहहो (दुर्लभस्य) सुअणस्सु (सुजनस्य)।

---

१ गुणहिं न संपइ कित्ति पर फल लिहिआ भुञ्जन्ति।
केसरि न लहइ बोड्डिअ वि गय लक्खेहि घेप्पन्ति॥
(गुणैः न सम्पत् कीर्तिः परं फलानि लिखितानि भुञ्जन्ति।
केसरी न लभते कपर्दिकामपि गजाः लक्षैः गृह्यन्ते॥)

२ वच्छहे गृण्हइ फलइ जणु कडु पल्लव वज्जेइ।
तो वि महद्दुमु सुअणु जिव ते उच्छङ्गि धरेइ॥
(वृक्षात् गृह्णाति फलानि जनः कटुपल्लवान् वर्जयति।
तथापि महाद्रुमः सुजन इव तान् उत्सङ्गे धरति॥)

३ दूरुड्डाणें पडिउ खलु अप्पणु जणु मारेइ।
जिह गिरिसिङ्गहु पडिअ सिल अन्नु वि चूरु करेइ॥
(दूरोड्डाणेन पतितः खलः आत्मानं जनं मारयति।
यथा गिरिशृङ्गेभ्यः पतिता शिला अन्यदपि चूर्णीकरोति॥)

४ जो गुण गोवइ अप्पणा पयडा करइ परस्सु।
तसु हउं कलिजुगि दुल्लहहो बलि किज्जउं सुअणस्सु॥

(११) अपभ्रंश मे अदन्त शब्द से पर मे आने वाले आम् के स्थान मे हं आदेश होता है। जैसे —तणहं[1] (तृणानाम्)।

(१२) इदन्त और उदन्त शब्दो से पर मे आने वाले आम् के स्थान मे, अपभ्रश मे हुं और हं दोनो आदेश होते है। जैसे —सउणिहं[2] (शकुनीनाम्) इत्यादि।

विशेष—उक्त नियम सुप् सप्तमी बहुवचन) मे भी लागू होता है। जैसे —दुहुं[3] (द्वयो)।

(१३) अपभ्रश मे इदन्त, उदन्त शब्दो से पर मे आने वाले ङसि, भ्यस् और ङि के स्थान मे क्रमश हे, हुं और हि आदेश होते है। जैसे —गिरिहे[4], तरुहे (गिरे, तरो) भ्यस् का

(य गुणान् गोपयति आत्मायान् प्रकटान् करोति परस्य ।
तस्य अह कलियुगे दुर्लभस्य बलि करोमि सुजनस्य ॥)

१ तणहं तइज्जा भङ्गि न वि तें अवड यडि वसन्ति ।
अह जणु लग्गिवि उत्तरइ अह सह सइ मज्जन्ति ॥
(तृणाना तृतीया भङ्गी नापि तानि अवटतटे वसन्ति ।
अथ जन लगित्वा उत्तरति अथ सह स्वय मज्जन्ति ॥)

२ दइवु घडावइ वणि तरुहुं सउणिहं पक्क फलाइं ।
सो वरि सुक्खु पइट्ठण वि कण्णहि खलवयणहिं ॥
(देव घटयति वने तरुण शकुनीना (कृते) पक्कफलानि ।
तद् वर सौख्य प्रविष्टानि नापि कर्णयो खलवचनानि ॥)

३ धवलु विसूरइ सामिअहो, गरुआ भरु पिक्खेवि ।
हउ कि न जुत्तउ दुहुं दिसिहि, खण्डइं दोण्णि करेवि ॥
(धवल खिद्यति स्वामिन गुरु भार प्रेक्ष्य ।
अह किं न युक्त द्वयोर्दिशो खण्डे द्वे कृत्वा ॥)

४ गिरिहे सिलायलु तरुहे फलु घेप्पइ नीसावन्नु ।
घरु मेल्लेप्पिणु माणुसहं तो वि न रुच्चइ रन्नु ॥

का हुं—तरुहु (तरुभ्य) ङि का हि जैसे :—कलिहि[2] (कलौ)।

(१४) अपभ्रंश मे अदन्त शब्द से पर मे आने वाले टा के स्थान मे ण और अनुस्वार आदेश होते है। जैसे —दइए (दयितेन) पवसन्तेण (प्रवसता)। देखो—इसी अध्याय मे नियम ४ की पाद टिप्पणी।

(१५) अपभ्रंश मे इकारान्त, उकारान्त शब्दो से पर मे आने वाले टा के स्थान मे ए ण और अनुस्वार आदेश होते है। जैसे :—अग्गिए (अग्निना) अग्गिण (अग्निना) अग्गि (अग्निना)।

(गिरे शिलातल तरोः फल गृह्यते निःसामान्यम्।
गृह मुक्त्वा मनुष्याणा तथापि न रोचते अरण्यम् ॥)

१ तरुहु वि वक्कलु फलु मुणिवि परिहणु असणु लहन्ति।
सामिहुं एत्तिउ अग्गलउ आयरु भिच्चु गृहन्ति ॥
(तरुभ्य अपि वल्कल फल मुनय अपि परिधानम् अशन लभन्ते
स्वामिभ्य , इयद् अधिकादर भृत्या गृह्णन्ति।)

२ अह विरल पहाउ जि कलिहि धम्मु।
(अथ विरलप्रभाव एव कलौ धर्म ।)
अग्गिएँ उण्हउ होइ जगु वाए सीअलु तेव।
जो पुणु अग्गि सीअला तसु उण्हत्तणु केव ॥
(अग्निना उष्ण भवति जगत् वातेन शीतल तथा।
य पुन अग्निना शीतल तस्य उष्णत्व कथम् ?)
विप्पिअ-आरउ जइ वि पिउ तो वि त आणहि अज्जु।
अग्गिण दड्ढा जइ वि घरु तो तें अग्गि कज्जु ॥
(विप्रियकारक यद्यपि प्रिय तदपि तमानय अद्य।
अग्निना दग्ध यद्यपि गृह तदपि तेन अग्निना कार्यम् ॥)

(१६) अपभ्रंश मे सु, अम्, जस् और शस् विभक्तियो का लोप हो जाता है। देखो इसी अध्याय के नियम २ की पादटिप्पणी ३ मे 'एइ ति घोडा' इत्यादि मे सु, अम्, जस् का लोप।

(१७) अपभ्रंश मे षष्ठी विभक्ति का प्राय लुक् हो जाता है। जैसे —गय[1] (गजानाम्)।

(१८) अपभ्रंश मे यदि किसी शब्द से संबोधन मे जस् विभक्ति आई हो तो उसके स्थान मे हो आदेश होता है। जैसे—तरुणहो, तरुणिहो[2] (हे तरुणा हे तरुण्य)।

विशेष —यह नियम पूर्वोक्त सोलहवे नियम का अपवाद है।

(१९) अपभ्रंश मे भिस् और सुप् के स्थान मे हि आदेश होता है। जैसे —गुणहि (गुणै), मग्गेहिं[3] तिहि (मार्गेषु त्रिषु)।

(२०) अपभ्रंश मे स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान शब्द से पर मे आनेवाले जस् और शस् (प्रत्येक) के स्थान मे उ और ओ आदेश होते है। जैसे —अङ्गुलिउ (अङ्गुल्य। जस्=उ), सव्व

---

१ सगर-सएहि जु वण्णिअइ देक्खु अम्हारा कन्तु।
अइमत्तह चत्तङ्कुसह गय कुम्भइ दारन्तु॥
(सगरशतेषु यो वर्ण्यते पश्य अस्माक कान्तम्।
अतिमत्ताना त्यक्ताङ्कुशाना गजाना कुम्भान् दारयन्तम्॥)

२ तरुणहो तरुणिहो मुणिउ मइ करहु म अप्पहों घाउ।
(हे तरुणा, हे तरुण्य (च) ज्ञात मया आत्मन घात मा कुरुत।)

३ भाईरहि जिव भारइ मग्गेहि तिहि वि पयट्टइ।
(भागीरथी यथा भारते मार्गेषु त्रिषु प्रवर्तते।)

ङ्गाउ[1] (सर्वाङ्गी । शस्=उ), विलासिणीओ[2] (विलासिनो । शस्=ओ) ।

(२१) अपभ्रश मे स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान शब्द से पर म आनेवाले टा (तृतीया एकवचन) के स्थान मे ए आदेश होता है । जैसे —ससिमण्डल चन्दिमए[3] (शशिमण्डलचन्द्रिकया) ।

(२२) अपभ्रश मे स्त्रीलिङ्ग मे वनमान शब्द से पर मे आने वाले ङस (षष्ठी एकवचन) और ङसि (पञ्चमी एकवचन) के स्थान मे हे आदेश होता है । जैसे —मज्झहे,[4] तहे,[5] धणहे[6] इत्यादि (मध्याया , तस्या , धन्याया इत्यादि), बालहे[7] (बालाया) ।

१–२, सुन्दर-सव्वङ्गाउ विलासिणीओ पेन्छन्तरण ।
(सुन्दरसर्वाङ्गी विलासिनी प्रेक्षमाणानाम् ॥)

३ निअ-मुह-करहि वि मुद्ध कर अन्धारइ पडिपेक्खइ ।
ससि-मण्डल चन्दिमए पुणु काइँ न दूरे देक्खइ ॥
(निजमुखकरै अपि मुग्धा करमन्धकारे प्रतिप्रेक्षते ।
शशिमण्डलचन्द्रिकया पुन किं न दूरे पश्यति ?)

४–७ फोडेन्ति जें हियडउ अप्पणउ ताह पराई कवण घृण ।
रक्खेज्जहु लोअहो अप्पणा बालहे जाया विसम थण ॥
(स्फोटयत यौ हृदयमात्मीय तयो परकीया का घृणा ?
रक्षत लोका आत्मान बालाया जातौ विषमौ स्तनौ ॥)
तुच्छ मज्झहे तुच्छ–जम्पिरहे ।
तुच्छच्छरोमावलिहे तुच्छरायतुच्छयरहास हे ।
पियवयणु अलहन्तिअहे तुच्छकाय-वम्मह-निवासहे ॥
अन्नुजु तुच्छउँ तहें धणहे त अक्खणह न जाइ ।
कटरि थणतरु मुद्धडहे जें मणु विच्चि ण माइ ॥
(तुच्छमध्याया तुच्छजल्पनशीलाया ।

(२३) अपभ्रंश मे स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान शब्द से पर मे आनेवाले भ्यस् (पञ्चमी बहुवचन) और आम् (षष्ठी बहुवचन) के स्थान मे हु आदेश होता है। जैसे —वयसिअहु[1] (वयस्याभ्य अथवा वयस्यानाम्)।

(२४) अपभ्रंश मे स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान शब्द से पर मे आनेवाले ङि (सप्तमी एकवचन) के स्थान मे हि आदेश होता है। जैसे —महिहि (मह्याम्)।

(२५) अपभ्रंश मे नपुसक लिङ्ग मे वर्तमान शब्द से पर मे आनेवाले जस् (प्रथमा बहुवचन) और शस् (द्वितीया बहुवचन) के स्थान मे इ आदेश होता है। जैसे —कमलइ[1] अलिउलइ (कमलानि अलिकुलानि)।

तुच्छाच्छरोमावल्या तुच्छरागाया तुच्छतरहासाया ।
प्रियवचनमलभमानाया तुच्छकायमन्मथनिवासाया ॥
अन्यद् यत्तच्छ तस्या धन्याया तदाख्यातु न याति ।
आश्चर्य स्तनान्तर मुग्धाया येन मनो वर्त्मनि न माति ॥)

1 भल्ला हुआ जु मारिआ बहिणि महारा कन्तु ।
लज्जेज्जन्तु वयसिअहु जइ भग्गा घरु एन्तु ॥
(भव्य भूत यत् मारित भगिनि अस्मदीय कान्त ।
अलज्जिष्यत वयस्याभ्य (नाम्) यदि भग्न गृह ऐष्यत् ॥)

२ वायसु उड्डावन्तिअए पिउ दिट्ठउ सहस त्ति ।
अद्धा वलया महिहि गम अद्धा फुट्ट तडत्ति ॥
(वायस उड्डापयन्त्या प्रियो दृष्ट सहसेति ।
अर्द्धानि वलयानि मह्या गतानि अर्द्धानि स्फुटितानि तटिति ॥)

1 कमलइ मेल्लवि अलिउलइ करि गण्डाइ महन्ति ।
असुलह मेच्छण जाह भलि ते ण वि दूर गणयन्ति ॥

(२६) अपभ्रंश मे नपुंसक लिङ्ग मे वर्तमान कान्त (जिसके अन्त मे अस्महित क हो) शब्द से पर मे आनवाले सु (प्रथमा-एकवचन) और अम् (द्वितीया एकवचन) के स्थान उ आदेश होता है। जैसे —इसी अध्याय के नियम २४ की पाद टिप्पणी २ मे तुच्छउ (तुच्छम्) है। और भग्गउ[1] (भग्नकम्) इत्यादि को भी देखना चाहिए।

(२७) अपभ्रंश मे अकारान्त सर्वादि से पर मे आनेवाले ङसि (पञ्चमी एकवचन) के स्थान मे हाँ आदेश होता है। जैसे —जहाँ होन्तउ आगदो, तहाँ होन्तउ आगदो (यस्मात् भवान् आगत तस्मात् भवान् आगत) एवं कहाँ (कस्मात्)।

(२८) अपभ्रंश मे अकारान्त किम् (क) से पर मे आनेवाले ङसि के स्थान मे इहे आदेश और क के अकार का लोप विकल्प से होता है। जैसे —किहे[2] (कस्मात्), कहाँ (कस्मात्)।

(२९) अपभ्रंश मे अकारान्त सर्वादि शब्दो से पर मे आने वाले सप्तमी के एकवचन ङि के स्थान मे हि आदेश होता है।

(कमलानि मुक्त्वा अलिकुलानि करिगण्डान् काक्षन्ति।
असुलभम् एष्टु येषा निर्बन्ध ते नापि दूर गणयन्ति॥)

१ भग्गउ देक्खिवि निअय बलु, बलु पसरिअउ परस्सु।
उम्मिल्लइ ससिरेह जिव करि करवालु पियस्सु॥
(भग्नक दृष्ट्वा निजक बल बल प्रसृतक परस्य।
उन्मीलति शशिलेखा यथा करे करवाल प्रियस्य॥)

२ जइ तह तुट्टउ नेहडा मइ सहुँ न वि तिल तार।
त किहें वङ्केहिं लोअणेंहिं जोइज्जउँ सय वार॥
(यदि तस्या त्रुट्यतु स्नेह मया सह नापि तिलतार।
तत् कस्मात् वक्राभ्या लोचनाभ्या दृश्ये (अह) शतवारम्॥)

जैसे—जहि, तहि, एकहि (यस्मिन्, तस्मिन्, एकस्मिन्)

(३०) अपभ्रंश मे अकारान्त यद्, तद् और किम् (य, त क) से पर मे आनेवाले षष्ठी के एकवचन ङस् के स्थान मे आसु आदेश विकल्प से होता है। और शब्द के टि (अ) का लोप भी होता है। जैसे—जासु, तासु, कासु[2] (यस्य, तस्य, कस्य)।

(३१) अपभ्रंश मे स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान यद्, तद्, किम् (या, ता, का) से पर मे आनेवाले षष्ठी के एकवचन ङस् के स्थान मे विकल्प से अहे आदेश और टि (आ) का लोप भी होता है। जैसे—जहे केरउ, तहे केरउ, कहे केरउ (यस्या कृते, तस्या कृते कस्या कृते)।

(३२) अपभ्रंश मे सु और अम् (प्रथमा-द्वितीया के एक-वचन) के पर मे रहने पर यद् और तद् शब्दो के स्थान मे

---

१ जहिं कप्पिज्जइ सरिण सरु छिज्जइ खग्गिण खग्गु।
तहिं तेहइ भड घड निवहि कन्तु पयासइ मग्गु॥
(यस्मिन् कल्प्यते शरेण शर छिद्यते खड्गेन खड्ग ।
तस्मिन् तादृशे भट घटा निवहे कान्त प्रकाशयति मार्गम्॥)

२ कन्तु महारउ हलि सहिए निच्छइँ रूसइ जासु।
अत्थिहिं, सत्थिहि हत्थिहि वि ठाउ फेडइ तासु॥
(कान्त अस्मदीय हला सखिके निश्चयेन रुष्यति यस्य।
अस्त्रै शस्त्र हस्तैरपि स्थानमपि स्फोटयति तस्य॥)
जीविउ कासु न वल्लहउँ धणु पुणु कासु न इट्ठु।
दोण्णि वि अवसर निवडिअइ, तिण सम गणइ विसिट्ठु॥
जीवित कस्यै न वल्लभक धन पुन कस्य नेष्टम्।
द्वे अपि अवसर–निपतित तृणसमे गणयति विशिष्ट॥

क्रमश ध्रु और त्र आदेश विकल्प मे होते है। जैसे —प्रङ्गणि चिट्ठदि नाहु ध्रु त्र रणि करदि न भ्रन्ति (प्राङ्गणे तिष्ठति नाथ यत् यद् रणे करोति न भ्रान्तिम्), पक्ष मे न बोल्लिअइ जु निव्वहइ (तत् जल्प्यते यन्निर्वहति)।

(३३) अपभ्रश मे नपुसक लिङ्ग मे वर्तमान इदम् शब्द क स्थान मे सु और अम् के पर मे रहने पर इमु आदेश होता है। जैसे —इमु कुलु तुह तणउँ, इमु कुलु देक्खु (इद कुल इत्यादि)।

(३४) अपभ्रश मे प्रथमा और द्वितीया के एकवचनो मे एतत् शब्द के स्त्रीलिङ्ग मे एह, पुँल्लिङ्ग मे एहो और नपुसक मे एहु रूप होते है। जैसे —एह कुमारी एहो नरु एहु मणोरह ठाणु (एषा कुमारी, एष नर एतन्मनोरथस्थानम्।)

(३५) अपभ्रश जस्-शस के आने पर एतद् शब्द के स्थान मे एइ आदेश होता है। देखो—इसी अध्याय के नियम २ तथा ३ की पादटिप्पणी एइ पेच्छ (एतान् प्रेक्षस्व)।

(३६) अपभ्रश मे जस् शस् के आने पर अदस् शब्द के स्थान मे ओइ आदेश होता है। जैसे —ओइ[1]।

(३७) अपभ्रश मे इदम् शब्द के स्थान मे आय आदेश स्वादि विभक्तियो के पर मे रहने पर होता है। जैसे —आयइ (इमानि), आयेण (एतेन), आयहो (अस्य) इत्यादि।

(३८) अपभ्रश मे सर्व शब्द के स्थान मे साह आदेश विकल्प से होता है। जैसे —साहु वि लोउ, सव्वु वि लोउ (सर्वोऽपि लोक)।

---

१ जइ पुच्छह घर वड्डाइ तो वड्डा घर ओइ।
विहलिअ जण-अब्भुद्धरणु कन्तु कुडीरइ जोइ॥
(यदि पृच्छथ गृहाणि महान्ति तद् महान्ति गृहाणि अमूनि।
विह्वलितजनाभ्युद्धरण कान्त कुटीरके पश्य॥)

(३६ अपभ्रंश में किम् शब्द के स्थान में काइं और कवण आदेश विकल्प से होते हैं। जैसे —इसी अध्याय के नियम २१ की पादटिप्पणी एक में देखो— काइं न दूरे देक्खइ' (किं न दूरे पश्यति ?) और नियम २२ की पादटिप्पणी दो में 'ताहँ पराई कवण घृण' (तयो परकीया का घृणा ?), 'कि गज्जहि खल मेह' (कि गर्जसि खल मेघ)।

(४०) अपभ्रंश में युष्मद्, अस्मद् विषयक नियमों को न लिख कर यहाँ हम उनके रूप ही लिख रहे हैं। ये रूप हेमचन्द्र के अनुसार हैं। नियमों के लिए उन्हीं के ४ ३६८ से ४ ३८१ तक सूत्रों को देखना चाहिए।

अपभ्रंश में युष्मद् शब्द के रूप —

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	तुहु	तुम्हे तुम्हइ
द्वितीया	पइ, तइ	तुम्हे तुम्हइ
तृतीया	पइ, तइ	तुम्हेहि
पञ्चमी	तउ, तुज्झ, तुध्र (तुहु)	तुम्हह
षष्ठी	,, ,, ,, ,,	तुम्हह
सप्तमी	पइ, तइ	तुम्हासु

अपभ्रंश में अस्मद् शब्द के रूप —

प्रथमा	हउं	अम्हे, अम्हइ
द्वितीया	मइ	अम्हे, अम्हइ
तृतीया	मइ	अम्हेहि
पञ्चमी	महु, मज्झु	अम्हह
षष्ठी	महु, मज्झु	अम्हह
सप्तमी	मइ	अम्हासु

(४१) अपभ्रंश में धातु से वर्तमान काल के प्रथम पुरुष के बहुवचन में तिङ् का आदेश 'हिं' विकल्प से होता है। जैसे —धरहिं, करहिं, सहहिं (धरत , कुरुत शोभन्ते)

(४२) अपभ्रंश में धातु से, वर्तमान काल के मध्यम पुरुष के एकवचन में, तिङ् के स्थान में 'हि' आदेश विकल्प से होता है। जैसे —रुअहि (रोदिषि), लहहि[२] (लभसे , पक्ष में रुअसि इत्यादि।

(४३) अपभ्रंश में धातु से, वर्तमान काल के मध्यम पुरुष के बहुवचन में, आनेवाले तिङ् के स्थान में हु आदेश विकल्प से होता है। जैसे —इच्छहु[३] (इच्छथ), पक्ष में—इच्छह।

---

१ मह कवरि बन्ध तह सोह धरहिं।
न मल्ल जुज्झु ससिराहु करहिं॥
(मुखकबरीबन्धौ तस्या शोभा धरत ।
ननु मल्लयुद्ध शशिराहू कुरुत ॥)
तह सहहिं कुरल भमर उल तुलिअ।
न तिमिर डिम्भ खेल्लन्ति मिलिअ॥
(तस्या शोभन्ते कुरला भ्रमरकुलतुल्तिा ।
ननु भ्रमरडिम्भा क्रीडन्ति मिलिता ॥)

२ बप्पीहा पिउ पिउ भणवि कित्तिउ रुअहि हयास।
तुह जलि महु पुणु वल्लहइ बिहुँ वि न पूरिअ आस।
चातक (पपीहा) पिबामि पिबामि (प्रिय पिय)
भणि वा कियत् रोदिषि हताश
तव जले मम पुनर्वल्लभे द्वयोरपि न पूरिता आशा॥)

३ बलि-अब्भत्थणि महु महणु लहुईहूआ सोइ।
जइ इच्छहु वड्डत्तणउ देहु म मग्गहु कोइ॥

(४४) अपभ्रश मे धातु से पर मे आनेवाले वर्तमानकालिक उत्तम पुरुष के एकवचन तिङ् के स्थान मे उ आदेश विकल्प से होता है। जैसे —कड्ढउ (कर्षामि), पक्ष मे कड्ढामि (कर्षामि)

(४५) अपभ्रश मे धातु से पर मे आनेवाले वर्तमान-कालिक उत्तम पुरुष के बहुवचन तिङ के स्थान मे हु आदेश विकल्प से होता है। जैसे —लहहु[3], लभामहे), जाहु (याम), वलाहु (वलामहे)।

(४६) अपभ्रश मे हि और स्व के स्थान मे इ, उ और ए ये तीनो आदेश विकल्प से होते है। इ जैसे —सुमरि[1], मेल्लि (स्मर, मुञ्च), विलम्बु[2] (विलम्बस्व), करे[3] (कुरु) पक्ष मे— सुमरहि इत्यादि।

(बले अभ्यर्थने मधुमथनो लघुकीभूत , सोऽपि ।
यदि इच्छथ महत्त्व दत्त मा मार्गयत कमपि ॥)

२ विहि विणडउ पीडन्तु गह म धणि करहि विसाउ ।
सपइ कड्ढउँ वेस जिव छुडु अग्घइ ववसाउ ॥
(विधिर्विनाटयतु ग्रहा पीडयन्तु मा धन्ये कुरु विषादम् ।
सपद कर्षामि वेषमिव यदि अर्घति व्यवसाय ॥)

३ खग्ग विसाहिउ जहिँ लहहु पिय तहिँ देसहिँ जाहुँ ।
रण दुब्भिक्खें भग्गाइ विणु जुज्झें न वलाहुँ ॥
(खड्ग-विसाधित यत्र लभामहे तत्र देशे याम ।
रणदुर्भिक्षेण भग्ना विना युद्धेन न वलामहे ॥)

१ २ ३ कुञ्जर सुमरि म सल्लइउ सरला सास म मेल्लि ।
कवल जि पाविय विहि वसिण ते चरि माणु म मेल्लि ॥
भमरा एत्थु वि लिम्बडइ के वि दियहडा विलम्बु ।
घण पत्तलु छाया बहुलु फुल्लइ जाम कयम्बु ॥

(४७) अपभ्रंश मे भविष्यत्कालिक तिङ् संबन्धी 'स्य' के स्थान मे स आदेश विकल्प से होता है। जैसे —होसइ , पक्ष मे—होहिइ (भविष्यति) ।

(४८) संस्कृत के 'क्रिये' इस क्रियापद के स्थान मे अपभ्रंश मे कीसु यह आदेश विकल्प से होता है। जैसे —'तसु कन्तहो बलि कीसु (तस्य कान्तस्य बलि क्रिये) ।

संस्कृत धातुओ के अपभ्रंश मे आदेश —

धातु	आदेश	उदाहरण
भू (पर्याप्ति मे)	हुच्च	अहरि पहुच्चइ[2] नाहु (अधरे प्रभवति नाथ)
ब्रू	ब्रुव	ब्रुवह[3] सुहासिउ किंपि (ब्रूत सुभाषित किञ्चित्)
,,	ब्रोप्प	ब्रोप्पिणु[4] (उक्त्वा)

प्रिय एम्वहि करे सेल्ल करि छड्डहि तुहुँ करवालु ।
ज कावालिय बप्पुडा लेहिँ अभग्गु कवालु ॥
(कुञ्जर स्मर मा सल्लकी सरलान श्वासान् मा मुञ्च ।
कवला ये प्राप्ता विधिवशन तांश्चर मान मा मुञ्च ॥
भ्रमर अत्रापि निम्बके कति दिवसान विलम्बस्व ।
घनपत्रवान् छायाबहुल फुल्लति यावत्कदम्ब ॥
प्रिय एवमेव कुरु भल्ल करे त्यज त्व करवालम् ।
येन कापालिका वराका लान्ति अभग्न कपालम् ॥)

१ दिअहा जन्ति झडप्पडहिँ पडहिँ मनोरह पच्छि ।
ज अच्छइ त माणिअइ होसइ करतु म अच्छि ॥
(दिवसा यान्ति वेगै पतन्ति मनोरथा पश्चात् ।
यदस्ति तन्मान्यते भविष्यति कुर्वन् मा आस्स्व ॥)

२ हेम० ४ ३९० ३ हेम० ४ ३९१ ४ हेम० ४ ३९१

ज्ञ	वुज्झ	वुज्झइ, वुज्झेप्पि, वुज्झेप्पिणु[1]
दृश	प्रस्स	प्रस्सदि[2]
ग्रह्	गृण्ह	पढ, गृण्हेप्पिणु,[3] व्रतु (पठ गृहीत्वा व्रतम्)
तक्ष	छोल्ल	जसि छोल्लिज्जन्तु[4] (शशी अतक्ष्ष्यिन)
तापि	झलक्क	सासानलजाल झलक्किअउ[5] (श्वासानलज्वालासन्तापितम् ।)
शल्याय	खुडुक्क	हिअइ खुडुक्कइ[6] (हृदये शल्यायते)
गर्ज	घुडुक्क	घुडुक्कइ[7] मेहु (गर्जति मेघ)

(४६) अपभ्रंश मे पद के आदि मे अवर्तमान किन्तु स्वर से पर मे आनेवाले और असंयुक्त क, ख, त, थ, प, फ, वर्णों के स्थान मे प्राय ग, घ, द, ध, ब और भ क्रम से ही होते है। जैसे —पिअमाणुसविच्छोह गरु (प्रियमनुष्यविक्षोभकरम्), सुघें चिन्तिज्जइ माणु (सुख चिन्त्यते मान), कधिदु (कथितम्), सबधु (शपथम्), सभलउ (सफलम्) ।

(५०) अपभ्रंश मे पद के आदि मे अवर्तमान असंयुक्त मकार के स्थान मे अनुनासिक वकार विकल्प से होता है। जैसे —कवॅलु, भवॅरु (कमलम्, भ्रमर), जिवॅ, तिवॅ (जिम, तिम) ।

(५१) अपभ्रंश मे संयोग के बाद मे आनेवाले रेफ का लुक् विकल्प से होता है। जैसे —जइ केवॅइ पावीसु पिउ (यदि

---

१ हेम० ४ ३९२ २ हेम० ४ ३९३

३ हेम० ४ ३९४ ४ हेम० ४ ३९५

५ तुलना कीजिए—भोजपुरी के 'झरकना' से । हेम० ४ ३९५

६ कॉटे जैसा आचरण करना' इस अर्थ में । हेम० ४ ३९५

७ तुलना कीजिए—हिन्दी के 'घुडकना' से । हेम० ४ ३९५

कथञ्चित प्राप्स्यामि प्रियम्), पक्ष मे—जइ भग्गा पारक्डा तो सहि मज्झु प्रियेण (यदि भग्ना परकीयास्तत्सखि मम प्रियेण ।)

(५२) अपभ्रश मे कहीं कही सर्वथा अविद्यमान रेफ भी होता देखा जाता है। जैसे —व्रासु महारिसि एउ भणइ (व्यास महर्षि एतद् भणति , 'कहीं कहीं' ऐसा कहने से 'वासेण वि भारहखम्भि बद्ध (व्यासेनापि भारतस्तम्भे बद्धम् ।) मे नियम लागू नही हुआ।

(५३) अपभ्रश मे आपद्, विपद्, और सपद् के अन्त्य द् के स्थान मे कहीं कही इ हो जाता है। जैसे —अणउ करन्तहो पुरिसहो आवइ आवइ (अनय कुर्वत पुरुषस्य आपद् आयाति), विवइ विपद्), सपइ (सपद्), 'कहीं कहीं' कहने से 'गुणहिं न सपय कित्ति पर' (उपर्युक्त नियम ७ की पादटिप्पणी ४) मे सपइ न होकर सपय हुआ।

(५४) अपभ्रश मे कथ, यथा और तथा के थादि अवयवो के स्थान मे हर एक के एम, इम, इह और इध ये चार आदेश होते है और पूर्व के टि का लोप होता है। जैसे —'केम[1] (केवँ[2]) समप्पउ दुट्ठु दिणु किध रयणी छुडु होय' (कथ समाप्यता दुष्ट दिन कथ रात्रि शीघ्र भवति ?) एव किह, जेम (वँ), जिम (वँ), जिह, जिध, तेम (वँ), तिम (वँ), तिह तिध होते है।

(५५) अपभ्रश मे यादृश्, तादृश्, कीदृश् और ईदृश शब्द क्रमश जेहु, तेहु, केहु और एहु रूप प्राप्त करते है। जैसे —जेहु, तेहु, केहु, एहु[3] (यादृक्, तादृक्, कीदृक्, ईदृक्)

---

१ तुलना कीजिए—गुजराती के केम, जेम और तेम से।

२ तुलना कीजिए—हिन्दी के क्यों, ज्यौ और त्यौ से।

३ मइ भणिअउ बलिराय तुहु केहउ मग्गण एहु।

(५६) अकारान्त यादृश, तादृश, कीदृश और ईदृश के स्थान मे जइस, तइस, कइस और अइस रूप होते है। जैसे — जइसो, तइसो, कइसो ओर अइसो (यादृश , तादृश इत्यादि)

(५७) अपभ्रश मे यत्र के रूप जेत्थु और जत्तु तथा तत्र के रूप मे तेत्थु और तत्तु होते है। जैसे —जेत्थु, जत्तु (यत्र), तेत्थु, तत्तु[1] (तत्र)।

(५८) अपभ्रश मे यावत् के रूप जाम (जावँ), जाउ, जामहि और तावत् के रूप ताम (तावँ), ताउ, तामहि[2] (तावत्)।

जेहु तेहु न वि होइ वढ सइ नारायण एहु ॥
(मया भणित बलिराज त्व कीदृग् मार्गण एष ।
यादृक्, तादृक् नापि भवति मूर्ख स्वय नारायण इदृक् ॥)

1 जइ सो घडदि प्रयावदी केत्थु वि लेप्पिणु सिक्खु ।
जेत्थु वि तेत्थु वि एत्थु जगि भण तो तहि सारिक्खु ॥
(यदि स घटयति प्रजापति कुत्रापि लात्वा शिक्षाम् ।
यत्रापि तत्रापि अत्र जगति भण तदा तस्या सदृक्षीम् ॥)

२ जाम न निवडइ कुम्भ-यडि सीह चवेड चडक्क ।
ताम समत्तहँ मयगलह पइ पइ वज्जइ ढक्क ॥
(यावन्न निपतति कुम्भ तटे सिंहचपेटाचटात्कार ।
तावत्समस्ताना मदकलानां पदे पदे वाद्यते ढक्का ॥)
तिलह तिलत्तणु ताउँ पर जाउँ न नेह गलन्ति ।
जामहिँ विसमा कज्ज-गइ जीवहँ मज्झे एइ ॥
(तिलाना तिलत्व तावत् पर यावत् न स्नेहा गलन्ति ।
यावत् विषमा कार्यगति जीवाना मध्ये आयाति ॥)
तामहि अच्छउ इयर जणु सुअणु वि अन्तरु देइ ।
(तावत् आस्तामितर जन सुजनोऽप्यन्तर ददाति ॥)

(५९) अपभ्रंश मे कुत्र के स्थान मे केत्थु और अत्र के स्थान मे एत्थु रूप होते है। जैसे —केत्थु (कुत्र), एत्थु[1] (अत्र)

(६०) अपभ्रंश मे (परिमाणार्थक) यावद् और तावद् के स्थान मे जेवड और तेवड रूप विकल्प से होते है। इसी प्रकार (परिमाणार्थक) इयत् और कियत् के स्थान मे एवड और केवड रूप विकल्प से होते है। जैसे —जेवडु अन्तरु रावण रामहँ तेवडु अन्तरु पट्टण-गामहँ (यावदन्तर रावणरामयो तावदन्तर पत्तन (पट्टण) ग्रामयो) एव एवडु अन्तरु (इयत् अन्तरम्), केवडु अन्तरु (कियत् अन्तरम्)।

(६१) अपभ्रंश मे परस्पर के स्थान मे 'अवरोप्पर' रूप होता है। जैसे —**अवरोप्परु** जोअन्ताह सामिउ गञ्जिउ जाह (परस्पर युद्ध्यमानाना स्वामी पीडित येषाम्)।

(६२) अपभ्रंश मे कादि (क+आदि) व्यञ्जनो मे स्थित ए ओर ओ एव पदान्त मे वर्तमान उ, हु, हिं ओर ह का लघु उच्चारण किया जाता है। जैसे —अन्नु जु तुच्छउँ तहे धणहे, बलि किज्जउँ सुअणस्सु, दइउ घडावइ वणि तरुहु, तरुहु वि वक्कलु, खग्ग विसाहिउ जहि लहहु, तणहँ तइज्जी भङ्गि न वि।

(६३) प्राकृत के नियमानुसार जहाँ म्ह हुआ हो उसका (म्ह का) अपभ्रंश मे म्भ होता है। **जैसेः—संस्कृत में** ग्रीष्म, **प्राकृत मे** गिम्हो और **अपभ्रंश मे** गिम्भो रूप होते हैं।

(६४) अपभ्रंश मे अन्यादृश शब्द के स्थान मे अन्नाइस और अवराइस ये आदेश होते है। जैसे —अन्नाइसो, अवराइसो (अन्यादृश)।

---

1 इन उदाहरणों के लिए इसी अध्याय के नियम ५७ की पाद टिप्पणी २ देखो।

नीचे कुछ अन्य संस्कृत शब्दों के अपभ्रंश रूप मात्र ही दिये जा रहे है। विशेष जानकारी के लिए हेमचन्द्र के व्याकरण का अवलोकन करना चाहिए।

संस्कृत	अपभ्रंश	हेम० सूत्र संख्या
प्राय	प्राउ, प्राइव, प्राइम्व पग्गिम्व	४ ४१४
अन्यथ	अनु अन्नह	४ ४१५
कुत	कउ कहन्तिहु	४ ४१६
तत , तदा	तो	४ ४१७
एव	एम्व	४ ४१८
परम्	पर	,, ,
समम्	समाणु	,, ,
ध्रुवम्	ध्रुव	, ,,
मा	म	,
मन,क्	मणाउ	, ,
किल	किर	४ ४१९
अथवा	अहवइ	,, ,
दिवा	दिवे	,, ,,
सह	सहु	, ,,
नहि	नाहि	,, ,,
पश्चात्	पच्छइ	४ ४२०
एवमेव	एम्वइ	, ,
एव	जि	,,
इदानीम्	एम्वहि, एम्वहि	,
प्रत्युत	पच्चलिउ	,, ,,
इत	एत्तहे	, ,,
विषण्ण	वुन्नउ	४ ४२१
उक्तम्	वुत्तउ	,, ,

वर्त्मनि	विच्चि	४ ४२१, ३५०
शीघ्रम्	वहिल्लउ	४ ४२२
कलहकारी	घङ्घल	" "
अस्पृश्यससर्ग	विट्टाल	" "
भय	द्रवक्क	" "
आत्मीयम्	अप्पण	" "
दृष्टि	द्रेहि	" "
गाढ	निच्चट्ठ	" "
साधारण	सड्ढल	" "
कौतुक	कोड्ड	" "
क्रीडा	खेड्ड	"
रम्य	रवण्ण	" "
अद्भुत	ढक्करि	" "
हे सखि	हेल्लि	"
पृथक् पृथक्	जुअ जुअ	"
मूढ	नालिउ, वढ	"
नव	नवख	" "
अवस्कन्द	दडवड	"
यदि	छुडु	" "
सबन्धी	केर, तण	" "
मा भैषी	मब्भीसा	" "
यद् यद् दृष्टम्	जाइट्ठिआ	" "
	हुहुरु[1]	४ ४२३
	घुग्घ[2]	" "

---

१ शब्दानुकरण अर्थ में। २ चेष्टानुकरण अर्थ में।

	घइ[1]	४ ४२४
	खाइ[2]	,, ,
	केहि[3]	४ ४२५
	तेहि[4]	,, ,,
	रेसि[5]	,, ,,
	रेसि[6]	,, ,,
	तरणेण[7]	,, ,,
पुन	पुणु	४ ४२६
विना	विणु	,, ,,
अवश्यम्	अवसे अवस	४ ४२७
एकश	एक्कसि	४ ४२८

(६५) अपभ्रश मे नाम (प्रातिपदिक) के आगे स्वार्थ मे अ, अड, और उल्ल प्रत्यय होते हैं। और स्वार्थिक क प्रत्यय का लुक् भी होता है। जैसे —बे दोसडा (द्वौ दोषौ) कुडुल्ली (कुटी)।

विशेष:—जहाँ अड और उल्ल प्रत्यय होते है, वहाँ पूर्व के टि का लोप भी हो जाता है।

(६६) पूर्वोक्त नियमानुसार जो प्रत्यय किये जाते है तदन्त नाम से स्त्रीत्व अर्थ के द्योतन मे ई प्रत्यय हो जाता है और टि का लोप भी हाता है। जैसे —गोरड+ई=गोरडी।

(६७) अपभ्रश मे स्त्रीलिङ्ग के द्योतन करने वाले अ प्रत्ययान्त से पर मे आने वाले प्रत्यय से पुन आ प्रत्यय होता है। जैसे —धूलि=धूल=धूलड=धूलडिआ (धूलि)।

विशेष:—स्त्रीलिङ्ग मे वर्तमान नहीं रहने पर यह नियम लागू नहीं होता। जैसे —कन्नडइ (कर्णे)।

---

१ २ अनर्थक निपात। ३ ४ ५ ६ ७ तादर्थ्य निपात।

(६८) अपभ्रंश मे युष्मदादि शब्दो से पर मे आने वाले ईय प्रत्यय का आर आदेश होता है। और उसके पूर्व के टि का लोप भी होता है। जैसे —तुहारेण (युष्मदीयेन), अम्हारा (अस्मदीयम्), महारा (अस्मदीय)।

(६९) अपभ्रंश मे इदम् , किम् , यद्, तद् और एतद् शब्दो से पर मे आने वाले अतु प्रत्यय के स्थान मे एत्तुल आदेश होता है और पूर्व के टि का लोप होता है। जैसे —एत्तुलो, केत्तुलो, जेत्तुलो, तेत्तुलो।

(७०) अपभ्रंश मे सप्तम्यन्त सर्वादि से पर मे आने वाले त्र प्रत्यय के स्थान मे एत्तहे आदेश होता है। पूर्व के टि का लोप होता है। जैसे —एत्तहे, तेत्तहे (अत्र, तत्र)।

(७१) अपभ्रंश मे त्व और तल प्रत्ययो के स्थान में प्राय प्पण आदेश होता है। जैसे —वड्डुप्पणु (महत्त्वम्), पक्ष मे—वड्डुत्तणहो (महत्त्वस्य)।

(७२) अपभ्रंश मे तव्य प्रत्यय के स्थान मे इएव्वउ, एव्वउ और एवा ये तीन आदेश होते है। जैसे —करिएव्वउ, मरिएव्वउ (कर्तव्यम् , मर्तव्यम्), सहेव्वउ (सोढव्यम्), सोएवा, जग्गेवा (स्वपितव्यम् , जागरितव्यम्)।

(७३) अपभ्रंश मे क्त्वा प्रत्यय के स्थान मे इ, इउ, इवि, अवि, एप्पि, एप्पिणु, एवि और एविणु आदेश होते हैं। **इ जैसे :**—मारि (मारयित्वा), **इउ जैसे :**—भञ्जिउ (भङ्क्त्वा), **इवि जैसे :** – चुम्बिवि (चुम्बित्वा), **अवि जैसे :**—विछोडवि (विच्छोट्य), **एप्पि जैसे :**—जेप्पि (जित्वा), **एप्पिणु जैसे :**—चएप्पिणु (त्यक्त्वा), **एवि जैसे :**—पालेवि (पालयित्वा), **एविणु जैसे :**—लेविणु (लात्वा)।

(७४) अपभ्रंश मे 'तुम्' प्रत्यय के स्थान मे एव, अण, अणह, अणहि, एप्पि, एप्पिणु, एवि और एविणु ये आठ आदेश होते है। **एव जैसे :**—देव (दातुम्), **अण जैसे :**—करण (कर्तुम्), **अणह और अणहिं जैसे :**—भुञ्जणह, भुञ्जणहि (भोक्तुम्), **एप्पि, एप्पिणु, एवि और एविणु जैसे :**—जेप्पि, चएप्पिणु, पालेवि और लेविणु (जेतु, त्यक्तु, पालयितु और लातुम्)।

विशेष :—गम धातु से एप्पिणु आने पर गम्पिणु और गमेप्पिणु रूप होते है। इसी तरह एप्पि के रहने पर गम्पि और गमेप्पि रूप होते है।

(७५) अपभ्रंश मे तृन् प्रत्यय के स्थान मे अणअ आदेश होता है। जैसे —मारणउ (ओ), बोल्लणउ (मारयिता, कथयिता)।

(७६) अपभ्रंश मे इव (उत्प्रेक्षा मे) के अर्थ मे न, नउ, नाइ, नाइव, जणि, जणु ये छ रूप होते है।

न जैसे :—न मल्ल जुज्झु ससिराहु करहि (ननु मल्लयुद्ध शशिराहू कुरुत) **नउ जैसे :**—नउ जीवग्गलु दिण्णु। (ननु जीवार्गलो दत्त) **नाइ जैसे :**—थाह गवेसइ नाइ। (स्तोघ गवेषयतीव) **नावइ जैसे :**—नावइ गुरु-मच्छर भरिउ। (ननु गुरु-मत्सर-भरितम्) **जणि जैसे :**—सोहइ इन्दनीलु जणि कणइ बइट्ठउ (शोभते इन्द्रनील ननु कनके उपवेशित) **जणु जैसे :**—निरुवम रसु पिए पिएवि जणु। (निरुपमरस प्रियेण पीत्वेव)।

(७७) अपभ्रश मे लिङ्ग प्राय बदलते रहते हैं। जैसे — गय कुम्भइ (गजकुम्भानि। कुम्भ शब्द पुल्लिङ्ग है, किन्तु नपुसक के रूप मे व्यवहृत हुआ है)।

(७८) अपभ्रश के शेष कार्य सौरसेनी के अनुसार किये जाते है।

इति शुभम्।





परिशिष्ट

अक्षरानुक्रम शब्दसूची

आ

उ

छ

भ

सहायक ग्रन्थ-सूची

(१) सिद्धहेमशब्दानुशासन, अष्टम अध्याय (हेमचन्द्रकृत)

(२) प्राकृतसर्वस्व

(३) प्राकृत प्रकाश

(४) प्राकृतमञ्जरी

(५) कुमारपालचरित (प्राकृतद्व्याश्रय काव्य)

(६) रावणवहो (सेतुबन्ध काव्य)

(७) प्राकृत व्याकरण (हृषीकेश भट्टाचार्य विरचित) संस्कृत एवं अंग्रेजी

(८) अभिज्ञानशाकुन्तल (कालिदास विरचित)

(९) विक्रमोर्वशीय (कालिदास विरचित)

(१०) मुद्राराक्षस (विशाखदत्त विरचित)

(११) पाणिनीयाष्टक (अष्टाध्यायीसूत्रपाठ)

(१२) गउडवहो

सस्कृत साहित्य का इतिहास

(बृहन् सस्करण)

श्री वाचस्पति गैरोला

इस ग्रन्थ को लिखते समय यह ध्यान रखा गया है कि पाठक परम्परा और पूर्वाग्रह क मोह मे न पडकर प्रत्यक विवादग्रस्त प्रश्न का समाधान स्वय कर सके। पाठक पर अपने विचार लादने का अपेक्षा उपयुक्त यह समझा गया है कि विभिन्न मतवादों की समीक्षा करके वह स्वय ही विषय क सही ध्येय को ग्रहण कर सक। भारतीयता या विदेशीपन का पक्षपात त्याग कर किसी भी विद्वान् के स्वस्थ और सही विचारों को उधार लेने म सङ्कोच नही किया गया हे। पुस्तक का विषय सामग्री और उसकी रूप रेखा का गठन भी ऐसे ढङ्ग से किया गया है, जिससे सस्कृत भाषा की आधारभूत भावभूमि का परिचय प्राप्त होने के साथ साथ सम सामयिक परिस्थितियों का भी अध्ययन हो सके। आर्यों के आदि देश एव आर्य भाषाओं के उद्भव स लेकर उन्नीसवीं सदी तक की सहस्राब्दियों में सस्कृत साहित्य की जिन विभिन्न विचार वीथियों का निर्माण हुआ और भारत के प्राचीन राजवशों के प्रश्रय से सस्कृत भाषा को जो गति मिली, उसका भी समावेश पुस्तक में देखने को मिलेगा।

मूल्य २०–००

प्राप्तिस्थानम्—चौखम्बा विद्याभवन, चौक, वाराणसी-१

संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

(परीक्षोपयोगी सस्करण)

श्री वाचस्पति गैरोला

सस्कृत साहित्य के इतिहास का यह सक्षिप्त सस्करण इस उद्देश्य से लिखा गया है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों की उच्च कक्षाओं के पाठ्यक्रम में निर्धारित इतिहासविषयक ज्ञान के सवर्धनार्थ विद्यार्थीवर्ग को इससे लाभ हो सके। पाठ्यक्रम की दृष्टि से सस्कृत साहित्य के इतिहास पर राष्ट्रभाषा हिन्दी में जो अनेक अन्य पुस्तकें लिखी गई हैं वे या तो सर्वांगीण नहीं हैं अथवा उनमें छात्रों के उपयोगी इतिहास के वैज्ञानिक अध्ययन की क्रमबद्ध रूपरेखा का अभाव है।

यह इतिहास पाठ्यक्रम की दृष्टि से तो लिखा ही गया है, किन्तु सस्कृत के बृहद् वाङ्मय का आमूल ऐतिहासिक अध्ययन प्रस्तुत करने का भी इसमें उद्योग किया गया है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि सस्कृत के छात्रों को वैज्ञानिक दृष्टि से सस्कृत साहित्य के इतिहास का अध्ययन कराया जाय, जिससे कि उनकी मेधाशक्ति का स्वतन्त्र रूप से विकास हो सके और प्रस्तुत विषय पर उनके भाव विचारों को नई दिशा में अग्रसर होने का अवकाश मिल सके।

मूल्य ८—००

प्राप्तिस्थानम्—चौखम्बा विद्याभवन, चौक, वाराणसी-१